“MAA” OMWATI COLLEGE OF EDUCATION HASSANPUR (PALWAL)

AFFILIATED CRS UNIVERSITY, JIND

B.ED – 1ST YEAR (2021-22)

NOTES PAPER- IV & V

PEDAGOGY OF COMMERCE

MAA OMWATI EDUCATION TRUST

DELHI

E-mail: moce.principal@maaomwati.com

Unit - I

वाणिज्य का आधार

[Foundation and Context of Commerce]

Scanned with CamScanner

प्रश्न-1. वाणिज्य से आप क्या समझते हो? इसकी प्रकृति व क्षेत्र की व्याख्या कीजिए।
(What do you understand by Business Studies? Describe its nature and scope.)

उत्तर - वाणिज्य क्रिया का वह अंग है जिसमें वस्तुओं का वितरण होता है। यह उपभोक्ताओं एवं उत्पादकों के बीच सम्पर्क स्थापित करता है। वाणिज्य व्यापार द्वारा, परिवहन, बीमा बैकिंग द्वारा, विज्ञापनों द्वारा विभिन्न बाधाओं को दूर कर वस्तुओं के विनिमय को सुविधाजनक बनाता है।

वाणिज्य का अर्थ (Meaning of Commerce)

वाणिज्य अथवा अंग्रेजी के 'बिजनेस' शब्द का जन्म 'व्यस्त' एवं 'बिजी' शब्द से हुआ है। कुछ लोग वाणिज्य का अर्थ केवल आर्थिक ढांचे से लगाते हैं। उनके अनुसार वाणिज्य मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करने का उत्तरदायित्व निभाने वाली एक पद्धति है। उनके अनुसार वे सभी व्यक्ति जो प्राथमिक आवश्यकताओं की संतुष्टि करने में मदद करते हैं जैसे डॉक्टर, वकील, नर्स, अध्यापक आदि सभी वाणिज्य में सम्मिलित है लेकिन वाणिज्य शिक्षा सभी प्रकार के व्यवसायों के लिए लोगों को तैयार नहीं करती। उदाहरण के लिए डॉक्टर के कार्य को वाणिज्य शिक्षा में शामिल नहीं किया जा सकता।

वाणिज्य का अर्थ समय-समय पर परिवर्तित होता रहता है। इसकी कुछ प्रमुख परिभाषाएं इस प्रकार हैं। वाणिज्य के अंतर्गत वे सभी क्रियाएं सम्मिलित हैं जिनका सम्बन्ध वस्तुओं के वितरण से होकर उपभोक्ताओं तक पहुंचाना है।

जेम्स स्टेफेन्सन के अनुसार, वाणिज्य से तात्पर्य उन समस्त साधनों के योग से है। जिनके द्वारा वस्तुओं के विनिमय में व्यक्तियों (व्यापार), स्थान (यातायात एवं बीमा) तथा समय (भण्डार गृह) की बाधाओं को दूर करने में संलग्न है।

("Commerce means the seem to total of the process which are engaged in the removal of hindrances of person's (trade) place (transport and insurance) and time (whererousing) in the exchange (banking) of commodities.")

पैने.ए.हार्बट के शब्दों में - "वाणिज्य आर्थिक ढांचे का वह पहलू है जो व्यवसाय एवं औद्योगिक उत्पादन के प्रबंध एवं वितरण से सम्बन्धित रहता है। इस प्रकार यह सम्पूर्ण आर्थिक ढांचे का समन्वयकारी तत्व है।"

("Business is the phase of economics system which is devoted to the management and distribution of products of industry and profession as such it is essentional integrating element in the whole economy structure.")

एकलीन थॉमस के अनुसार, "वस्तुओं के क्रय विक्रय, वस्तुओं के विनिमय और निर्मित माल के वितरण को वाणिज्य कहते हैं।"

("Commercial occupation deal with buying and selling of goods, exchange of commodities and distribution of finished goods.")

अतः हम कह सकते हैं कि वाणिज्य एक विस्तृत अर्थ वाला शब्द है जिसमें वे सभी क्रियाएं सम्मिलित की जाती है जिनका सम्बन्ध वस्तुओं को उपभोक्ताओं तक न्यूनतम असुविधा के द्वारा पहुँचाया जाता है।

वाणिज्य के अंतर्गत व्यापार एवं व्यापार से सम्बन्धित क्रियाएं यातायात, बैंकिंग, बीमा,

Scanned with CamScanner

संदेशवाहन, वित्तीय संस्थाएं, क्रय-विक्रय कला, उत्पादन केन्द्र, मिडिया, डाकघर, भंडारगृह तथा विज्ञापन आदि सम्मिलित हैं।

वाणिज्य का क्षेत्र (Scope of Commerce)

किसी विषय के क्षेत्र से अभिप्राय अध्ययन का घेरा होता है। इसमें विषय की व्यापकता, विविधता तथा अनुभव रखने की सीमा उस विषय के अध्ययन से होने वाले लाभों एवं उपयोगिताओं का अध्ययन किया जाता है। क्षेत्र में मुख्य रूप से दो बाते हैं -

1. विषय वस्तु (Subject Matter)
2. विषय की प्रकृति (Nature of Subject)

वाणिज्य की विषय वस्तु (Subject Matter of Commerce)

आज का युग विज्ञान एवं तकनीकी का युग है। पूरे विश्व में औद्योगिक क्रांति आई है और मनुष्यों की आवश्यकताएं भी दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। वाणिज्य हमारे आर्थिक एवं व्यवसायिक क्रियाओं का अध्ययन करता है। इस प्रकार वाणिज्य शिक्षा का क्षेत्र काफी विस्तृत है। वाणिज्य शिक्षा के मुख्य विषय-वस्तु को हम दो भागों में बाँट सकते हैं -

1. **व्यापार (Trade)** - व्यापार का सम्बन्ध माल के क्रय विक्रय से है। व्यापारियों का कार्य उत्पादकों एवं उपभोक्ताओं के बीच सम्पर्क स्थापित करना होता है। इनमें दुकानदार, विक्रेता, आढ़ती आदि शामिल हैं।

क) देशी व्यापार (Home Trade) - यह वह व्यापार है जो किसी देश की सीमाओं के अन्दर विभिन्न शहरों के बीच या किसी शहर में विभिन्न लोगों के बीच हो सकता है। देशी व्यापार थोक व फुटकर दोनों प्रकार का हो सकता है।

ख) विदेशी व्यापार (Foreign Trade) - यह वह व्यापार है जो एक देश दूसरे देश के साथ करता है। इन वस्तुओं को क्रय करने वाले व विक्रय करने वाले अलग-अलग देश के लोग होते हैं। यह व्यापार आयात व निर्यात दो प्रकार का होता है।

2. **व्यापार के सहायक (Aids of Trade)** - व्यापार को चलाने के लिए विभिन्न प्रकार के तत्वों की सहायता ली जाती है जिन्हें व्यापार के सहायक कहा जाता है। इसके बगैर व्यापार सफलतापूर्वक नहीं चल सकता। व्यापार के मुख्य सहायकों में परिवहन का अत्यधिक महत्व है। परिवहन तीनों मार्गों द्वारा किया जाता है। और तैयार माल को उपभोक्ताओं तक पहुंचाया जाता है। परिवहन के अलावा संदेशवाहन जैसे - टेलिफोन, डाकखाने तार आदि व्यापार में सहायक है। बीमा भी माल को विभिन्न ख़तरों से बचाने में सहायक है। आजकल सभी कार्य जोख़िमों से भरे हैं। इसलिए व्यापार में बीमा का भी महत्वपूर्ण स्थान है इनके अलावा बैंकिंग एवं वित्त भंडारगृह, विज्ञापन आदि ऐसे व्यापार के सहायक है। जिनका अध्ययन वाणिज्य शिक्षा के अंतर्गत किया जाता है -

वाणिज्य : विज्ञान एवं कला दोनों (Commerce : Science and Art Both)

विज्ञान ज्ञान का क्रमबद्ध अध्ययन है, जोकि कार्य के कारण तथा परिणामों के पारस्परिक सम्बन्धों को बताता है।

Scanned with CamScanner

("Science in a systematic body of knowledge concerning the relationship between cause and effect of particular phenomena.")

इसके नियम व सिद्धान्त सार्वजनिक होते हैं। यह कारण एवं परिणाम के सम्बन्धों का विश्लेषण करता है। इसमें पूर्वानुमान की शक्ति होती है।

वाणिज्य को भी विज्ञान की संज्ञा दी जाती है क्योंकि यह ज्ञान का क्रमबद्ध व व्यवस्थित भंडार है। इसमें इसके अपने नियम व सिद्धान्त दोनों होते हैं। यह कारण एवं परिणाम के सम्बन्धों का विश्लेषण भी करता है। अतः वाणिज्य एक विज्ञान है।

वाणिज्य कला के रूप में (Commerce as an Art)

प्रो. जे.एम.कीन्स के अनुसार - "कला एक दिए हुए उद्देश्य के लिए नियमों की प्रणाली है।"

प्रो. कोसा के अनुसार - "विज्ञान केवल व्याख्या करता है जबकि कला साध्यों की प्राप्ति के लिए विचारों का प्रतिपादन करती है।"

("Science is built up of facts as a house is built of stones but in an accumulation of facts is no more a science than a heap of stones in a house.")

कला तथ्यों का वर्णन नहीं करती अपितु लक्ष्यों को प्राप्त करने का उपाय बताती है। कला की साधना करने में विशेष चतुराई, अनुभव और आत्म संयम की आवश्यकता होती है।

वाणिज्य एक कला भी है क्योंकि यह व्यावसायिक सफलता का पहलू बताता है विभिन्न व्यावसायिक संगठनों व प्रबंधों के लिए आजकल प्रशिक्षण दिया जाता है। अतः हम कह सकते हैं कि वाणिज्य कला व विज्ञान दोनों हैं।

वाणिज्य शिक्षण का क्षेत्र (Scope of Teaching of Commerce)

वाणिज्य शिक्षण का क्षेत्र बहुत व्यापक होता है। इसके अन्तर्गत वह सभी क्षेत्र आते हैं जिनका आर्थिक तथा व्यावसायिक जगत से सम्बन्ध होता है। निम्नलिखित तत्वों से वाणिज्य शिक्षण का क्षेत्र समझा जा सकता है -

1. **व्यापार (Business)** - वाणिज्य शिक्षण के अन्दर सभी प्रकार के व्यापारों एवं उनके नियम-कानूनों का अध्ययन कराया जाता है। ऐसे सभी व्यापार जो समाज के कल्याण व उन्नत्ति में लगे हुए है वह इसी के अन्तर्गत आते हैं।
2. **उद्योग (Industries)** - वाणिज्य शिक्षण में उद्योग तथा उससे जुड़ी सभी क्रियाओं एवं तत्वों का अध्ययन भी किया जाता है। उद्योग के सम्बन्ध में आने वाले श्रम, पूंजी, भूमि आदि का भी अध्ययन किया जाता है। साथ ही सभी प्रकार के छोटे-बड़े उद्योगों तथा कुटीर उद्योगों का अध्ययन भी वाणिज्य शिक्षण में होता है।
3. **वाणिज्य (Commerce)** - वाणिज्य शिक्षण में ही वाणिज्य से सम्बन्ध रखने वाली सभी क्रियाओं के विषय में अध्ययन किया जाता है।
4. **यातायात (Transport)** - वाणिज्य शिक्षण में वाणिज्य व्यवसाय की उन्नति में सबसे महत्वपूर्ण योगदान देने वाले साधन यातायात के बारे में भी अध्ययन कराया जाता है।
5. **बैंक (Bank)** - वाणिज्य-शिक्षण के अन्तर्गत व्यापार के विकास में सबसे अधिक सहायक संस्था

Scanned with CamScanner

बैंक के विषय में भी अध्ययन कराया जाता है। बैंक के अध्ययन से वाणिज्य के अन्तर्गत धन का हस्तांतरण किस प्रकार होता है और बैंक क्या-क्या सेवाएं प्रदान करता है यह सब ज्ञान मिल जाता है।

6. **बीमा (Insurance)** - वाणिज्य शिक्षण में बीमा का भी अध्ययन कराया जाता है ताकि वाणिज्य एवं व्यापार से जुड़े जोखिमों को कम करने के सम्बन्ध में ज्ञान मिल सके। बीमा जोख़िम करने का सबसे अच्छा साधन होता है इसीलिए वाणिज्य के अन्तर्गत इसका अध्ययन भी दिया जाता है।

7. **विज्ञापन एवं प्रचार (Advertisement)** - वाणिज्य शिक्षण में विज्ञापन एवं प्रचार के विषय में भी अध्ययन कराया जाता है। इससे उत्पादन को बढ़ाने, बिक्री को बढ़ाने तथा बिक्री की नियमिता रूप से बनाए रखने में सहायता प्राप्त होती है। इसीलिए इसका अध्ययन आवश्यक होता है।

8. **अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना (International Understanding)** - वाणिज्य शिक्षण में अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के विषय में अध्ययन कराते हैं तो साथ ही यह भी अध्ययन कराया जाता है कि हमें अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना बनाए रखनी चाहिए ताकि व्यापार शान्ति से चले व उन्नति करे।

इस प्रकार वाणिज्य शिक्षण में वाणिज्य की शाखाओं के प्रत्येक पहलू के विषय में पढ़ाया जाता है। वाणिज्य की यह सभी शाखाएं मिलकर ही वाणिज्य का क्षेत्र बनती हैं।

वाणिज्य की प्रकृति (Nature of Commerce)

वाणिज्य शिक्षण की प्रकृति को वाणिज्य की विशेषताओं के द्वारा समझा जा सकता है। इसके सम्बन्ध में बिन्दु इस प्रकार हैं -

1. **सामाजिक क्रिया (Social Process)** - वाणिज्य एक सामाजिक क्रिया है। वाणिज्य समाज का अभिन्न अंग होता है। व्यावसायिक क्रियाओं द्वारा समाज का भला होता है। अच्छा व्यवसाय समाज का कल्याण करने में अग्रसर होता है। वाणिज्य शिक्षण के द्वारा इस सब का ज्ञान कराया जाता है और छात्रों को समाज कल्याण के प्रति जागरूक किया जाता है। यह समाज के लिए की जाने वाली सामाजिक क्रिया है।

2. **कला एवं विज्ञान (Art and Science)** - वाणिज्य कला एवं विज्ञान दोनों होता है। वाणिज्य शिक्षण में शिक्षण को एक कला के माध्यम से रूचिपूर्ण बना कर उत्तम ढंग से प्रस्तुत किया जाता है साथ ही इसके विज्ञान की ही तरह कुछ निर्धारित नियम व कानून होते हैं।

3. **दक्षताओं का विकास (Development of Efficiency)** - वाणिज्य दक्षताओं का विकास करता है। इसके ज्ञान से छात्रों को विभिन्न प्रकार की व्यावसायिक व आर्थिक क्रियाओं का ज्ञान व बोध होता है और वे दक्ष बनते हैं।

4. **समायोजन में सहायक (Helpful in Adjustment)** - वाणिज्य के ज्ञान से छात्रों को विभिन्न आर्थिक, सामाजिक व व्यावसायिक क्रियाओं का ज्ञान मिलता है जिस से वह भविष्य में इन व्यावसायिक व आर्थिक क्रियाओं में समायोजन करने में अधिक कठिनाई अनुभव नहीं करते हैं।

5. **मानवीय क्रिया (Man Process)** - वाणिज्य एक मानवीय क्रिया भी है क्योंकि यह छात्रों को केवल मानव से सम्बन्धित क्रियाओं का ज्ञान कराती है। यह मानवों द्वारा धन कमाने व खर्च करने के सम्बन्ध में ज्ञान प्रदान करता है।

6. **आर्थिक नागरिकता का विकास (Development of Economic Citizenship)** - वाणिज्य एक

Scanned with CamScanner

आर्थिक नागरिकता का विकास करने वाली क्रिया है। इसके शिक्षण से छात्रों में आर्थिक नागरिकता के गुणों का विकास होता है।

7. अच्छे उपभोक्ता निर्माण क्रिया (Development Process of Good Consumers) – वाणिज्य से छात्रों को उत्पादन एवं उपभोग की क्रियाओं का ज्ञान प्राप्त होता है और वह अच्छे उपभोक्ता के गुण व कर्तव्यों को जान पाते हैं। इससे अच्छे उपभोक्ताओं के निर्माण में वाणिज्य शिक्षण सहायक होता है।

वाणिज्य की प्रकृति का विश्लेषण करके हम वाणिज्य शिक्षा के बारे में भी निम्नलिखित निष्कर्ष निकाल सकते हैं –

1. वाणिज्य शिक्षा, अध्ययन का एक ऐसा विषय है जो मनुष्यों को व्यवसायिक एवं आर्थिक क्रियाओं का ज्ञान देती है।
2. वाणिज्य शिक्षा के अन्तर्गत ऐसी पाठ्यवस्तु शामिल की जाती है जिसके अध्ययन के परिणामस्वरूप मनुष्य समाज में आर्थिक व व्यावसायिक समायोजित हो सकता है।
3. वाणिज्य शिक्षा के अंतर्गत मानवीय सम्बन्धों एवं मनुष्य से जुड़े हुए क्रिया कलापों का अध्ययन किया जाता है।
4. इसके द्वारा मनुष्यों को विभिन्न व्यवसायों के लिए तैयार किया जाता है और उनमें व्यावसायिक कुशलताओं का विकास किया जाता है।
5. वाणिज्य शिक्षा के अंतर्गत धन का इकट्ठा करना और उसका समुचित उपयोग करना सिखाया जाता है।
6. वाणिज्य शिक्षा के द्वारा सुयोग्य नागरिक तैयार किए जा सकते हैं। जो देश के विकास के साथ-साथ अंतर्राष्ट्रीय सद्भावना एवं विकास में सहायक हो सकते हैं।

प्रश्न-2. वाणिज्य शिक्षा के उद्देश्य की विशेषताऐं बताइए तथा उद्देश्य स्थापना में विचारणीय तत्व कौन-कौन से हैं?
(Explain the characteristics of commerce teaching objective and discuss guidelines for setting objectives.)

उत्तर – वाणिज्य क्रिया का वह अंग है जिसमें वस्तुओं का वितरण होता है। यह उपभोक्ताओं एवं उत्पादकों के बीच सम्पर्क स्थापित करता है। वाणिज्य व्यापार द्वारा, परिवहन, बीमा बैकिंग द्वारा, विज्ञापनों द्वारा विभिन्न बाधाओं को दूर करके वस्तुओं के विनियम को सुविधाजनक बनाता है।

परिभाषाएँ (Definitions)

जेम्स स्टेफेन्सन – "वाणिज्य से तात्पर्य उन समस्त साधनों के योग से है जिनके द्वारा वस्तुओं के विनिमय में व्यक्तियों (व्यापार) स्थान (यातायात एवं बीमा) तथा समय (भण्डार गृह) की बाधाओं को दूर करने में संलग्न है।"

थॉमस – "वस्तुओं के क्रय विक्रय, विनिमय और वितरण को वाणिज्य कहते हैं।"

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि वाणिज्य के अन्तर्गत वस्तुओं के क्रय विक्रय के साथ उन सभी क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है जो कि वितरण में आने वाली

Scanned with CamScanner

बाधाओं को हटाने में सहायक होती है। "वाणिज्य एक विशाल वृक्ष के समान है और व्यापार इसकी मुख्य शाखा है। एवं व्यापार के सहायक इसकी उपशाखाऐं हैं।"

वाणिज्य शिक्षण के उद्देश्य (Objectives of Teaching of Commerce)

कोई भी विषय अपनी विषय सामग्री तथा कौशलों के कारण महत्वपूर्ण होता है। जिसके परिणामस्वरूप समाज के प्रति उत्तरदायी नागरिक के रूप में विद्यार्थियों का विकास होगा। इस प्रकार यह केवल तथ्यों को मौखिक रूप से स्मरण करने की अपेक्षा अधिगम अनुभवों तथा बुद्धिमता पर बल देगा। हम जानते है कि शिक्षा जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है जो छात्रों के सम्पूर्ण विकास में सहायता देती है। किसी भी देश में शिक्षा के उद्देश्य उनकी आवश्यकताओं के अनुसार निर्धारित होते हैं और शिक्षण को इन्हीं उद्देश्य को सामने रखकर किया जाता है। किसी भी कार्य को सफलतापूर्वक करने के लिए आवश्यक है कि उसका उद्देश्य हो। बिना उद्देश्य के कार्य नहीं किया जा सकता है। वाणिज्य शिक्षण के उद्देश्य इस प्रकार हैं।

1. वाणिज्य शिक्षण का उद्देश्य छात्रों वाणिज्य के आधारभूत नियमों व सिद्धान्तों का ज्ञान कराना है।
2. छात्रों को विभिन्न व्यवसायों से सम्बन्धित ज्ञान प्रदान करना जिससे छात्र प्राप्त ज्ञान को अपने जीवन में उपयोग कर सकें।
3. छात्रों में सामाजिक कुशलता के साथ-साथ आर्थिक कुशलता का विकास करना।
4. छात्रों में ऐसी कुशलताओं का विकास करना जो छात्रों के दैनिक जीवन में उपयोगी हो। अर्थात् जो उन्होंने ज्ञान प्राप्त किया है वह केवल सैद्धान्तिक होकर न रहे।
5. राष्ट्र के लिए प्रभावशाली सशक्त एवं उपयोगी नागरिक बनाना।
6. छात्रों को व्यवसाय के नियमों व सिद्धान्तों की स्पष्ट जानकारी देना।
7. व्यावसायिक क्षेत्र में आने वाली समस्याओं के बारे में विद्यार्थियों को जानकारी प्रदान कराना।
8. विद्यार्थियों को परिचित कराना कि एक उत्पाद को अन्तिम उपभोक्ता तक पहुँचाने में किन-किन साधनों का प्रयोग किया जाता है, तथा यह भी बताना कि कम से कम कीमत पर गुणवत्ता वाली वस्तुओं का प्रयोग एक उपभोक्ता कर सकता है।
9. छात्रों को प्राकृतिक संसाधनों का सदुपयोग करने की प्रेरणा देना।
10. वाणिज्य शिक्षा द्वारा छात्रों में तर्क शक्ति, चिन्तन शक्ति, कल्पना शक्ति, स्मरण व निर्णय लेने की क्षमता का विकास किया जाता है जिससे वे सामाजिक व आर्थिक समस्याओं का समाधान साहसपूर्वक कर सकें।
11. छात्रों में व्यावसायिक कौशलों जैसे आय-व्यय, बहीखाता, लेखा-जोखा, बैंक के खाते खोलना, जीवन बीमा आदि का विकास करना।
12. विद्यार्थियों में विभिन्न मानवीय गुण सहकारिता, एकता, सहिष्णुता, उदारता, सहानुभूति, ईमानदारी जैसे गुणों का विकास करना।

वाणिज्य के उद्देश्यों की विशेषताएँ (Characteristics of Commerce's Objectives)

किसी व्यवसायिक इकाई के उद्देश्यों की निम्नलिखित विशेषताएँ होनी चाहिएं -

Scanned with CamScanner

ब्लूम के अनुसार वाणिज्य शिक्षण के प्राप्य उद्देश्यों का वर्गीकरण (CLASSIFICATION OF OBJECTIVES OF TEACHING OF COMMERCE ACCORDING TO BLOOM)

प्रो. ब्लूम ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'Taxonomy of Educational Objectives' में शिक्षा को त्रिमुखी प्रक्रिया मानते हुये उसके अन्तर्गत निम्नलिखित बिन्दुओं पर विचार किया–

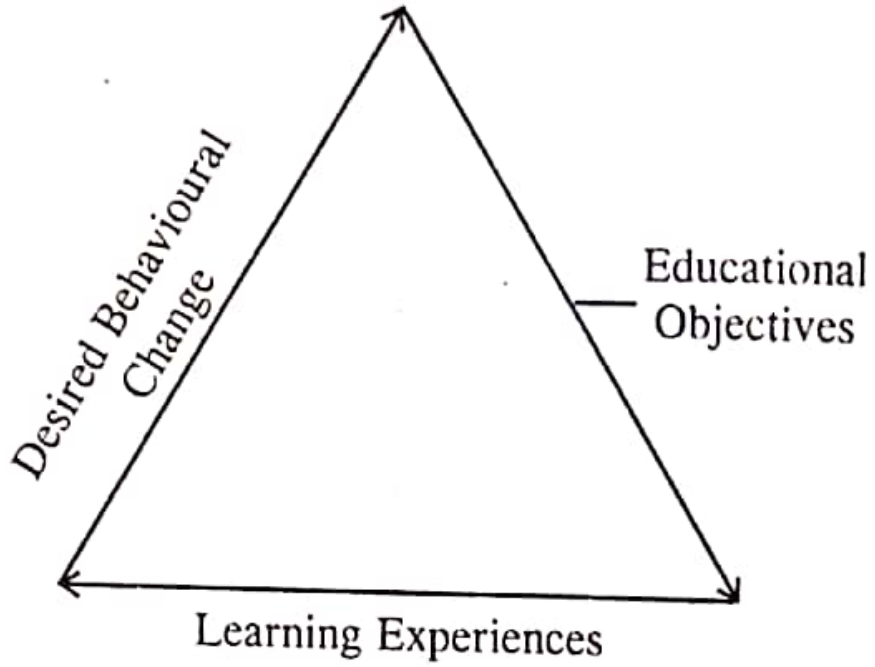

(1) शैक्षिक प्राप्य उद्देश्य।
(2) अधिगम उद्देश्य।
(3) अपेक्षित व्यवहारगत परिवर्तन को सम्मिलित किया।

ब्लूम ने शैक्षिक उद्देश्यों को तीन भागों में विभाजित किया है।
(1) ज्ञानात्मक पक्ष (Cognitive Domain)
(2) भावात्मक पक्ष (Affective Domain)
(3) क्रियात्मक पक्ष (Connative Domain)

इसके पश्चात् इन्होंने प्रत्येक पक्ष को पुनः 6-6 भागों में विभाजित किया है जिन्हें बहाव चित्र (Flow Chart) के माध्यम से दर्शाया गया है। आकृति में प्रत्येक कोशिका (Cell) में दर्शाया गया है जिसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

Scanned with CamScanner

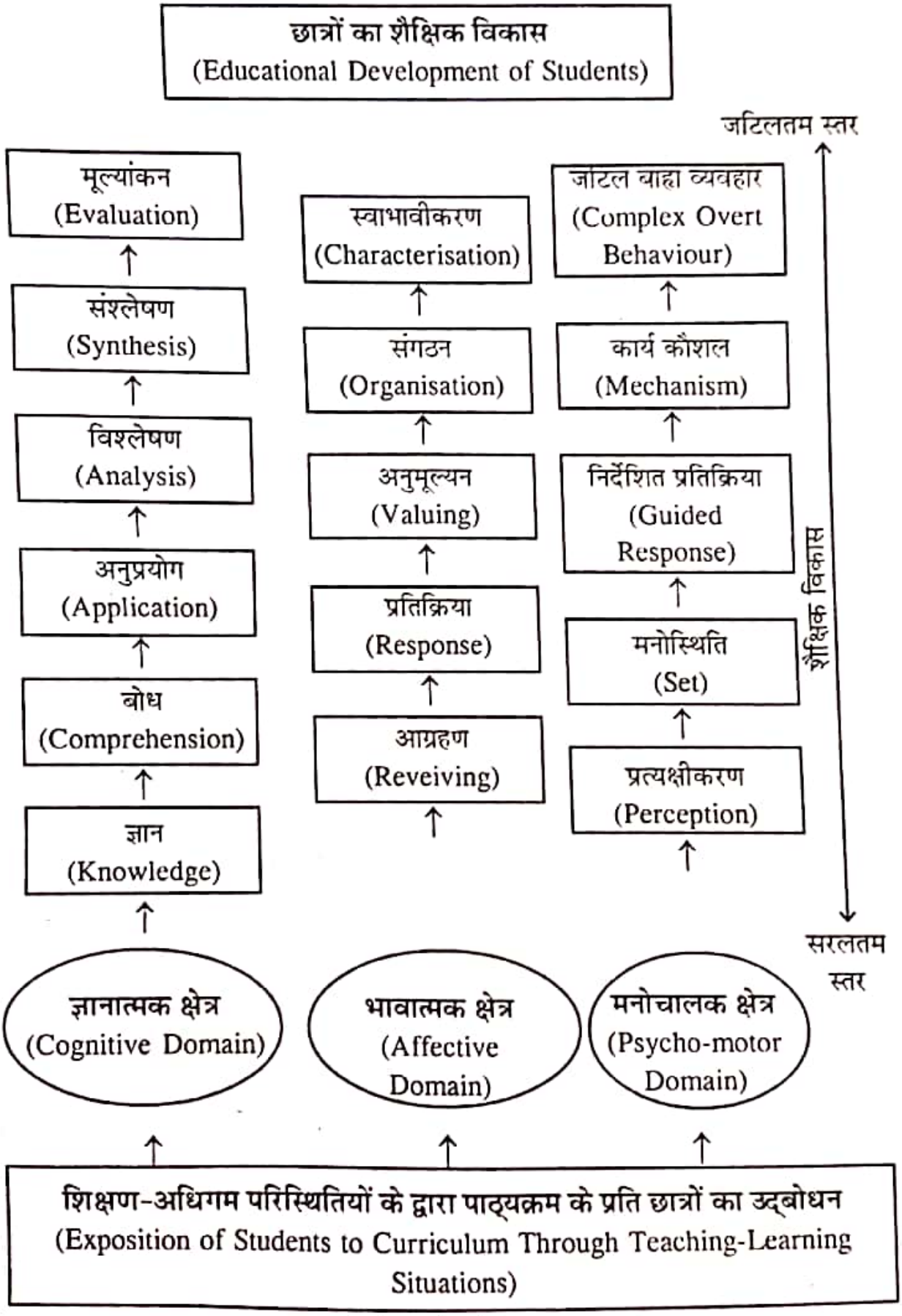

वर्गीकृत शैक्षिक उद्देश्यों का बाहाव चित्र

(Flow Chart for Taxonomised Educational Objectives)

(1) ज्ञानात्मक पक्ष (Cognitive Domain)—इस पक्ष का विकास प्रो. ब्लूम ने 1956 में किया। इसका सम्बन्ध मुख्य रूप से सूचनाओं (Informations), ज्ञान (Knowledge) तथा तथ्यों (Facts) की जानकारी एवं विषय-वस्तु (Content) के विश्लेषण (Analysis),

Scanned with CamScanner

संश्लेषण (Synthesis) एवं मूल्यांकन (Evaluation) आदि बौद्धिक प्रक्रियायें बालक को अधिगम अनुभव प्रदान कर अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन की ओर ले जाती हैं। इस पक्ष के उपवर्गीकरण निम्न प्रकार से होते हैं–

ज्ञानात्मक पक्ष
(COGNITIVE DOMAIN)

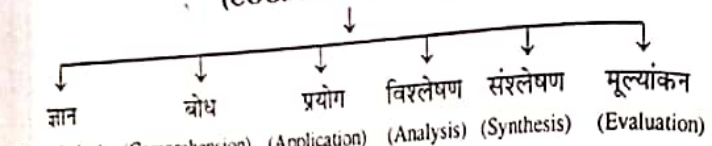

ज्ञानात्मक उद्देश्यों को व्यवहारिक रूप में लिखना
(WRITING COGNITIVE OBJECTIVE IN BEHAVIOURAL TERMS)

प्रो. ब्लूम के साथ राबर्ट मेगर ने भी ज्ञानात्मक पक्ष के उद्देश्यों को व्यवहारिक रूप में लिखने में रूचि ली है। इस हेतु ब्लूम ने प्रत्येक उद्देश्य के लिये कार्य सूचक क्रियाओं की सूची (List of Action Verbs) तैयार की है। राबर्ट मेगर ने भी इसी सूची को आधार माना है तथा शिक्षण उद्देश्यों को व्यवहारिक रूप में लिखने का निम्नांकित ढंग बताया है।

(1) सर्वप्रथम अध्यापक कक्षा के स्तर के अनुरूप अपेक्षित व्यवहार परिवर्तनों की पहचान करे।

(2) द्वितीय सोपान में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तनों को परिभाषित करे।

(3) तृतीय सोपान में मानदण्डों का विशिष्टीकरण किया जाए जिससे उनमें होने वाले अपेक्षित व्यवहार परिवर्तनों का अनुमान लगाया जा सके।

ज्ञानात्मक उद्देश्यों के लिये कार्यसूचक क्रियाओं की सूची
(A LIST OF ACTION VERBS FOR COGNITIVE OBJECTIVES)

उपर्युक्त छः प्रक्रियाओं का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है–

प्राप्य उद्देश्य	कार्य सूचक क्रियायें
(1) ज्ञान (Knowledge)	प्रत्यास्मरण करना (Recall) प्रत्यभिज्ञान (Recognition) परिभाषा देना (Define) विशिष्ट ज्ञान (Knowledge of specifics) विशिष्ट तथ्यों का ज्ञान (Knowledge of specific facts) परम्पराओं का ज्ञान (Knowledge of conventions) प्रवृत्तियों तथा क्रमों का ज्ञान (Knowledge of trends and sequences) मानदण्ड का ज्ञान (Knowleuge of criteria) कार्य पद्धति का ज्ञान (Knowledge of methodology) नियमों और सामान्यीकरणों का ज्ञान (Knowledge of principles and generalizations) वर्गीकरण तथा श्रेणियों का ज्ञान (Knowledge of classifications and categories) सिद्धान्तों तथा संरचनाओं का ज्ञान (Knowledge of theories and structures)
(2) बोध (Comprehension)	व्याख्या देना (Explaining) उदाहरण देना (Illustration) वर्गीकरण (Classification) चयन करना (Selecting) सम्बन्ध स्थापित करना (Relate) तुलना करना (Compare) अन्तर करना (Differentiate) अर्थापन करना (Interpret)
(3) प्रयोग (Application)	पूर्व कथन देना (Predict) गणना करना (Compute) प्रयोग करना (Use) बनाना (Construct) जाँच करना (Assess)
(4) विश्लेषण (Analysis)	तत्वों का विश्लेषण (Analysis of elements) सम्बन्धों का विश्लेषण (Analysis of relationship) संगणनात्मक सिद्धान्तों का विश्लेषण (Analysis of organizational principles) विभाजन करना (Division) पुष्टि करना (Justification) निष्कर्ष निकालना (Conclusion)
(5) संश्लेषण (Synthesis)	विशिष्ट सम्प्रेषण की उत्पत्ति (Production of unique communication) योजना की उत्पत्ति (Production of a plan) अमूर्त सम्बन्धों की व्युत्पत्ति (Derivation of set of abstract relations) तर्क करना (Argue) वाद-विवाद करना (Discussion) व्यवस्थित करना (Organic) सामान्यीकरण (Generalizations) संक्षिप्त करना (Summarise)
(6) मूल्यांकन (Evaluation)	आलोचना करना (Criticise) मूल्यांकन करना (Evaluation) अनदेखा करना (Avoidance) बचाव करना (Defend)

(1) ज्ञान—यह स्मरण नामक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया पर आधारित है। यह संज्ञानात्मक क्षेत्र में अधिगम के निम्न स्तर का प्रतिनिधित्व करता है। इसके अन्तर्गत सूचनाओं, तथ्यों आदि का प्रत्यास्मरण शामिल है।

(2) अवबोधन—यह विषय-वस्तु के भाव को ग्रहण करने की योग्यता है। यह अवबोधन का निम्न स्तर है।

Scanned with CamScanner

(3) ज्ञानोपयोग—यह सीखी हुयी विषय-वस्तु की नवीन तथा स्कूल परिस्थितियों में प्रयुक्त करने की योग्यता है।

(4) विश्लेषण—यह किसी सूचना या विषय-वस्तु को विभिन्न अंगों में विभक्त करके, उनमें निहित संगठनात्मक संरचना के समझने की योग्यता है।

(5) संश्लेषण—यह विभिन्न अंगों को एक साथ मिलाकर एक नवीन सामग्री बनाने की योग्यता है।

(6) मूल्यांकन—यह विषय-वस्तु के महत्व का आकलन करने की योग्यता है। मूल्यांकन आन्तरिक रूप से तथा बाह्य रूप दोनों प्रकार से किया जाता है।

भावात्मक पक्ष
(Affective Domain)

इस पक्ष का विकास ब्लूम, क्रैथवाल तथा मसीआ ने 1964 में किया। भावात्मक उद्देश्यों का सम्बन्ध अभिवृत्तियों, रुचियों, संवेगों, मनोवृत्तियों व मूल्यों से होता है। ब्लूम महोदय ने विद्यार्थियों के भावात्मक विकास करने के लिये प्राप्य उद्देश्यों को अग्रलिखित भागों में विभाजित किया है—

भावात्मक पक्ष

ग्रहण करना (Receiving) | अनुक्रिया (Responding) | मूल्यन (Valuing) | प्रव्ययीकरण (Conceptualization) | संगठन (Organisation) | चारित्रीकरण (Characterization)

भावात्मक उद्देश्यों के लिये कार्य समूह क्रियायें
(A List of Action Verbs for Affective Objectives)

प्राप्य उद्देश्य (Objectives)	कार्य सूचक क्रियायें (Action Verbs)
(1) ग्रहण करना (Receiving)	चेतनता या अभिज्ञता (Awareness) स्वीकार करने की इच्छा (Willingness to receive) नियंत्रित अथवा चयनित अवधान (Controlled or selected attention) सुनना (Listen) पसन्द करना (Prefer)
(2) अनुक्रिया (Responding)	संवेदनशील होने की इच्छा (Willingness to respond) संवेदनशीलता से सन्तुष्टि (Satisfaction by Response) उत्तर देना (Answer) कथन करना (State) सूची बनाना (Listing) विकास करना (Developing) चयन करना (Selecting) लिखना (Writing)
(3) मूल्यन (Valuing)	मूल्य को स्वीकारना (Acceptance of values) मूल्य को वरीयता क्रम देना (Preference of a value)

	प्रतिबद्धता (Commitment) भाग लेना (Participating) संकेत करना (Indicating) प्रभावित करना (Influencing) पहचानना (Recognize) निर्धारण करना (Decide)
(4) प्रत्ययीकरण (Conceptualization)	भेद करना (Differentiate) विश्लेषण करना (Analysis) सम्बन्ध स्थापित करना (Relate) प्रदर्शित करना (Demonstrate)
(5) संगठन (Organization)	व्यवस्था करना (Organise) तुलना करना (Compare) सह-सम्बन्ध स्थापित करना (Correlate) निर्णय करना (Judge)
(6) चारित्रीकरण (Characterization)	दोहराना (Revise) विकसित करना (Developing) बदलना (Change) पहचान (Identify)

उपर्युक्त का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है—

(1) स्वीकार करना—यह भावात्मक क्षेत्र का प्रारम्भिक या निम्न स्तर है। इसमें सीखने वाला उद्दीपन के प्रति संवेदनशीलता प्रदर्शित करता है।

(2) अनुक्रिया—इसके अन्तर्गत अधिक उत्प्रेरण तथा अवधान में अधिक नियमितता की अपेक्षा की जाती है। व्यवहारिक दृष्टि से इसे अभिरुचि (Interest) कहा जा सकता है।

(3) मूल्य-निर्धारण या मूल्यन—इसके अन्तर्गत व्यवहार की उत्प्रेरणा आती है जो व्यक्ति की किसी मूल्य के प्रति प्रतिबद्धता पर आधारित है। इसे अभिवृत्ति (Attitude) कहा जा सकता है।

(4) संगठन या व्यवस्था—व्यक्ति का व्यवहार सामान्यता किसी एक की अभिवृत्ति से उत्प्रेरित न होकर अभिवृत्ति समूह से होता है। ऐसे समूह के संगठत रूप को व्यवस्था कहते हैं।

(5) चारित्रीकरण—मूल्यों को निरन्तर आत्मसात् करने से कार्य प्रभावित होते हैं। जब व्यक्ति इस प्रक्रिया से एक ऐसे स्वर पर पहुँच जाता है जिसे जीवन-दर्शन कहने लगते हैं, तो वह चारित्रीकरण की स्थिति कहलाती है।

क्रियात्मक पक्ष
(CONNATIVE DOMAIN)

इस पक्ष का विकास सिम्पसन (Sympson) ने 1962 में किया था। क्रियात्मक पक्ष का सम्बन्ध कौशल तथा शारीरिक क्रियाओं के विकास से होता है। इस क्षेत्र का सबसे कम विकास हुआ है, क्योंकि आज भी क्रियात्मक पक्ष के उद्देश्यों को व्यवहारिक रूप से लिखने के लिये कार्य समूह क्रियाओं (Group Action) की सूची पूर्णरूप से नहीं बन गयी है। इसका एक कारण शिक्षाविदों का इस क्षेत्र में रुचि न लेना कहा जा सकता है तथा दूसरा कारण इस

Scanned with CamScanner

क्षेत्र की स्वतः स्पष्टता भी है। इस पक्ष के उद्देश्यों को भी निम्न 6 उपवर्गों में विभक्त किया गया है–

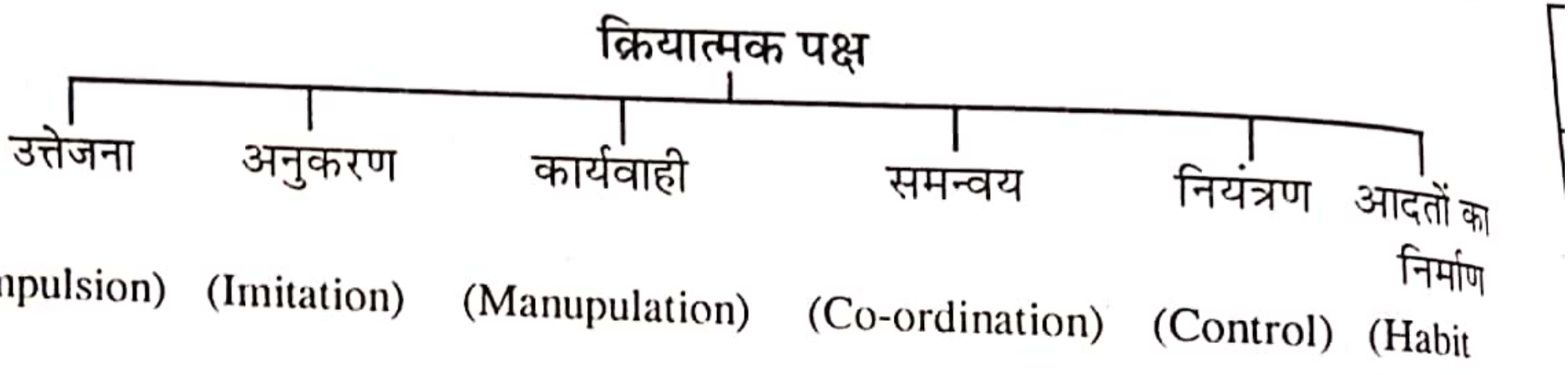

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि सर्वप्रथम छात्र सीखने के लिये उत्तेजित होता है। तदुपरान्त वरिष्ठ व्यक्तियों का अनुकरण करता है। सीखने के लिये कार्यवाही (मैनी पुलेट) करता है, सीखे हुये ज्ञान से समन्वय करता है, अपने पर नियंत्रण करना सीखता है व इस प्रकार वह आदतों का निर्माण करता है।

इस पक्ष में हाथ और अँगुलियों का संचालन, हाथ और आँख का समन्वय, हाथ और कान का समन्वय, वाणी में सुधार हेतु आवाज करना, आवाज और शब्द का समन्वय, आवाज और हाव–भाव का समन्वय आदि क्रियाओं को सम्मिलित किया गया है।

शिक्षण उद्देश्यों में ज्ञानात्मक, भावात्मक व क्रियात्मक पक्षों को महत्व दिया जाता है। इन तीन पक्षों में परस्पर समन्वय होता है। उच्च स्वर पर तीनों पक्ष एक हो जाते हैं जिसे व्यक्ति का सम्पूर्ण विकास कहा जाता है।

Scanned with CamScanner

(AIMS OF TEACHING COMMERCE AT DIFFERENT LEVELS)

विद्यालयीय शिक्षा स्तरों को मोटे तौर पर तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है—

(1) पूर्व माध्यमिक स्तर (Pre Secondary level)

(2) माध्यमिक स्तर (Secondary level)

(3) उच्च माध्यमिक स्तर (Higher Secondary level)

(1) पूर्व माध्यमिक स्तर (Pre Secondary level)—इस स्तर पर वाणिज्य विषय शिक्षा छात्रों को सामान्य विषयों के माध्यम से अप्रत्यक्ष रूप से प्रदान की जाती है। इस स्तर के छात्रों में स्मरण शक्ति, अनुभव, तर्क व निर्णय शक्ति का निरन्तर विकास होने के कारण वे वास्तविकता में अधिक आस्था रखते हैं तथा ऐसे तर्कों को शीघ्रता से ग्रहण करते हैं जो उनके लिये उपयोगी होते हैं।

(2) माध्यमिक स्तर (Secondary level)—शिक्षा आयोग (1944—66) के अनुसार इस स्तर के छात्रों का मानसिक स्तर परिपक्वता की दृष्टि से अर्थशास्त्र अध्ययन के लिये उपयुक्त हो जाता है। बालक स्वयं क्रिया करके निर्णय पर पहुँचना चाहता है। इस कारण माध्यमिक स्तर पर वाणिज्य एक पृथक विषय के रूप में पढ़ाया जाता है।

इस स्तर पर वाणिज्य शिक्षण के निम्नलिखित उद्देश्य होंगे—

(1) व्यवसायिक तथ्यों का ज्ञान कराना।

(2) व्यवसायिक तथ्यों के प्रति रुचि जागृत करना।

(3) उच्च माध्यमिक स्तर के लिये छात्रों को तैयार करना।

Scanned with CamScanner

(4) व्यवसायिक जीवन की राष्ट्रीय एवं सामाजिक समस्याओं से अवगत कराना।

(5) पारिवारिक बजट के महत्व का ज्ञान कराना।

(6) मानुबन्धित अध्ययन करने की योग्यता विकसित करना।

(7) सामाजिक चेतना का विकास करना।

उच्च माध्यमिक स्तर (Higher Secondary level)—शिक्षा आयोग (1964-66) के अनुसार इस स्तर पर छात्र मानसिक रूप से अधिक परिपक्व हो जाता है और वह प्रत्येक आर्थिक पद, नियम को क्यों, कब, कैसे आदि के आधार पर सूक्ष्म अतिसूक्ष्म विवेचन के उन्हें ग्रहण करना चाहता है। इस प्रकार वह स्वयं की अन्तर्दृष्टि द्वारा स्वावलम्बी बनने की ओर क्रियाशील हो जाता है। अत: इस स्तर पर वाणिज्य शिक्षण के अधोलिखित उद्देश्य होंगे-

(1) व्यवसायिक कुशलता का विकास।

(2) राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं का ज्ञान।

(3) वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास।.

(4) कुशल व्यवसायी, कुशल उपभोक्ता, उत्पादक, कुशल वितरक के गुणों को विकसित करना।

(5) उच्च शिक्षा के लिये तैयार करना।

(6) वाणिज्य सिद्धान्तों के नियमों को व्यवहार रूप में लाने की क्षमता उत्पन्न करना।

(7) विभिन्न विषयों के साथ समन्वय करने की क्षमता का विकास करना।

(8) आर्थिक नागरिकता का विकास।

(9) सहकारी भावना का विकास।

(10) व्यापक राष्ट्रीय दृष्टिकोण विकसित करना।

(11) मानसिक शक्तियों का विकास।

Scanned with CamScanner

(Explain values of commerce education.)

उत्तर - उच्चतर माध्यमिक स्तर पर वाणिज्य शिक्षण के बाद छात्रों में निम्नलिखित वांछनीय योग्यता का विकास होता है।

1. **वाणिज्य सम्बन्धित व्यवसायिक शिक्षा का ज्ञान (Knowledge of Vocational Eduacati related of Commerce)** - छात्रों को उच्चतर माध्यमिक स्तर तक वाणिज्य शिक्षा के द्व वाणिज्य सम्बन्धी व्यवसायिक ज्ञान प्राप्त हो जाता है। छात्रों में इस प्रकार की योग्यताओं का विक हो जाना चाहिए कि वे विभिन्न व्यवसायों जैसे- आशुलिपि, टंकण, बीमा, विज्ञापन, भंडार ग्रह, क्र विक्रय जैसे- व्यवसाय आराम से कर सके।

2. **भावी शिक्षा ग्रहण करने की योग्यता (Ability to Gain Future Education)** - हमारे देश वाणिज्य शिक्षा आज की सामान्य शिक्षा का अग है। यहां शिक्षा के व्यवसायिक दृष्टिकोण प अधिक बल नही दिया जाता अतः उच्चतर माध्यमिक स्तर तक वाणिज्य शिक्षा ग्रहण के बाद छात्र मे स्नातक तथा स्नाकोत्तर स्तर तक शिक्षा प्राप्त करने की योग्यताओं का विकास हो जाता है।

3. **उच्च व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त करने की योग्यता (Ability to Gain Higher Vocationa Education)** :- उच्चतर माध्यमिक स्तर तक वाणिज्य शिक्षा ग्रहण करने के पश्चात् छात्रों में उच्च व्यवासायिक शिक्षा जैसे व्यवसाय प्रशासन ICWA, व्यवसाय प्रबन्ध कार्यालय संगठन एवं प्रबन्ध आदि उच्च व्यवसायिक शिक्षा में प्रवेश पाने की योग्यताओं का विकास हो जाता है।

4. **उपयुक्त रोज़गार अपनाने की योग्यता (Ability to Adopt Proper Employment)** - उच्चतर माध्यमिक स्तर पर छात्रों को विभिन्न व्यवसायों जैसे कर्लक, टंकण, आशुलिपि बैंकिंग, बीमा, बाज़ार व्यवस्था व्यापार आदि के बारे में ज्ञान दिया जाता है। अतः छात्र किसी भी क्षेत्र में अपना व्यवसाय अपनी योग्यता एवं क्षमता के अनुरूप आरम्भ करके अपनी आजीविका आसानी से कमा सकता है।

5. **व्यवसाय परिवर्तन की योग्यता (Ability to Change the Vocations)** - वाणिज्य शिक्षा का एक उद्देश्य यह भी है कि मनुष्य आवश्यकता पड़ने पर अपने व्यवसाय को बदल सके। मनुष्य अपने जीवन काल में कई व्यवसाय बदलता है। ये बदलाव या तो नए आविष्कारों विधान में परिवर्तन या पदोन्नति के कारण आ सकते है। अतः उच्चतर माध्यमिक स्तर तक वाणिज्य शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् छात्रों को यह आशा की जाती है कि वे व्यवसाय परिवर्तन अपनी अनुकूलता के अनुसार कर लेगें और अपने आप को नई परिस्थितियों में अच्छी प्रकार से समायोजित कर सकेगें। उदाहरण के लिए यदि छात्र को बही खाता के आधारभूत सिंद्धान्त मालूम है तो अगर उसे खनन फार्म के लेखपाल की जगह डेरी फार्म का लेखपाल नियुक्त कर दिया जाए तो वह आसानी से समायोजन कर सकेगा।

6. **व्यावसायिक कौशलों के विकास का आधार (Base for Develoment of Vocational Skills)** - उच्चतर माध्यमिक स्तर तक वाणिज्य पढ़ने के पश्चात् छात्रों में सामान्य वाणिज्य कौशलों की योग्यताएं आ जाती है। ये विभिन्न कौशलों जैसे आय व्यय का हिसाब रखना बहीखाता लिखना लेखा जोखा रखना, डाक तार भेजना रेलवे पार्सल भेजना, बैंको में खाते खोलना, पैसा जमा करना

Scanned with CamScanner

व निकलवाना, जीवन बीमा करवाना आदि प्राप्त कर सकते है।

7. **छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास (Development of Scientific Attitude Among Students)** - छात्रों में उच्चतर माध्यमिक स्तर पर वाणिज्य के अध्ययन के द्वारा वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास होता है। और उसमें स्वतंत्र चिंतन एवं निर्णय लेने की क्षमता का भी विकास होता है। छात्रों में वैज्ञानिक ढंग से सोचने समझने व कार्यकाल की आदत का विकास होता है।

8. **जिम्मेदारी की भावना का विकास (Development of Sense of Responsibility)** - उच्चतर माध्यमिक स्तर तक वाणिज्य शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात छात्र जिम्मेदार नागरिक बन जाते है। उनमें विभिन्न सामाजिक उतरदायित्व की भावना जैसे ग्राहकों एवं उपभोक्ताओं, कर्मचारियों, अंशधारियों, या स्वामियों के प्रति सामाजिक उतरदायित्व की भावना का विकास होता है। स्कूलों में सहकारी कैंटिने, स्टोर तथा मिनी बैंको की जिम्मेदारी छात्रों को सौंपी जानी चाहिए।

9. **आर्थिक सुनागरिकता के विकास का आधार (Base for Economical Good Citizenship)** - कुशल उपभोक्ता कुशल उत्पादक कुशल वितरक एवं कुशल प्रशासक के गुणों का विकास करके आर्थिक सुनागरिकता के विकास में सहायक होता है किसी भी राष्ट्र की उन्नति वहाँ के नागरिकों पर निर्भर करती है जितना देश का नागरिक अपने क्षेत्र में कुशल होगा उतना ही राष्ट्र का समग्र विकास होगा। उच्चतर माध्यमिक स्तर तक वाणिज्य शिक्षण के पश्चात् छात्रों में आर्थिक सुनागरिकता का विकास होता है।

10. **छात्रों में मानवीय गुणों के विकास की योग्यता (Ability to Develop Human Values Among Students)** - वाणिज्य शिक्षण के पश्चात् छात्रों में मानवीय गुण जैसे सहकारिता, एकता सच्चरित्र, सहिष्णुता उदारता, मितव्ययता, सहानुभूति, ईमानदारी आदि मानवीय गुणों का विकास होता है। इन गुणों के विकास के परिणाम स्वरूप छात्रों में मानवता का विकास हो जाता है।

11. **वाणिज्य के ज्ञान का व्यक्तिगत जीवन में उपयोग का आधार (Base of Use of Knowledge of Commerce in Personal Life)** - उच्चतर माध्यमिक स्तर पर वाणिज्य का अध्ययन करने के पश्चात् छात्रों में उसको व्यक्तिगत जीवन में उपयोग करने की क्षमताओं का विकास हो जाता है। यह ज्ञान केवल सैंद्धांतिक नहीं रह पाता। उदाहरण के लिए छात्र बैंको में खाता खोलना, पैसा जमा करवाना व निकलवाना, पार्सल करना (तार भेजना) तथा मनीआर्डर फार्म या चेक आदि भरने में गलती नहीं करते। इस प्रकार वाणिज्य शिक्षण के पश्चात् छात्र में दैनिक जीवन में उपयोग की क्षमताओं तथा कुशलताओं का विकास हो जाता है।

वाणिज्य शिक्षण के अन्य मूल्य
(Values of Commerce Education)

1. **उपयोगी या व्यवहारिक मूल्य (Utilization or Practical Value)** - कोई भी विषय तभी महत्वपूर्ण माना जाता है जब वह व्यवहारिक रूप से उपयोगी हो विषय के अध्ययन को वर्तमान युग में अच्छे तथा समृद्ध जीवन व्यतीत करने में सहायक होना चाहिए। विद्यार्थी अध्ययन के लिए विषय का चयन अपनी रूचि तथा उसके मूल्य के आधार पर करते हैं। वाणिज्य का अध्ययन अथवा व्यक्गित जीवन तथा सम्पूर्ण समाज के लिए उपयोगी होता है कोई भी देश कवेल सामाजिक/सांस्कृतिक तथा राजनैतिक आधार पर ही विकसित नहीं बन सकता। अपितु इसके लिए व्यवसायिक विकास

Scanned with CamScanner

भी आवश्यक है। वाणिज्य में हम व्यवसाय उद्योग, प्रबंधन, संगठन, लेखाकर्म आदि से संबंधित क्रियाओं का अध्ययन करते है। वाणिज्य में वे सब क्रियाएँ सम्मिलित है जिनसे वस्तुओं को उत्पादन करने वालों से उपभोग करने वालों तक पहुँचाने में सहायता मिलती है जिनका उद्देश्य वस्तुओं के वितरण बाधाओं को दूर करना है। ये विद्यार्थियों में विभिन्न व्यवसायिक तथ्यों के प्रति चेतना उत्पन्न करता है। जैसे व्यापार कितने प्रकार का होता है। विभिन्न व्यवसायिक संस्थानों की प्रबंधन संरचना क्या है? बैंकिंग किस प्रकार से व्यापार में सहायक होती है। आदि आधुनिक युग विज्ञान का है आज के समय में कोई भी विद्यार्थी बिना किसी कारण के किसी भी तथ्य को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं होता। वाणिज्य अध्ययन चिंतन शक्ति को बढ़ता है इसको साथ-साथ विद्यार्थी यह भी सिखाता है कि जीवन वृद्धि व विकास की एक निरन्तर प्रक्रिया है और यह उस प्रक्रिया महत्वपूर्ण ढंग से भाग लेने तथा परिवर्तित वातावरण में समायोजन करने के योग्य बनाता है।

2. **नैतिक मूल्य (Moral Value)** - व्यवसाय को सुचारू रूप से चलाने के लिए नैतिक गुणों का है भी आवश्यक है। वाणिज्य शास्त्र में विद्यार्थी व्यवसायिक के नैतिक गुणों का अध्ययन करते है क्यों विभिन्न व्यापारियों में प्रतिस्पर्धी के साथ-साथ नैतिकता का होना आवश्यक है और प्रत्येक व्यवस का सुचारू संगठन भी उसके नैतिक मूल्यों पर आधारित होता है। वाणिज्य शास्त्र उदाहरणों पढ़ाया जाने वाला शास्त्र है जिससे हमें यह पता चलता है कि विभिन्न व्यवसायिक परिस्थितियों हमें कैसे आचरण करना चाहिए। वाणिज्य की विषय सामग्री हमें उचित व अनुचित में भेद का सिखाती है। यह व्यक्तित्व के विकास में सहायता करता है यह उन सभी गुणों का विकास कर है जो एक सुदृढ़ चरित्र के व्यक्ति के लिए आवश्यक है जैसे- स्पष्टता, ईमानदारी, सत्यता, विश्व कर्तव्यपरायणता, आत्मविश्वास, आत्मनिर्भरता, दूसरो का आदर आदि।

3. **व्यवसायिक मूल्य (Vocational Value)** - शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य है कि विद्यार्थी को इस यो बनाना कि वह अपनी आजीविका कमा सके तथा आत्मनिर्भर बन सके। इस उद्देश्य की पूर्ति वाणिज्य विषय का महत्वपूर्ण स्थान हैं। इसके अध्ययन से विद्यार्थी के लिए विभिन्न क्षेत्रों में रोज़ग के अवसर बढ़ जाते है जैसे, बैकिंग, प्रबंधन, बीमा, लेखाकर्म और क्षेत्र। वाणिज्य का ज्ञान एक व्यक्ति को व्यावसायिक वातावरण में समायोजन के योग्य बनाता है और वह अपनी आजीविका आसानी से कमा सकता है। अतः यह प्रत्येक व्यक्ति तथा समाज के जीवन में व्यावसायिक रूप से उपयोगी है और आर्थिक सुरक्षा के उद्देश्य की प्राप्ति में सहायक होता है।

4. **उपभोक्ताओं के लिए मूल्य (Value to Consumers)** - वाणिज्य महत्वपूर्ण है और उपभोक्ता के लिए उपयोगी भी है। उपभोक्ता अपने दैनिक जीवन की उपयोगी व आवश्यक वस्तुओं को वाणिज्य के ज्ञान के आधार पर ही प्राप्त कर सकते हैं। वाणिज्य का अध्ययन एक उपभोक्ता को इस योग्य बनाता है कि वह यह प्रशंसा कर सके कि मानव एक सामाजिक पशु है और समाजिक विकास में उसे अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभानी आवश्यक है। वाणिज्य उपभोक्ता को विभिन्न प्रकार की वस्तुओं की जानकारी देता है। विभिन्न प्रकार के करों की जानकारी देता है तथा वस्तुओं के विक्रय पर विज्ञापन के प्रभाव की जानकारी भी प्रदान करता है। विकसित और विकाशील देशों के विगत 50 वर्षों के अवलोकन से यह जानकारी मिलती है कि वहाँ के लोगों के जीवन स्तर में आशातीत वृद्धि हुई है। यह वहाँ के बढ़ते हुए व्यवसाय के स्तर का अनुमान है। बढ़ते हुए व्यवसाय ने रहन

Scanned with CamScanner

सहन के ढंग, उपभोग प्रवृत्ति, नवीन वस्तुओं के उपयोग के प्रति सजगता, उपभोग की कमी न खत्म होने वाली प्रबल इच्छाओं में अभिवृद्धि की है। व्यावसायिक परिवेश में ही लोग पिछड़ेपन से अधिक ऊँचे जीवन स्तर की तरफ बढ़ने में लगे हुए है।

. **व्यापारी के लिए मूल्य (Values of the Businessman)** - वाणिज्य का ज्ञान व्यापारी के लिए अत्यन्त जरूरी है वास्तव में वाणिज्य शिक्षा व्यवसायी को कुशल बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। जैसे वह बहुत सरलता से यह निश्चय कर सकता है कि किस प्रकार का व्यापार करना चाहिए? आदि सुसुक्त लघु आकार एवं धीमी गति से विकसित होने वाले व्यावसायिक एवं औद्योगिक धंधों में प्रबंधकीय ज्ञान व कौशल भी इन्ही के अनुरूप रहता हैं। इसमें न कोई चुनौती होती है और न ही विकास की कोई आवश्यकता होती है। लेकिन व्यापार, वाणिज्य व उद्योग में निरंतर बढ़ते रहने से नई क्षमताओं की आवश्यकता होती है और इनके द्वारा एक ऐसा वातावरण तैयार होता है कि जिसमें प्रबंधकीय ज्ञान एवं कौशल में वृद्धि होना स्वाभाविक है। व्यवसाय की आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं के अनुरूप श्रेष्ठ प्रबंधकीय ज्ञान कौशल व क्षमताएं सृजित होती है। इसी के फलस्वरूप जैसे- हमारे देश में व्यावसायिक संस्कृति का विकास हुआ है यहाँ उच्चतर स्तर के प्रबंधक भी तैयार हुए है। जो न केवल हमारे ही देश में अपितु विदेश में भी अपनी सेवाऐं दे रहे है।

6. **उत्पादकों तथा निर्माताओं के लिए मूल्य (Values to producers and manufactures)** - प्रत्येक उत्पादक तथा निर्माता के लिए व्यापार के आवश्यक नियमों तथा सिद्धान्तों की जानकारी प्राप्त करना आवश्यक है भारत में अनेक प्रकार के साधनों का बाहुल्य है। अनेक अर्थशास्त्रियों का ये मानना है कि इन संसाधनों का उचित विदोहन व उपयोग नही हो पाया है इस दिशा में व्यावसायिक क्रियाओं की जानकारी ही अधिक उपयोगी सिद्ध हो सकती है प्रत्येक व्यापारी के लिए आवश्यक है कि उसे व्यापार की सहायक क्रियाओं जैसे- बैंकिंग, बीमा, विज्ञापन, भंडारण, संदेश वाहन, यातायात, पैकेजिंग, स्कन्ध एवं उपज विप्पणन आदि के बारे में जानकारी हो क्योंकि इसी के आधार पर वे अपने व्यावसाय को विकास की ओर ले जा सकते है।

Scanned with CamScanner

(1) वाणिज्य एवं पुस्तपालन का सम्बन्ध
(Relationship between Commerce and Book-Keeping)

पुस्तपालन (Book-Keeping)

यह मुख्य रूप से लेखा पुस्तकें रखने से सम्बन्धित हैं। लेखा पुस्तकें रखने में निम्न चार क्रियाओं सम्मिलित किया जाता है :

1. विभिन्न लेन-देन में से ऐसे लेन-देन की पहचान (Identify) करना जो वित्तीय प्रकृति (Financial Nature) के हैं।
2. पहचान किए गए लेन-देनों को मुद्रा के रूप में मापना।
3. पहचान किए गए लेन-देनों की प्रारम्भिक लेखे की पुस्तकों में प्रविष्टि करना।
4. इनका खाताबही (Ledger) में वर्गीकरण करना।

पुस्तपालन का कार्य यांत्रिक प्रकृति का होता है और उसे व्यक्तियों द्वारा भी किया जा स

Scanned with CamScanner

है जिन्हें लेखांकन का सीमित ज्ञान हो। वर्तमान समय में यह कार्य कम्प्यूटर्स द्वारा किया जाने लगा है।

अतः हम जानते हैं कि वाणिज्य के अन्तर्गत व्यापार एवं उसकी सहायक क्रियायें आती हैं और इन सभी क्रियाओं का हिसाब-किताब रखना अति आवश्यक है क्योंकि कोई भी व्यवसायी उचित सूचना के अभाव में व्यवसायिक क्रियाओं को सुचारू रूप से क्रियान्वयन नहीं कर सकता है। सूचना के अभाव के कारण एक व्यवसायी को विभिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है। अतः इन समस्याओं का समाधान एकमात्र पुस्तपालन है जो विभिन्न अवस्थाओं में एक व्यवसायी को उचित एवं विश्वसनीय सूचना प्रदान करती है जो एक व्यवसायी के लिए उचित निर्णय लेने के लिए आवश्यक है। अतः इन सूचनाओं के आधार पर लिये गऐ निर्णय ही किसी व्यवसाय की उन्नति एवं असफलता का कारण होते हैं और ये निर्णय विश्वसनीय एवं समय अनुसार मिली सूचना पर निर्भर करते हैं। जो पुस्तपालन से प्राप्त होती हैं।

(2) वाणिज्य एवं व्यावसायिक संगठन का सम्बन्ध
(Relationship between Commerce and Business Organisation)

व्यावसायिक संगठन (Organisation of Business)

व्यावसायिक संगठन को जानने से पहले हमें व्यवसाय का अभिप्राय समझ लेना चाहिए। व्यवसाय उन समस्त क्रियाओं के योग को कहा जाता है जो लाभ कमाने के उद्देश्य से की जाती हैं। अतः व्यावसायिक संगठन से अभिप्राय इन सभी क्रियाओं को उनकी प्रकृति के आधार पर समूहीकरण करके सभी क्रियाओं को सुचारू रूप से क्रियान्वन करने से है। सभी व्यवसायिक उपक्रम इन विभिन्न प्रक्रियाओं को इनकी प्रकृति के आधार पर समूहीकरण करके इन क्रियाओं को विभिन्न विभागों में बांट देते हैं। जैसे हम किसी भी व्यवसायिक उपक्रम में विभिन्न विभागों के कार्यों को समझ सकते हैं। सभी व्यवसाय उपक्रमों में पाये जाने वाले मुख्य विभाग - 1. मानव संसाधन प्रबन्धन विभाग, 2. लेखाकंन विभाग, 3. उत्पादन विभाग, 4. विपणन विभाग एवं 5. क्रय विभाग आदि पाये जाते हैं, जो विभिन्न क्रियायें करते हैं। अतः इन विभागों का वर्गीकरण विभिन्न क्रियाओं की प्रकृति के आधार पर ही किया जाता है। जैसे - मानव संसाधन विभाग कर्मचारियों की भर्ती करता है और कर्मचारियों से सम्बन्धित अन्य कार्य करता है, लेखांकन विभाग व्यवसायिक उपक्रम के विभिन्न लेन-देनों का लेखा-जोखा रखता है, उत्पादन विभाग व्यवसायिक उपक्रम में उत्पादन से सम्बन्धित समस्त कार्य करता है, वाणिज्य विभाग व्यवसायिक उपक्रम द्वारा उत्पादित वस्तुओं के विपणन से सम्बन्धित अनेक कार्य करता है और क्रय विभाग उत्पादन के लिए कच्चे माल, एवं अन्य वस्तुओं की क्रय सम्बन्धित अनेक कार्य करता है।

अतः हम जानते हैं कि वाणिज्य के अन्तर्गत व्यापार एवं उसकी सहायक क्रियायें आती हैं और व्यावसायिक संगठन में भी मानव संसाधन, प्रबन्धन विभाग और उत्पादन विभाग को छोड़कर समस्त क्रियाऐं वाणिज्य से जुड़ी हुई हैं। एक व्यवसाय उपक्रम विभिन्न प्रकार की वस्तुऐं एवं सेवाओं का क्रय-विक्रय करता है जो वाणिज्य की विषय वस्तु में सम्मिलित की जाती हैं। अतः हम कह सकते हैं कि वाणिज्य व्यवसाय का ही एक अंग है। वाणिज्य के अभाव में व्यवसाय का उदय नहीं हो सकता है।

Scanned with CamScanner

(Relationship between Commerce and Economics)

अर्थशास्त्र (Economics)

अर्थशास्त्र से अभिप्राय उस शास्त्र से जिसके अन्तर्गत धन एवं धन से सम्बन्धित अनेक समस्या अध्ययन किया जाता है। धन से अभिप्राय उन समस्त सम्पत्तियों से जिन्हें मुद्रा में परिवर्तित कि सकता है। अतः अर्थशास्त्र में धन से सम्बन्धित विभिन्न क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। जो भी राज्य, देश, विश्व के लिए अति आवश्यक है क्योंकि इसके अभाव में कोई भी राज्य, देश आर्थिक स्थिति, विकास की दर, पिछड़ेपन से अवगत नहीं हो सकता है। अतः अर्थशास्त्र ही वह है जो एक राज्य एवं देश को उसकी वास्तविक आर्थिक स्थिति से अवगत करता है।

अतः हम जानते हैं कि वाणिज्य के अन्तर्गत व्यापार एवं उसकी सहायक क्रियायें आती है अर्थशास्त्र वह शास्त्र हैं जिसमें धन से सम्बन्धित क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। अतः हम सकते हैं कि वाणिज्य अर्थशास्त्र का ही एक भाग है क्योंकि वाणिज्य के अभाव में अर्थशास्त्र अध्ययन अधूरा है क्योंकि अर्थशास्त्र, वाणिज्यिक आर्थिक क्रियाओं के अध्ययन के बगैर उचित महत्वपूर्ण सूचना एकत्र ही नहीं कर सकता है क्योंकि एक देश की समस्त आर्थिक क्रियाऐं प्रत्यक्ष से वाणिज्य से ही जुड़ी होती है। अतः हम कह सकते हैं कि अर्थशास्त्र, वाणिज्य उचित दिशा करता है और वाणिज्य, अर्थशास्त्र के अध्ययन को पूरा करती है।

(4) वाणिज्य एवं समाजशास्त्र का सम्बन्ध

(Relationship between Sociology and Economics)

समाजशास्त्र (Sociology)

समाजशास्त्र से अभिप्राय उस शास्त्र से है जिसके अन्तर्गत विभिन्न मानव समूहों का अध्ययन जाता है इन मानव समूहों को ही समाज कहा जाता है जो अपने द्वारा निर्माण किये गये समूह के उत्तरदायी एवं कर्त्तव्यशील होते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि समाजशास्त्र में समाज से सम्ब अनेक समस्याओं का अध्ययन किया जाता है एवं उन समस्याओं के समाधान भी ढूंढे जाते हैं।

"समाजशास्त्र" शब्द अग्रेजी के Sociologey का हिन्दी रूपान्तरण है जो कि ग्रीक सोसियस (socious) तथा लोगोस (logos) दो शब्दों के योग से बना है। "सोसियस" शब्द का "समाज" तथा "लोगोस" शब्द का अर्थ है ज्ञान। इस समाज शास्त्र का शाब्दिक अर्थ हुआ "स का ज्ञान"।

समाज शास्त्र = सोसियस + लोगास
(समाज) (ज्ञान/विज्ञान)

जब भी समाजशास्त्र की व्याख्या होगी तो उसमें फ्रांस के प्रमुख विचारक 'सेंट साइमन तथा अगस्त का की भूमिका अविस्मरणीय है। अगस्त काम्टे ने ही समाज शास्त्र को नये आधार और दिशा प्रदान क में अथक व सफल प्रयास किये। उनके अकथनीय योगदान के कारण ही अगस्त काम्टे को समाज शा का 'जनक' कहा जाता है।

इस प्रकार समाज शास्त्र सामाजिक जीवन समूहो के परस्पर संबंधो तथ सामाजिक व्यवहार

Scanned with CamScanner

अध्ययन है। इस प्रकार स्पष्ट है कि सामाजिक को समझने क लिये समाज शास्त्र या सामाजिक समूहो, समुदायों और संस्थाओं का अध्ययन करता है।

अतः हम जानते हैं कि वाणिज्य के अन्तर्गत व्यापार एवं उसकी सहायक क्रियायें आती हैं और समाजशास्त्र वह शास्त्र है जिसमें समाज का अध्ययन किया जाता है। अतः वाणिज्य एक समाज के विकास में अहम भूमिका निभाता है और समाज वाणिज्य में अहम भूमिका निभाता है। ये एक-दूसरे के पूरक के रूप में कार्य करते हैं। जहाँ समाज वाणिज्यिक क्रियाओं को करता है वहीं पर इन वाणिज्यिक क्रियाओं के माध्यम से समाज की विभिन्न आर्थिक आवश्यकतायें पूरी होती हैं। अतः हम कह सकते हैं कि समाजशास्त्र एवं वाणिज्य शास्त्र में गहरा सम्बन्ध है। वाणिज्य समाज के अभाव में जीवित नहीं रह सकता है और समाज वाणिज्य के अभाव में विकसित एवं सुरक्षित नहीं रह सकता है।

(5) वाणिज्य एवं गणितशास्त्र का सम्बन्ध
(Relationship between Commerce and Mathematics)

गणितशास्त्र (Mathematics)

गणितशास्त्र से अभिप्राय उस शास्त्र से जिसके अन्तर्गत संख्याओं के माध्यम से विभिन्न क्रिया-कलाप करने सिखाये जाते हैं जो निश्चित क्रिया-कलाप करने पर एक उचित एवं निश्चित सूचना प्रदान करते हैं। अतः इन सूचनाओं के आधार पर व्यावहारिक विभिन्न समस्याओं का समाधान किया जाता है।

अतः हम जानते हैं कि वाणिज्य के अन्तर्गत व्यापार एवं उसकी सहायक क्रियायें आती हैं और गणितशास्त्र के अन्तर्गत जैसाकि हम जानते हैं संख्याओं के माध्यम से विभिन्न क्रिया-कलाप करने सिखाये जाते हैं जो निश्चित क्रिया-कलाप करने पर एक उचित एवं निश्चित सूचना प्रदान करते हैं। अतः ये सूचना मौद्रिक लेन-देनों से सम्बन्धित हो सकती हैं जो एक व्यवसायी को उचित निर्णय लेने में सहायक होती है। अतः हम कह सकते हैं कि गणितशास्त्र वाणिज्य की विभिन्न क्रियाओं को आसान और सुचारू रूप से क्रियान्वयन करने में सहायक है। गणितशास्त्र के आधार पर एक व्यवसायिक उपक्रम विभिन्न प्रकार के लेन-देन आसानी से कर सकता है।

(6) वाणिज्य एवं भूगोलशास्त्र का सम्बन्ध
(Relationship between Commerce and Geography)

भूगोल (Geography)

भूगोल अंग्रेजी भाषा के शब्द 'Geography' का हिन्दी रूपातरण है। जियोग्राफी (Geography) शब्द ग्रीक भाषा से उत्पन्न हुआ है और इसका शाब्दिक अर्थ है पृथ्वी के बारे में लिखना। भूगोल विषय केवल विदेशी स्थानों के वर्णन और देशों या राजधानियों के नामों को याद करने तक ही सीमित नहीं है। यह एक विस्तृत और व्यवस्थित अध्ययन है जो संसार की, उसकी मानवीय तथा भौतिक विशेषताओं की जगहों और स्थितियों के अध्ययन के आधार पर समझाता है। भूगोलशास्त्री अध्ययन करते हैं कि भौगोलिक रचनाएं कहां उवस्थित है और अपने वर्तमान स्वरूप के कैसे प्राप्त किया। भूगोल के दो महत्वपूर्ण उपविषय माने जाते हैं जो निम्न हैं -

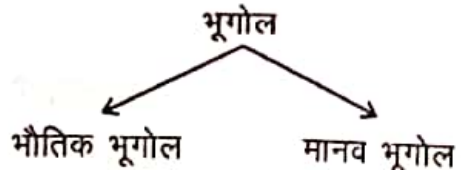

Scanned with CamScanner

भौतिक भूगोल - इस प्रकार के भूगोल में प्राकृतिक पर्यावरण वातावरण, भूगर्भ इत्यादि में प्रक्रियाओं और प्रारूपों का अध्ययन होता है।

मानव भूगोल - भूगोल का यह दूसरा उपविषय हैं। मानव भूगोल सांस्कृतिक पर्यावरण से होता है।

भूगोल की परिभाषाएँ (Definitions of Geography)

बहुत से लोग भूगोल को ऐसे क्षेत्रों के रूप में परिभाषित करते हैं जो केवल नक्शों से ह रखता है, परन्तु यह परिभाषा केवल आंशिक रूप से ही सही है। भूगोल की अधिक सही है 'प्राकृतिक और मानव निर्मित वस्तुओं का त्रिविमीय आयाम के संदर्भ में अध्ययन करन

भूगोल की सही परिभाषा देना कठिन कार्य है। फिर भी विभिन्न भूगोलशास्त्रियों ने विभिन्न परिभाषाएं दी हैं। जिनमें से कुछ निम्नलिलित हैं -

काण्ट तथा रिटर के अनुसार, "भूगोल वह विज्ञान है जिसमें पृथ्वी का मानव के घर के अध्ययन किया जाता है।"

जेम्स फेयरग्रीन के अनुसार, "भूगोल का कार्य भावी व्यक्तियों को इस प्रकार शिक्षित करना है वे विशाल विश्व मंच की परिस्थितियों की सही-सही कल्पना कर सकें और इस प्रकार आस-पास सामाजिक समस्याओं पर बुद्धिमतापूर्वक मनन करने में सहायता प्राप्त हो सके।"

हार्ट शार्न के अनुसार, "भूगोल में पृथ्वी, मानव तथा तथ्यों के पारस्परिक संबंध का अध्य होता है।"

स्ट्राबो ने भूगोल की एक परिभाषा दी, जो इस बात की सलाह देती है कि, भूगोल का उद्देश संसार के ज्ञात रूप से बसे हुए संसार का वर्णन करना और... विश्व के देशों के बारे में आंकलन लिखना ताकि देशों के बीच के अंतर को समझा जा सके।

अतः हम जानते हैं कि वाणिज्य के अन्तर्गत व्यापार एवं उसकी सहायक क्रियायें आती हैं; भूगोल शास्त्र विभिन्न स्थानों का उनकी प्रकृति के आधार पर अध्ययन किया जाता है जो वाणिज्य लिए महत्वपूर्ण सूचना प्रदान करता है। भूगोल शास्त्र के माध्यम से ही विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों सूचना प्राप्त की जाती है जो एक वाज्यिय क्रियाओं के उपयोग में लाया जा सकता है। भूगोल ज्ञा ही है जो वाणिज्य के लिए विभिन्न संसाधनों की पूर्ति एवं उनकी सूचना प्रदान करता है। अतः भूगोल सूचना के अभाव में कोई भी वाणिज्यिक क्रिया करना हानिकारक हो सकता है।

(7) वाणिज्य एवं सचिव कार्य का सम्बन्ध (Relationship between Commerce and Secretarial Practice)

सचिवाल्य कार्य (Secretarial Practice)

कम्पनी सचिव (Company Secretary) निजी क्षेत्र की कम्पनियों तथा सार्वजनिक क्षेत्र के संस्थान का एक उच्च पद है। यह प्रायः प्रबन्धक या उससे भी ऊँचा पद है। कम्पनी सचिव का दायित्व कम्पनी के दक्षतापूर्वक प्रबन्धन करना है किन्तु उसका मुख्य दायित्व यह सुनिश्चित करना है कि संस्था कम्पनी कानून का पालन करते हुए प्रगति करे। निदेशक मण्डल द्वारा लिए गये निर्णयों को लागू किए जायँ - यह सुनिश्चित करना भी उसका दायित्व है।

सी एस को एक कम्पनी के प्रधान अफसरों में से एक माना जाता है। ट्रेनिंग के दौरान सीखे हुए क्षेत्र के

Scanned with CamScanner

अनुसार वह अपना कार्य विभिन्न क्षेत्रों में दक्षता पूर्वक करता है जैसे फाइनेंस, अकाउन्टस, लीगल एडमिनिस्ट्रेशन एवं निजी डिविजन इत्यादि। अन्य कार्य क्षेत्र में सम्मिलित है- विधि सम्बन्धी जानकारी एवं कम्पनी सम्बन्धी सभी कार्य। 'बोर्ड ऑफ डायरेक्टर' की मीटिंग सम्बन्धि जानकारी, मीटिंग को आयोजित करने से लेकर सारे रिकार्ड तक सारी जिम्मेदारी सी. एस. की होती है। कम्पनी के आवश्यकतानुसार केन्द्र/राज्य सेल्स टेक्स, एक्साइज, लेबर एवं कार्पोरेट सम्बन्धि सभी तथ्य सी एस की जिम्मेदारियों में शामिल है। संस्था निवेश, प्रोजेक्ट स्वीकृति, लाइसेन्स एवं परमिट उपलब्ध करना एम आर टी पी (मोनोपाली एण्ड रेस्ट्रिक्टिव ट्रेड प्रेक्टिस एक्ट) और फेरा (फॉरिन एक्सचेंज रेगुलेशन एक्ट) से सम्बन्धी कार्य भी सी एस के कार्य क्षेत्र में आता है। कम्पनी के वार्षिक रिटर्न भी कम्पनी सी ए को ही भरने पड़ते हैं।

भारत में कम्पनी एक्ट के तहत न्यूनतम 50 लाख रू. लागत वाली कम्पनी को सी. एस. की आवश्यकता होती है।

अतः हम जानते हैं कि वाणिज्य के अन्तर्गत व्यापार एवं उसकी सहायक क्रियायें आती हैं और सचिवालय कार्य के अन्तर्गत सचिव एक व्यवसायिक उपक्रम के विभिन्न क्रियाकलाप, लेन-देनों में वैधता, बिक्री कर, उत्पादन शुल्क एवं कम्पनी को स्थापित करने के लिए सविच की अहम भूमिका होती है। सविच ही यह संस्था के सभी क्रियाकलापों की वैधता के लिए उत्तरदायी है और वाणिज्य संस्था की तरफ से जबावदेही है। अतः हम कह सकते हैं वाणिज्य सचिवालय के अभाव में कोई भी वाणिज्य संस्था नहीं चल सकती है।

(8) वाणिज्य एवं कानून का सम्बन्ध
(Relationship between Commerce and Law)

कानून (Law)

कानून से अभिप्राय उन समस्त प्रावधानों से है जो संसद एवं विधानसभाओं द्वारा लोगों की भलाई, उन्नति एवं विकास के लिए बनाये जाते हैं। जिनका उल्लेख संविधान में किया जाता है। जो विभिन्न क्रियों के लिए दिशा-निर्देशन देना, उन दिशा-निर्देशन के अनुसार कार्य होने के लिए सर्वेक्षण की व्यवस्था करना एवं इन दिशा-निर्देशनों के अनुसार न होने वाली क्रियाओं के नियंत्रण की प्रणाली का उल्लेख करते हैं।

अतः हम जानते हैं कि वाणिज्य के अन्तर्गत व्यापार एवं उसकी सहायक क्रियायें आती हैं और कानून के अन्तर्गत विभिन्न प्रावधान आते हैं जो किसी भी कार्य को वैधता के अनुसार होने के लिए बनाये जाते हैं। वाणिज्य में भी अनेक क्रियाएं की जाती हैं जो वैध होनी अनिवार्य हैं क्योंकि कानून के अभाव में वाणिज्यिक उपक्रम अपने लाभ को बढ़ाने के लिए लोगों के साथ अनुचित व्यवहार कर सकती हैं। इस व्यवहार को रोकने के लिए कानून की भूमिका महत्वपूर्ण है। कानून न केवल लोगों की भलाई करता है बल्कि वाणिज्यिक संस्थाओं के विकास के लिए भी अनेक प्रावधान बनाता है जो वाणिज्यिक उपक्रम के विकास में सहायक होते हैं।

Scanned with CamScanner

Unit - II

शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण एवं पाठ्य योजना

[Pedagogical Analysis and Lesson Planning]

Scanned with CamScanner

प्रश्न-1. लेखाकर्म क्या है? इसकी विस्तारपूर्वक व्याख्या करो।
(What do you mean by accountancy? Describe in detail.)

उत्तर - लेखाकर्म (Accountancy)

लेखाकर्म वाणिज्य के क्षेत्र में सबसे महत्वपूर्ण विषय है। इसे व्यवसाय की भाषा माना गया है। साधारणतया पुस्तपालन, लेखाकर्म तथा लेखाकन पर्यायवाची शब्दों के रूप में प्रयोग किए जाते हैं जबकि इनमें अन्तर पाया जाता है। लेखांकन अथवा लेखाकर्म का उदय मनुष्य की स्मृति के यंत्र में हुआ है प्रत्येक व्यापारी, फर्म अथवा कंपनी अपने व्यावसायिक लेन-देनों के आधार पर अपने द्वारा एक वर्ष की वित्तीय अवधि में अर्जित लाभ एवं हानि का पता लगाती है प्रत्येक व्यावसायिक इकाई प्रतिवर्ष यह ज्ञात करना चाहती है कि उसकी वित्तीय स्थिति कैसी है? उसकी पूंजी में वृद्धि हुई या कमी? इस तथ्य की जानकारी लेखांकन से प्राप्त होती है। लेखांकन उन लेन-देनों व धारणाओं जोकि वित्तीय प्रकृति के हैं जो लिखने व अभिलेख करने की कला है ताकि उसका वर्गीकरण किया जाए व उसका सारांश बनाया जाए। जिससे उसके परिणामों को व्यक्त किया जाए। अतः प्रत्येक व्यावसायिक इकाई (Business Unit) प्रतिवर्ष यह ज्ञात करना चाहती है कि उसकी वित्तीय स्थिति कैसी है? उसकी पूँजी में वृद्धि हुई? अथवा कमी हुई है प्रत्येक व्यावसायिक इकाई को इस तथ्य की जानकारी एवं सूचना लेखांकन (Accounting) से प्राप्त होती है।

लेखाकर्म की आवश्यकता (Need for Accountancy)

सभी व्यवसायी प्रति वर्ष यह जानना चाहते हैं कि उन्हें उस वर्ष कितनी लाभ-हानि हुई, वर्ष के अन्त में व्यवसाय में कितनी पूँजी लगी हुई है, उन्हें किस-किस व्यवसायी को कितना-कितना रुपया देना है और किससे कितना-कितना रुपया लेना है। इन सूचनाओं को प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि वह वर्ष के दौरान किए गए प्रत्येक व्यावसायिक लेन-देन का पूर्ण एवं नियमानुसार लेखा करे।

प्रत्येक व्यावसायिक लेन-देन का पूर्ण एवं नियमानुसार लेखा करने से व्यवसायी यह जान सकता है कि उसने वर्ष के दौरान कितना माल क्रय किया, कितना विक्रय किया, उसके कुल कितने व्यय हुए एवं उसकी क्या शुद्ध लाभ-हानि हुई। इसके अतिरिक्त उसे अपने व्यापार की आर्थिक स्थिति के बारे में जानकारी प्राप्त हो सकती है, जैसे कि वर्ष के अन्त में उसकी पूँजी क्या है और यह किन-किन सम्पत्तियों में लगी हुई है। उसे किस-किस व्यवसायी से कितना-कितना रुपया लेना है और किसे कितना-कितना रुपया देना है। यही नहीं, बल्कि उचित प्रकार से रखे गए लेखे आयकर एवं बिक्रीकरण के निर्धारण में भी सहायक होते हैं तथा आवश्यकता पड़ने पर न्यायालय में प्रमाण के रूप में भी मान्य होते हैं।

आज के युग में व्यावसायिक लेखों का महत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। अब ये लेखे व्यवसायी को यह सूचना भी प्रदान करते हैं कि माल की लागत क्या है? इस समय जो लागत आ रही है वह ठीक है या अधिक है? यदि इस लागत को कम किया जा सकता है तो किस प्रकार से कम किया जाए? उत्पादन लागत के आधार पर माल का विक्रय मूल्य क्या होना चाहिए? इस प्रकार लेखांकन से प्राप्त इन सूचनाओं के आधार पर व्यवसाय के स्वामी अनेक महत्वपूर्ण निर्णय ले सकते हैं।

लेखाकर्म का अर्थ (Meaning of Accountancy)

लेखांकन के अन्तर्गत व्यावसायिक लेन-देनों की पहचान करना (Identifying), उन्हें लिखना

Scanned with CamScanner

(Recording), वर्गीकृत करना (Classifying) (Interpreting) करना सम्मिलित है जिससे व्यवसाय सम्बन्धी निर्णय लेने में आसानी होती है। लेखापाल (Accountant) का कार्य है। इसके लिए विशेष योग्यता की आवश्यकता होती है। में पुस्तपालन से आगे का कार्य शामिल होता है।

लेखांकन की परिभाषाएँ (Definitions of Accounting)

आर.एन. एन्थोनी के अनुसार - "प्रायः प्रत्येक व्यावसायिक इकाई में एक लेखा प्रणाली होती है। प्रणाली व्यवसाय से सम्बन्धित सूचनाओं को मौद्रिक रूप में एकत्र करने, सारांश बनाने, विश्लेषण तथा जानकारी देने का साधन है।"

अमेरिका की सर्टिफाइड पब्लिक एकाउन्टेंट्स संस्था के अनुसार - "लेखांकन एक कला है, द्वारा वित्तीय लेन-देनों एवं घटनाओं को मुद्रा के रूप में लिखा जाता है तथा उन्हें महत्वपूर्ण वर्गीकृत करके उनके परिणामों से निष्कर्ष निकाले जाते हैं।"

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि लेखाकर्म एक कला एवं विज्ञान है जिसमें पुस्तपालन अन्तर्गत बनाये गये अभिलेखों को पुनः क्रमबद्ध किया जाता है, इन पर आधारित विवरण तै किये जाते हैं तथा उन्हें व्यवसाय पर पड़ने वाले प्रभावों की व्याख्या की जाती है।

लेखांकन को हम निम्न शब्दों में स्पष्ट कर सकते हैं -

"लेखांकन विज्ञान को व्यावहारिक रूप से प्रयोग करना लेखांकन कहलाता है।"

लेखांकन प्रक्रिया को निम्नलिखित प्रकार से व्यक्त किया जा सकता है -

लेखांकन प्रक्रिया की व्याख्या निम्नलिखित प्रकार से है -

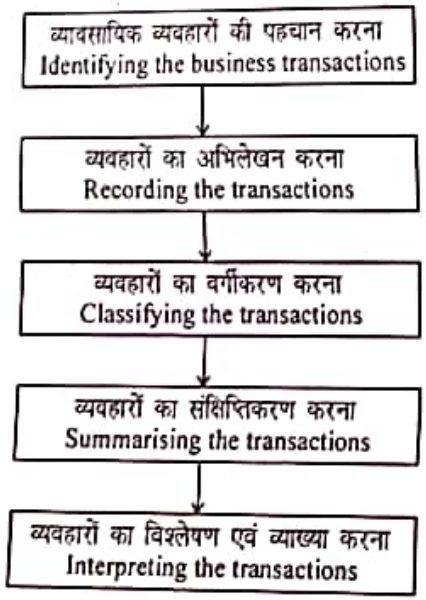

1. **व्यावसायिक व्यवहारों की पहचान करना (Identifying the Business Transactions)** – लेखा पुस्तक में केवल उन्हीं व्यवहारों का लेखा किया जाता है जिन्हें मुद्रा में व्यक्त किया गया हो तथा जिनके प्रलेखीय सबूत (Documents/Vouchers) उपलब्ध हों। जैसे माल का क्रय व विक्रय, तथा भुगतान, वेतन, मजदूरी व भाड़े का भुगतान आदि। ऐसे व्यवहारों को लेखा पुस्तकों में लिखा जायेगा। जबकि मालिकों और मजदूरों के मध्य सम्बन्ध, औद्योगिक झगड़े, हड़तालें, नये प्रतियोगितयों का बाजार में आना आदि घटनाओं का लेखा नहीं किया जाता है, क्योंकि इन्हें मुद्रा में व्यक्त नहीं किया जा सकता।

2. **व्यावसायिक व्यवहारों का अभिलेखन करना (Recording the Transactions)** – लेखांकन व्यावसायिक व्यवहारों को नियमों के अनुसार पुस्तकों में लिखने की कला है। छोटे व्यापारी अपने सभी लेन-देन पहले रोज़नामचे में लिखते हैं जबकि बड़े व्यापारी सहायक बहियों (Subsidiary Books) का प्रयोग करते हैं। बड़े आकार के व्यवसायों में लेखे करने के लिये लेखांकन मशीनों तथा कम्प्यूटरों का प्रयोग किया जाता है।

3. **व्यावसायिक व्यवहारों का वर्गीकरण करना (Classifying the Business Transactions)** – रोजनामचे में लेखा करने के पश्चात् एक जैसी प्रकृति के व्यवहारों को खातों (Accounts) के अनुसार वर्गीकृत किया जाता है। इसके लिये जिस पुस्तक का प्रयोग किया जाता है उसे खाताबही (Ledger) करते हैं। प्रत्येक मद का अगल से खाता खोला जाता है जैसे - क्रय खाता, विक्रय खाता, फर्नीचर खाता, मजदूरी खाता, वेतन खाता आदि।

4. **व्यवहारों का संक्षिप्तीकरण करना (Summarising the Business Transactions)** – लेखांकन के अन्तर्गत प्रत्येक वर्ष के अन्त में व्यवसाय द्वारा अर्जित लाभ तथा व्यवसाय की वित्तीय स्थिति को जानने के लिए खाताबही के सभी खातों के शेष निकाले जाते हैं, इन शेषों के आधार पर तलपट (Ledger) तैयार किया जाता है, और अन्त में तलपट तथा अन्य सूचनाओं की सहायता से अन्तिम खाते (Final Accounts) तैयार किये जाते हैं जिनमें व्यापारिक खाता (Trading Account), लाभ-हानि खाता (Profit and Loss Account) तथा स्थिति विवरण शामि (Balance Sheet) होते हैं।

5. **व्यवहारों का विश्लेषण तथा व्याख्या करना (Interpreting the Transaction)** – लेखांकन अन्तिम खातों को इस प्रकार से (व्यापारिक खाता, लाभ-हानि खाता तथा बैलेंस शीट) प्रस्तुत वि जाता है कि जिससे व्यवसाय में हित रखने वाले सभी पक्षकार जैसे व्यवसाय का स्वामी, बैंक लेनदार, सरकार, विनियोजकों कर्मचारियों आदि सभी को व्यवसाय की पूरी जानकारी प्राप्त हो स

उपरोक्त विवेचना के आधार पर लेखांकन को निम्नलिखित प्रकार से व्यक्त किया जा स है - लेखांकन व्यावसायिक व्यवहारों को जो कि वित्तीय प्रकृति के हों उनकी पहचान करने, प्रभावशाली ढंग से लिखने, वर्गीकृत करने तथा सारांश रूप में व्यक्त करने एवं उनके परिणाम व्याख्या करने की कला है।

लेखाकर्म की विशेषताएँ (Characteristics of Accountancy)

लेखांकन की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित हैं (Characteristics or Features or attributes) प्रकार हैं -

1. **केवल वित्तीय प्रकृति के लेन-देनों का लेखा करना (Recording of Financial Transa only)** – लेखांकन में केवल उन्हीं लेन-देनों एवं घटनाओं को पुस्तकों में लिखा जाता है वि

Scanned with CamScanner

में व्यक्त किया जा सकता है। व्यवसाय में अपना ...
व्यवसाय के लिए बहुत महत्वपूर्ण होती हैं परन्तु उन्हें मुद्रा में नहीं मापा जा सकता है। अ... लेन-देन का लेखा नहीं किया जाता। जैसे कि उत्पादन प्रबन्धक तथा विक्रय प्रबन्धक में झग... जाना, योग्य एवं अनुभवी प्रबन्धक का त्याग-पत्र दे देना, कर्मचारियों द्वारा हड़ताल कर देना, ... नये प्रतियोगी द्वारा हमारे जैसा व्यवसाय स्थापित करना इत्यादि। इन घटनाओं से व्यवसाय को ... तो अवश्य होगी परन्तु कोई भी व्यक्ति यह नहीं बता सकता कि इनसे व्यवसाय को मुद्रा ... में कितनी हानि होगी और कब होगी। अतः इस प्रकार की घटनाओं का व्यवसाय की पुस्त... कोई लेखा नहीं किया जाता।

2. **अभिलेखन (Recording)** - लेखांकन व्यावसायिक लेन-देनों को कुछ निश्चित नियमों के अ... पुस्तकों में लिखने की कला है। छोटे व्यवसायों में जहाँ लेन-देन की संख्या बहुत कम हो... समस्त लेन-देनों को सर्वप्रथम रोजनामचे (Journal) में लिखते हैं जबकि बड़े व्यवसायों में ... लेन-देनों की संख्या अधिक होती है जर्नल को सहायक बहियों (Subsidiary Books) में विभ... कर लिया जाता है। जैसे कि (1) नकद लेन-देन को लिखने के लिए रोकड़ बही (Cash Bo... (2) माल के उधार क्रय के सौदों को लिखने के लिए क्रय बही (Purchases Book), (3) ... के उधार विक्रय के सौदों को लिखने के लिए विक्रय बही (Sales Book), (4) उधार क्रय वा... को लिखने के लिए क्रय वापसी बही (Purchase Return Book), (5) उधार विक्रय वापसी ... लिखने के लिए विक्रय वापसी बही (Sales Return Book) आदि। सहायक बहियों की स... व्यवसाय के आकार और प्रकृति पर निर्भर करती है।

3. **वर्गीकरण करना (Classifying)** - जर्नल अथवा सहायक बहियों में लेन-देनों के लिखने... पश्चात् उनका वर्गीकरण किया जाता है। वर्गीकरण का अर्थ है - एक ही प्रकृति के लेन-देन ... एक ही जगह एक खाते में लिखना। जिस पुस्तक में खातों को खोला जाता है उसे खात... (Ledger) कहते हैं। खाताबही में व्यवसाय से सम्बन्धित सभी व्यक्तियों के लिए अलग-अ... खाता खोला जाता है चाहे वह हमारे ग्राहक हों अथवा माल सप्लाई करने वाले हों। इसी प्र... क्रय-विक्रय, सम्पत्तियों आदि के लिए भी अलग-अलग खाते बनाए जाते हैं। जर्नल में लिखी ... सभी आयों और व्ययों को भी खाताबही (Ledger) में अलग-अलग शीर्षकों में वर्गीकृत किया ज... है जैसे - मजदूरी खाता, वेतन खाता, विज्ञापन व्यय खाता, कमीशन खाता आदि।

4. **सारांश (Summarising)** - सारांश तैयार करना एक ऐसी कला है जिसके अन्तर्गत वर्गीकृत कि... गए आंकड़ों को इस ढंग से पेश किया जाता है कि वह प्रबन्धकों एवं अन्य व्यक्तियों की सम... में आ जाएं और उनके लिए उपयोगी सिद्ध हों। इसके लिए खाताबही के समस्त खातों के शे... निकाले जाते हैं एवं उनकी सहायता से तलपट (Trial Balance) तैयार किया जाता है। तलप... की सहायता से अन्तिम खाते तैयार किए जाते हैं जिनमें व्यापारिक खाता (Trading Account) लाभ-हानि खाता (Profit and Loos Account) तथा स्थिति विवरण (Balance Sheet) सम्मिलि... होते हैं। व्यापारिक खाता वर्ष के दौरान हुए सकल (कुल) लाभ या सकल हानि को जानने के लि... बनाया जाता है। लाभ-हानि खाता वर्ष के दौरान हुए शुद्ध लाभ या शुद्ध हानि को जानने के लि... बनाया जाता है और स्थिति विवरण व्यवसाय की वित्तीय स्थिति प्रदर्शित करने के लिए बनाया जाता है। ऊपर वर्णन की गई लेखांकन की विशेषताओं को लेखांकन की प्रक्रिया (Accounting Process) अथवा लेखांकन चक्र भी कहते हैं -

लेखांकन चक्र
(Accounting Cycle)

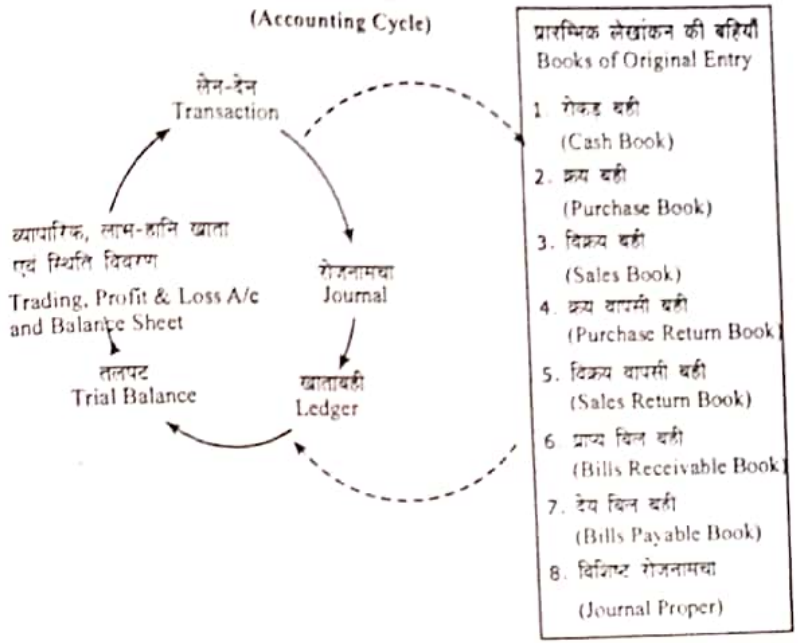

ऊपर बनाया गया चित्र लेखांकन के चक्र को प्रकट करता है। यह चक्र व्यावसायिक लेन-देनों के जर्नल या सहायक बहियों में लेखा करने से आरम्भ होता है तथा खाताबही एवं तलपट से होकर अन्तिम खातों (व्यापारिक खाता, लाभ-हानि खाता तथा स्थिति विवरण) पर समाप्त होता है। यह चक्र प्रायः एक हिसाबी वर्ष अथवा एक वर्ष में पूरा होता है और प्रत्येक हिसाबी वर्ष में फिर दोहराया जाता है।

5. **मुद्रा के रूप में लेखा करना (Recording in terms of Money)** - पुस्तकों में प्रत्येक लेन-देन का मुद्रा के रूप में ही लेखा किया जाता है जैसे कि एक व्यवसायी ने 200 कुर्सियाँ व 10 मेजें खरीदीं तो इनका मुद्रा के रूप में जो मूल्य होगा उसी का लेखा किया जाएगा। इसी प्रकार यदि संस्था के पास 5,000 रु. नकद, 2,000 मीटर भूमि, 5 ट्रक, 5 मशीनें, 10 टन कच्चा माल, 200 कुर्सियाँ व 10 मेजें हैं तो मुद्रा में मापे बिना ये संख्याएँ एक स्थान नहीं जोड़ी जा सकती हैं और इनसे कोई उपयोगी सूचना प्राप्त नहीं हो सकती। परन्तु यदि इन्हें मुद्रा के रूप में व्यक्त किया जाए तो यह तुरन्त ही उपयोगी सूचनाएं प्रदान करेंगी जैसे - 5,000 रु. नकद, भूमि 4,00,000 रु, ट्रक 10,00,000 रु., मशीनें 2,00,000 रु, माल 1,00,000 रु., कुर्सियाँ 10,000 रु. व मेजें 5,000 रु.।

6. **परिणामों की व्याख्या (Interpretation of the Results)** - लेखांकन में व्यवसाय के परिणामों को (व्यापारिक खाता, लाभ-हानि खाता तथा स्थिति विवरण बनाकर) इस ढंग से प्रस्तुत किया जाता है कि व्यवसाय में हित रखने वाले सभी पक्षकार जैसे व्यवसाय का स्वामी, प्रबन्धक, बैंकर्स, लेनदार, कर्मचारी आदि व्यवसाय की लाभप्रदता और वित्तीय स्थिति के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त कर लेते हैं।

Scanned with CamScanner

लेखाकर्म के कार्य (Functions of Acco...

लेखाकर्म के कार्य अथवा उपयोगिता (Utility) निम्नलिखित हैं -

1. **व्यावसायिक लेन-देन के नियमित लेखे रखना (To Keep Systematic Rocord of Busin... Transactions)** - लेखाकर्म का सर्वप्रथम उद्देश्य सभी व्यावसायिक लेन-देन का पूर्ण एवं नि... के अनुसार लेखा रखना है। लेन-देनों का पूर्ण रूप से नियमों के अनुसार लेखा करने से भूल... सम्भावना नहीं रहती तथा छल-कपट से बचाव में सहायता मिलती है। इसके लिए सभी लेन-दे... का पहले जर्नल में अथवा सहायक बहियों में लेखा किया जाता है और फिर खाताबही (Ledge... में खतौनी की जाती है।

2. **लाभ अथवा हानि की गणना करना (To Calculate Profit or Loss)** - लेखाकर्म का दूस... प्रमुख उद्देश्य यह ज्ञात करना है कि एक निश्चित अवधि के अन्त में व्यावसायिक लेन-देन... आधार पर व्यवसाय में क्या लाभ-हानि हुई? इसके लिए प्रत्येक लेखांकन अवधि के अन्त में व्यव... का व्यापारिक (Trading) एवं लाभ-हानि खाता (Profit and Loss Account) बनाया जाता है... व्यापारिक एवं लाभ-हानि खाते में व्यवसाय के समस्त क्रय, विक्रय, आय-व्ययों को लिखा जाता है... यदि व्यवसाय की आय व्यवसाय के व्ययों से अधिक है तो शुद्ध लाभ होता है और इसके विपरी... यदि व्यवसाय के व्यय व्यवसाय की आयों से अधिक हैं तो शुद्ध हानि होती है। व्यापारिक ए... लाभ-हानि खाता बनाने से व्यवसायी को निम्नलिखित बातों का भी ज्ञान हो जाता है -

   1) एक निश्चित अवधि में उसने कुल कितना माल क्रय किया?

   2) एक निश्चित अवधि में उसने कुल कितना माल विक्रय किया?

   3) वर्ष के अन्त में कितना माल बचा हुआ है तथा उसका मूल्य कितना है?

   4) किन-किन मदों पर कितना-कितना व्यय हुआ है और किन-किन मदों से कितनी-कितनी आय हुई है?

   इन सूचनाओं के मिलने से व्यवसायी अनावश्यक व्यय पर नियंत्रण रख सकता है।

3. **शुद्ध लाभ अथवा शुद्ध हानि के कारणों का सही-सही पता लगाना।**

4. **व्यवसाय की वित्तीय स्थिति ज्ञात करना (To Ascertain the Financial Position of the Business)** - एक व्यवसायी के लिए किसी व्यवसाय के लाभ या हानि जानना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि उसके लिए व्यवसाय की वित्तीय स्थिति जानना भी अति आवश्यक है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए वर्ष के अन्त में लाभ-हानि खाता बनाने के बाद एक स्थिति विवरण या चिट्ठा (Balance Sheet) तैयार किया जाता है जिसमें एक तरफ व्यवसाय की सभी सम्पत्तियाँ तथा इनके मूल्य लिखे जाते हैं तथा दूसरी तरफ दायित्व तथा पूँजी लिखी जाती है। स्थिति विवरण वास्तव में व्यवसाय की वित्तीय स्थिति का सही चित्र (Screen Picture) है। इस पर दृष्टि डालते ही कोई भी व्यक्ति निम्नलिखित जानकारी प्राप्त कर सकता है -

   क) व्यवसाय को किस-किस व्यक्ति से कितना-कितना रुपया लेना है अर्थात् व्यवसाय के कुल देनदार (Debtors) कितने हैं?

   ख) व्यवसाय ने किस-किस व्यक्ति को कितना-कितना रुपया देना है अर्थात् व्यवसाय के कुल लेनदार (Creditors) कितने हैं?

   ग) व्यवसाय के पास (अ) नकद शेष, (ब) बैंक शेष, (स) अन्तिम रहतिया और (द) स्थायी सम्पत्तियाँ कितनी हैं?

5. **व्यवसाय की प्रति वर्ष की प्रगति ज्ञात करना।**

6. **अशुद्धियों और कपट को रोकना तथा इनका पता लगाना।**

7. **विभिन्न पक्षकारों को सूचनाएं प्रदान करना (To Provide Informations to Various Parties)** - लेखांकन का एक अन्य महत्वपूर्ण उद्देश्य व्यवसाय में हित रखने वाले विभिन्न पक्षकारों को लेखांकन सूचनाएँ प्रदान करना है। ये पक्षकार हैं व्यवसाय के स्वामी, विनियोक्ता, लेनदार, बैंक, कर्मचारी और सरकारी अधिकारी आदि। ये सूचनाएँ उन्हें व्यावसायिक संस्था के बारे में सही और विवेकपूर्ण निर्णय लेने में सहायता करती है।

लेखाकर्म के क्षेत्र (Scope of Accountancy)

आधुनिक प्रबन्ध को अपने कार्यों को अधिक कुशलतापूर्वक सम्पादन करने के लिए विभिन्न प्रकार की सूचनाओं की आवश्यकता होती है। प्रबन्ध की बढ़ती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए लेखांकन की विशिष्ट शाखाओं का विकास हुआ है जैसे कि वित्तीय लेखांकन (Financial Accounting), लागत लेखांकन (Cost Accounting), प्रबन्धकीय लेखांकन (Management Accounting), कर लेखांकन (Tax Accounting), सामाजिक दायित्व लेखांकन (Social Responsibility Accounting) इत्यादि। ये शाखाऐं (Branches) निम्नलिखित प्रकार हैं -

1. **वित्तीय लेखांकन (Financial Accounting)** - लेखांकन की इस शाखा का मुख्य उद्देश्य व्यावसायिक लेन-देनों का नियमानुसार लेखा करना, लाभ-हानि खाता बनाकर लेखांकन अवधि के लाभ-हानि को ज्ञात करना और स्थिति विवरण बनाकर व्यवसाय की वित्तीय स्थिति को प्रकट करना है। लेखांकन की यह शाखा प्रबन्धकों एवं व्यवसाय में हित रखने वाले अन्य पक्षकारों को उनके द्वारा वांछित सूचनाएं प्रदान करती है।

2. **लागत लेखांकन (Cost Accounting)** - लागत लेखांकन का प्रमुख उद्देश्य व्यवसाय द्वारा उत्पादित वस्तुओं और प्रदान की गई सेवाओं की कुल लागत और प्रति इकाई लागत ज्ञात करना है। इसमें लागत का पूर्वानुमान भी लगाया जाता है और यह प्रबन्धकों को लागत नियन्त्रण लागू करने में भी सहायक होती है।

3. **प्रबन्धकीय लेखांकन (Management Accounting)** - प्रबन्धकीय लेखांकन का प्रमुख उद्देश्य लेखांकन सूचनाओं को इस प्रकार प्रस्तुत करना है जिससे प्रबन्ध को किसी व्यवसाय की क्रियाओं की योजना बनाने और नियंत्रण करने में सहायता मिले। प्रबन्धकीय निर्णयन के लिए लेखांकन आँकड़ों को अधिक उपयोगी बनाने के लिए प्रबन्धकीय लेखाकार विभिन्न तकनीकों तथा अवधारणाओं का प्रयोग करता है। इन तकनीकों में अनुपात विश्लेषण, बजटरी नियन्त्रण, कोष प्रवाह विवरण, रोकड़ प्रवाह विवरण आदि सम्मिलित हैं।

4. **कर लेखांकन (Tax Accounting)** - लेखांकन की वह शाखा जो कर निर्धारण के उद्देश्य के लिए प्रयोग की जाती है कर लेखांकन कहलाती है। इस लेखांकन के आधार पर आयकर और बिक्री कर

Scanned with CamScanner

की गणना की जाती है।

5. **सामाजिक दायित्व लेखांकन (Social Responsibility Accounting)** – समाज के व्यवसाय को ऐसा सुव्यवस्थित ढाँचा और सुविधाएँ प्रदान की जाती हैं जिनके बिना व्यवसाय चलाया ही नहीं जा सकता। अतः व्यवसाय का भी समाज के प्रति दायित्व है। व्यवसाय द्वारा स को जो सेवाएं प्रदान की जाती है अब उन सेवाओं की रिपोर्ट की मांग बढ़ती जा रही है। सामाजि दायित्व लेखांकन वह प्रक्रिया है जो व्यवसाय द्वारा समाज के प्रति की गई सेवाओं की पहचान क है, उन्हे मापती है और उनके विषय में सूचना प्रदान करती है। व्यवसाय द्वारा समाज को प्र की गई सेवाओ में निम्न वर्ग को रोजगार प्रदान करना, पब्लिक प्रोग्रामों के लिए वित्तीय और संसाधन प्रदान करना, वातावरण स्वच्छ रखने में सहायता प्रदन करना, उत्पाद सुरक्षा, टिक उत्पाद बनाना, ग्राहक संतुष्टि इत्यादि सम्मिलित हैं। सामाजिक दायित्व लेखांकन के अन्तर्गत सेवाओ की लागत और समाज को इनसे होने वाले लाभ को मापने के लिए तकनीकों का विक किया गया है।

लेखाकर्म – एक सूचना स्रोत (Accountancy as Source of Information)

लेखांकन को प्रायः व्यवसाय की भाषा (Language of Business) कहा जाता है। क्योंकि भाषा मुख्य उद्देश्य संवहन के साधन के रूप में कार्य करना है लेखांकन भी व्यवसायिक क्रियाओं के परिणा को प्रबन्धकों, स्वामियों, विनियोक्ताओं, लेनदारों, बैंकर्स, सरकार आदि को संवहन करता है। एक सूच अवधि के रूप में लेखांकन एक ऐसी प्रक्रिया है जो व्यवसायिक सूचना की पहचान, माप, अभिलेख सारांश और संवहन द्वारा इन सूचनाओं को इनमें हित रखने वाले पक्षकारों तक पहुंचाती है। प्रत्ये व्यवसाय में अनेक पक्षकार भिन्न-भिन्न उद्देश्यों से रुचि रखते हैं।

लेखाकर्म सूचनाओं के उपयोगकर्ता या रुचि रखने वाले पक्षकार और उनकी आवश्यकता (Users of Accountancy Information or Interested Parties in Accounting and their Needs)

लेखांकन सूचनाऐं ऐसे बहुत से पक्षकारों द्वारा उपयोग की जाती हैं जिनका व्यावसायिक संस्था से संबंध है। वह इन सूचनाओं का उपयोग अपनी विभिन्न प्रकार की आवश्यकताओं की संतुष्टि के लि करते हैं। इन उपयोगकर्ताओं को दो भागों में वर्गीकृत किया जा सकता है। (1) आंतरिक उपयोगकर्ता (Internal Users), एवं (2) बाह्य उपयोगकर्ता (External Users)।

. **आन्तरिक उपयोगकर्ता (Internal Users)** – आन्तरिक उपयोगकर्ता वह व्यक्ति हैं जो व्यवसायिक संस्था के प्रबंध एवं संचालन में प्रत्यक्ष रूप से लगे हुए हैं जैसे कि संचालक अथवा साझेदार, प्रबंधक एवं अधिकारी वर्ग। इन व्यक्तियों को व्यवसायिक संस्था के कुशल और सुगम संचालन के लिए लेखांकन सूचनाओं की आवश्यकता होती है। उनकी आवश्यकता की पूर्ति व्यवसायिक संस्था की प्रकाशित रिपोर्टों जैसे कि लाभ-हानि खाता (Profit and Loss Account), स्थिति विवरण (Balance Sheet) तथा रोकड़ प्रवाह विवरण (Cash Flow Statement) के द्वारा प्रदान की गई लेखांकन सूचनाओं के द्वारा होती है। तथापि, आन्तरिक उपयोगकर्ताओं की अधिकांश आवश्यकताओं की पूर्ति व्यवसायिक संस्था की अप्रकाशित रिपोर्टों के द्वारा होती है जो कि प्रबंध की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विशेष रूप से बारम्बार तैयार की जाती है। ऐसी अप्रकाशित अथवा आंतरिक

रिपोर्टें अनेक प्रकार की सूचनाऐं प्रदान करती हैं जैसे कि वस्तु की लागत, लागत में वृद्धि की गति, प्रत्येक वस्तु की लाभप्रदता, विक्रय एवं लाभ में वृद्धि अथवा कमी के कारण, भविष्य के विक्रय एवं लाभ के अनुमान आदि। ये आंतरिक रिपोर्टें जिनमें कि अनेक प्रकार की महत्वपूर्ण सूचनाएँ होती हैं आंतरिक उपयोगकर्ताओं को तो उपलब्ध रहती हैं परन्तु ये रिपोर्टें बाह्य उपयोगकर्ताओं को उपलब्ध नहीं होती हैं अर्थात् इन रिपोर्टें तक बाह्य उपयोगकर्ताओं की पहुँच नहीं होती हैं।

2. **बाह्य उपयोगकर्ता (External Users)** – ऐसे व्यक्ति अथवा संगठन जिनका संस्था के प्रबंध में तो हिस्सा नहीं होता है परन्तु जिनका संस्था के वर्तमान अथवा भविष्य में हित होता है वह संस्था की लेखांकन सूचनाओं के बाह्य उपयोगकर्ता कहलाते हैं। इन व्यक्तियों की संस्था की आंतरिक अथवा अप्रकाशित रिपोर्टों तक पहुँच नहीं होती, अतः वह संस्था की बाह्य अथवा प्रकाशित रिपोर्टों का ही प्रयोग करते हैं जैसे कि लाभ-हानि खाता (Profit and Loss Account), स्थिति विवरण (Balance Sheet) एवं रोकड़ प्रवाह विवरण (Cash Flow Statement)। बाह्य उपयोगकर्ताओं में व्यवसाय के स्वामी, संभावित विनियोक्ता, लेनदार, ऋणदाता, कर्मचारी, सरकार, अनुसंधानकर्ता, जनता इत्यादि सम्मिलित होते हैं :

LIBRARY 3462

1) **स्वामी (Owners)** – व्यवसाय के स्वामी (अथवा वर्तमान विनियोक्ता) व्यवसाय की लाभप्रदता तथ वित्तीय सुदृढ़ता के बारे में जानना चाहते हैं वह यह भी जानना चाहते हैं कि लाभ बढ़ रहे या घट रहे हैं? लाभों में वृद्धि अथवा कमी किन कारणों से हुई है? व्यवसाय की स्थायी सम्पत्ति और चालू सम्पत्तियों का मूल्य क्या है? ये सभी सूचनाएं उन्हें लेखांकन से प्राप्त होती हैं।

2) **संभावित विनियोक्ता (Potential Investors)** – किसी व्यवसाय में धन के विनियोजन करने जोखिम उठाना निहित है। अतः जो व्यक्ति किसी व्यवसाय में धन विनियोजन करना चाहते हैं उ इस विषय में सूचना चाहिए कि उनके द्वारा विनियोजित धन कितना सुरक्षित होगा और उससे कितनी आय होगी। वह ऐसी सूचना चाहते हैं जिससे वह यह अनुमान लगा सकें कि यदि वह संस्था में अब विनियोजित करते हैं तो उन्हें भविष्य में कितनी आय होगी। वित्तीय विवरण अ लेखांकन उन्हें यह सूचनाऐं प्रदान करते हैं। ऐसी सूचना के आधार पर वह यह निर्णय लेते है उन्हें किसी फर्म में साझेदार बनना चाहिए या नहीं, अथवा उन्हें इस कम्पनी के अंश (Sha क्रय करने चाहिएं, रखने चाहिएं या बेच देने चाहिएं।

3) **लेनदार (Creditors)** – लेनदार वह व्यक्ति होते हैं जो माल अथवा सेवाएं उधार में प्रदान हैं। उधार प्रदान करने से पूर्व लेनदार व्यवसायिक संस्था की उधार-क्षमता (Creditworthi के विषय में संतुष्ट होना चाहते हैं। लेखांकन सूचनाऐं उन्हें व्यवसायिक संस्था की वित्तीय के विषय में अनुमान लगाने में सहायता प्रदान करती हैं और यह भी बताती हैं कि किसी तक उधार प्रदान करना सुरक्षित रहेगा।

4) **ऋणदाता (Lenders)** – आधुनिक युग में बैंक और वित्तीय संस्थाएं व्यवसाय को ऋण प्रदा हैं। उधार देने से पूर्व वह संस्था की ऋण वापिस लौटाने की क्षमता (Repaying Capac जानकारी करना चाहते हैं। ये सूचनाएँ लेखांकन से ही मिलती हैं।

5) **कर्मचारी (Employees)** – व्यवसाय में कर्मचारियों को उच्च वेतन और बोनस देने की या नहीं यह जानने के लिए कर्मचारी संस्था के लाभ को जानने के इच्छुक होते हैं। व

Scanned with CamScanner

विवरण (अर्थात् लेखांकन सूचनाओं) का प्रयोग यह जानने के लिए भी कर सकते हैं कि उ
विभिन्न राशि जैसे कि प्राविडन्ट फन्ड की राशि नियमित रूप से जमा कराई जा रही है या

6) **सरकार (Government)** - लेखांकन सूचनाओं के आधार पर ही सरकार को आयकर, कर, उत्पादन शुल्क आदि प्राप्त होते हैं अतः सरकार चाहती है कि व्यावसायिक लेखे सच्चे सही ढंग से रखे जाएँ।

7) **अनुसंधानकर्ता (Researchers)** - लेखांकन सूचनाऐं किसी व्यवसाय की वित्तीय क्रिया का होती हैं अतः ये उन अनुसंधानकर्ताओं के लिए विशेष उपयोगी होती हैं जो संस्था की क्रियाओं का गहन अध्ययन करना चाहते हैं।

8) **जनता (Public)** - कोई भी व्यवसायिक संस्था जनता को अनेक प्रकार से प्रभावित करती है कि, जनता की रुचि व्यवसायिक संस्था द्वारा प्रदान किए जाने वाले रोजगार के अवसरों के में जानकारी प्राप्त करने में हो सकती है अथवा जनता की रूचि संस्था द्वारा प्रदूषण रोकने के किए उपायों के जानने में हो सकती है। ऐसी सूचनाएं संस्था की वार्षिक रिपोर्टों से उप होती हैं।

एक सूचना विधि (Information System) के रूप में लेखांकन प्रक्रिया द्वारा सूचनाओं प्रयोग करने वाले सभी पक्षकारों का प्रदान किया जाता है चाहे वह पक्षकार व्यवसाय के आन्तरिक हों या बाह्य। ये सूचनाएं इन्हें प्रयोग करने वाले पक्षकारों को निर्णय लेने में सहायता प्रदान करती सूचनायें का संवहन विभिन्न वित्तीय विवरणों जैसे कि लाभ-हानि खाते, स्थिति विवरण, कोष प्र विवरण, नकदी प्रवाह विवरण आदि के माध्यम से किया जाता है। वित्तीय विवरणों को प्रायः वार्षिक बनाया जाता है परन्तु इनके बनाने की अवधि इनके प्रयोगकर्ताओं पर निर्भर करती है। उदाहरण लिए, विक्रय प्रबन्धक को मासिक अथवा साप्ताहिक रूप से भी विक्रय की सूचना देना आवश्यक सकती है जबकि विनियोजक, लेनदार आदि की आवश्यकताएं वार्षिक वित्तीय विवरण की पूर्ति जाएँगीं। सूचनाओं को अधिकाधिक समझने योग्य और अर्थपूर्ण बनाने के लिए वित्तीय विवरणों विभिन्न मदों को अनुपातों, प्रतिशतों, ग्राफ और चार्ट आदि के रूप में भी प्रस्तुत किया जाता है

Scanned with CamScanner

होता है।

प्रश्न-2. पुस्तपालन किसे कहते हैं? यह लेखांकन से किस प्रकार भिन्न है?
(What is Book-keeping? How does it differ from Accounting?)

उत्तर - पुस्तपालन, लेखांकन और लेखाकर्म
(Book-Keeping, Accounting and Accountancy)

इन तीनों शब्दों को कई बार एक ही अर्थ में प्रयोग किया जाता है परन्तु पुस्तपालन, लेखांकन लेखाकर्म में आधारभूत अन्तर हैं -

पुस्तपालन (Book-Keeping) - यह मुख्य रूप से लेखा पुस्तकें रखने से सम्बन्धित हैं। लेखा पु रखने में निम्न चार क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है :

Scanned with CamScanner

1. विभिन्न लेन-देन में से ऐसे लेन-देन की पहचान (Identify) करना जो वित्तीय प्रकृति (Financial Nature) के हैं।
2. पहचान किए गए लेन-देनों को मुद्रा के रूप में मापना।
3. पहचान किए गए लेन-देनों की प्रारम्भिक लेखे की पुस्तकों में प्रविष्टि करना।
4. इनका खाताबही (Ledger) में वर्गीकरण करना।

पुस्तपालन का कार्य यांत्रिक प्रकृति का होता है और उसे व्यक्तियों द्वारा भी किया जा सकता है जिन्हें लेखांकन का सीमित ज्ञान हो। वर्तमान समय में यह कार्य कम्प्यूटर्स द्वारा किया जाने लगा है।

लेखांकन (Accounting) - लेखांकन वहाँ से प्रारम्भ होता है जहाँ पुस्तपालन समाप्त होता है। लेखांकन में निम्न क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है :

1. वर्गीकृत किए गए लेन-देनों का लाभ-हानि खाते और स्थिति विवरण (Balance Sheet) इत्यादि के रूप में सारांश तैयार करना।
2. सारांश की सहायता से परिणामों का विश्लेषण करना और परिणामों की व्याख्या करना। अन्य शब्दों में, लाभ-हानि खाते और स्थिति विवरण से उपयोगी सूचना प्राप्त करना।
3. इस सूचना को इसमें हित रखने वाले पक्षकारों को प्रेषित करना।

इस प्रकार, एक लेखाकार (Accountant) का कार्य एक पुस्तपालक के कार्य से आगे का कार्य है। परन्तु वास्तविक व्यवहार में, लेखांकन प्रक्रिया में पुस्तपालन का कार्य भी सम्मिलित रहता है क्योंकि पुस्तपालन द्वारा तैयार किए गए लेखों के आधार पर ही एक लेखाकार द्वारा विभिन्न समयावधियों पर वित्तीय विवरण जैसे कि लाभ-हानि खाता और स्थिति विवरण तैयार किए जाते हैं। एक छोटे आकार की संस्था में पुस्तपालक का कार्य भी लेखाकार द्वारा ही किया जाता है।

लेखाकर्म (Accountancy) - इसका आशय लेखांकन के विधिवत ज्ञान (Systematic Knowledge) से है जो कि उन सिद्धान्तों और तकनीक से सम्बन्धित है जिनका प्रयोग लेखांकन में किया जाता है। यह हमें बताता है कि लेखा पुस्तक किस प्रकार तैयार की जाऐं, लेखांकन सूचना का सारांश किस प्रकार तैयार किया जाए और इस सूचना को इसमें हित रखने वाले पक्षकारों को किस प्रकार प्रेषित किया जाए। **कोहलर के अनुसार,** "लेखाकर्म से आशय लेखांकन के सिद्धान्त एवं व्यवहार सम्बन्धी सम्पूर्ण ढांचे से है।"

पुस्तपालन और लेखांकन में अन्तर
(Distinction between Book-Keeping and Accounting)

पुस्तपालन और लेखांकन में निम्नलिखित अन्तर हैं :

अन्तर का अधार (Basis of Distinction)	पुस्तपालन (Book-Keeping)	लेखांकन (Accounting)
1. क्षेत्र (Scope)	पुस्तपालन में निम्नलिखित सम्मिलित हैं : अ) वित्तीय प्रकृति के लेन-देनों की पहचान करना।	लेखांकन में पुस्तपालन के अतिरिक्त निम्नलिखित सम्मिलित हैं : अ) वर्गीकृत किए गए लेन-देनों का सारांश तैयार करना,

Scanned with CamScanner

	ब) पहचान किए गए लेन-देनों को मुद्रा के रूप में मापना; स) मापे गए लेन-देनों का लेखांकन करना; एवं द) इनका खाताबही में वर्गीकरण करना।	ब) सारांश किए गए परिणामों का विश्लेषण करना और परिणाम की व्याख्या करना, एवं स) परिणामों को इनमें हित रखने वाले पक्षकारों को प्रेषित करना।
2. अवस्था (Stage)	पुस्तपालन प्रारंभिक (Primary) अवस्था है।	लेखांकन द्वितीय (Secondary) अवस्था है।
3. उद्देश्य (Objective)	पुस्तपालन का प्रमुख उद्देश्य वित्तीय प्रकृति के लेन-देन का नियमानुसार लेखांकन करना है।	इसका प्रमुख उद्देश्य व्यवसाय के शुद्ध परिणामों (Net results) एवं वित्तीय स्थिति (Financial Position) को ज्ञात करना एवं इन्हें इनमें हित रखने वाले पक्षकारों को प्रेषित करना है।
4. कार्य की प्रकृति (Nature of Job)	पुस्तपालन का कार्य यांत्रिक प्रकृति (Routine Nature) का होता है।	लेखांकन का कार्य विश्लेषणात्मक प्रकृति (Analytical Nature) का होता है।
5. किसके द्वारा (Who Performs)	पुस्तपालन का कार्य निम्न श्रेणी के स्टाफ (Junior Staff) द्वारा किया जाता है।	लेखांकन का कार्य उच्च श्रेणी के स्टाफ (Senior Staff) द्वारा किया जाता है।
6. ज्ञान का स्तर (Knowledge level)	यह उन व्यक्तियों के द्वारा भी किया जा सकता है जिन्हें सीमित ज्ञान है।	यह उन व्यक्तियों के द्वारा किया जाता है जिन्हें पुस्तपालक से उच्च स्तर का ज्ञान है।
7. विश्लेषणात्मक योग्यता (Analytical Skill)	पुस्तपालक (Book-keeper) में विश्लेषणात्मक योग्यता का होना आवश्यक नहीं है।	लेखाकार (Accountant) में विश्लेषणात्मक योग्यता का होना आवश्यक है।

प्रश्न-3. प्रबन्ध से आप क्या समझते हैं? विस्तार से चर्चा करें।

What do you understand by management? Discuss in detail.

उत्तर - प्रबंध, विभिन्न विद्वानों ने प्रबंध को इसकी विशेषताओं के आधार पर अलग -अलग ढंग से परिभाषित किया है। कुछ विद्वानों ने प्रबंध को परिभाषित एक ऐसी प्रक्रिया से किया है जिसके अंतर्गत प्रबंध को "दूसरे लोगों से कार्य करवाने की कला माना है। इसी प्रकार कुछ विद्वानों ने माना है कि प्रबंध का सम्बन्ध "निर्णय लेने से है"।

Scanned with CamScanner

प्रबंध की परिभाषाएँ

हेरोल्ड कून्टज के अनुसार - प्रबंध औपचारिक रूप से संगठित समूहो में अन्य व्यक्तियों के साथ मिलकर कार्य करने तथा करवाने की कला है।

एफ. डब्ल्यू टेलर के अनुसार - प्रबंध यह जानने की कला है कि आप क्या करवाना चाहते है और इसके बाद यह देखना कि वे इसे सर्वोत्तम एवं मित्व्ययिता पूर्ण विधि से करें।

पीटरसन के अनुसार - प्रबध से अभिप्राय उस प्रक्रिया से है जिसके द्वारा एक विशेष मानव समूह के उद्देश्यों का निर्धारण व स्पष्टीकरण करते हुए उन्हें कार्यरूप दिया जाता है।

विभिन्न परिभाषाओं के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि प्रबंध दूसरों से कार्य करवाने की कला हैं जिससे कार्य कुशलतापूर्वक तथा प्रभावपूर्ण तरीकों से किया जाता है।

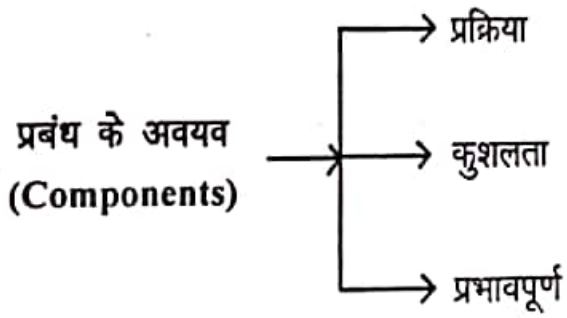

1. **प्रक्रिया** - प्रबंध की परिभाषा में प्रक्रिया का अर्थ प्रबन्धक की प्राथमिक क्रियाओं को प्रस्तुत करता है। ये प्राथमिक क्रियाएँ नियोजन, संगठन, नियुक्तीकरण, नेतृत्व, संचार तथा नियंत्रण है।
2. **कुशलता** - कुशलता एक संगठन के आदान तथा उपादान में सबन्ध बताती है। कुशलता किसी कार्य को सही तरीके से करने की कला है।
3. **प्रभावपूर्ण** - प्रभावपूर्ण किसी कार्य को प्रभावी विधियों से तथा सही काम करने से है ताकि संगठन के उद्देश्यों को आसानी से प्राप्त किया जा सकें।

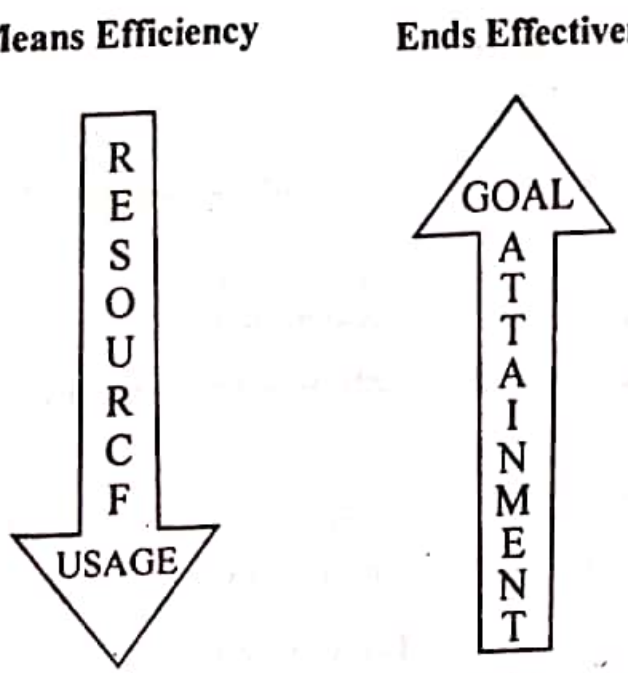

प्रबंध संसाधनों का उचित प्रयोग करना है ताकि संगठन के उद्देश्यों का आसानी से प्राप्त किया जा सकें।

Scanned with CamScanner

प्रश्न-5. ई-वाणिज्य से क्या अभिप्राय है? इसकी विशेषताओं एवं दोषों का वर्णन करें।
What do you mean by E-Commerce? Describe its characteristics and demerits.

उत्तर - ई-वाणिज्य से अभिप्राय इन्टरनेट (Internet) के माध्यम से व्यापार का संचालन करने से है। इन्टरनेट के माध्यम से एक व्यापारी आज अपनी संस्था को सुचारू रूप से चला सकता है। वह अपने विभिन्न गतिविधियाँ इन्टरनेट के माध्यम से कर सकता है। वह इन्टरनेट के माध्यम से अपने उत्पाद एवं सेवाओं का विज्ञापन, विपणन एवं अन्य विभिन्न कार्य कर सकता है। वहीं दूसरी और एक उपभोक्ता भी इन्टरनेट के माध्यम से विभिन्न वस्तुओं एवं सेवाओं को उचित कीमत व उचित समय पर खरीद सकता है। अतः ई-वाणिज्य वह प्रणाली है जिसमें एक उत्पादक, व्यापारी एवं उपभोगता आसानी से विभिन्न व्यवसायिक गतिविधियाँ को कर सकते हैं। इन्टरनेट की सेवा प्राप्त करने के लिए आज बाजार में विभिन्न उपकरण उपलब्ध है जिनकी सहायता से एक उत्पादक, व्यापारी एवं उपभोगता अपने क्रिया-कलाप कर सकते हैं। उनमें से कुछ उपकरण निम्नलिखित हैं - कम्प्यूटर, लेपटॉप, टेब, मोबाईल फोन इत्यादि।

Scanned with CamScanner

ई-वाणिज्य की विशेषताएं (Characteristics of E-Commerce)

एम-वाणिज्य की विशेषाताएं निम्नलिखित हैं -

1. **प्रत्यक्ष भेंट का महत्व नहीं (No Importance of Direct Meeting)** - ई-वाणिज्य में उ व्यापारी एवं उपभोगता को प्रत्यक्ष मिलने की आवश्यकता नहीं होती है। अतः उपभोगता अ दफ्तर या किसी अन्य स्थान से वस्तु के क्रय का आदेश दे सकता है। अतः उत्पादक और भी आसानी से अपने दफ्तर से ही विक्रय करने वाली वस्तु और सेवाओं की सूचना दे स
2. **क्रय-विक्रय के माध्यम (Medium of Transaction)** - ई-वाणिज्य में क्रय-विक्रय करने विभिन्न उपकरण उपलब्ध हैं जो इन्टरनेट की सहायता से क्रय-विक्रय सम्भव बनाते हैं। ये उ निम्नलिखित हो सकते हैं - कम्प्यूटर, लेपटोप, टेब, मोबाईल फोन इत्यादि।
3. **निश्चित समय का महत्व नहीं (No Importance of Particular Time)** - ई-वाणि कोई भी व्यक्ति किसी भी समय विभिन्न बेवसाइटों पर कभी भी क्रय आ आदेश दे सकता है कभी अपनी वस्तु एवं सेवाओं की विक्रय के लिए सूचना दे सकता है।
4. **शीघ्र लेन-देन (Instantly Transaction)** - ई-वाणिज्य के माध्यम से विक्रेता एवं क्रेता में की सम्पर्क हो जाता है। इससे विक्रेता अपने माल एवं सेवाओं को आसानी से विक्रय कर ह है और क्रेता अपनी आवश्यक वस्तुओं को आसानी से क्रय कर सकता है।
5. **मध्यस्थता की आवश्यकता नहीं (No Requirement of Intermediator)** - ई-वाणि माध्यम से क्रेता सीधा विक्रेता से सम्पर्क करता है अतः इस कारण मध्यस्थों की आवश्यकता होती है। इससे विक्रेता को अपने माल को बेचने के लिए किसी को कोई कमीशन दे आवश्यकता नहीं नहीं पड़ती औन न ही क्रेता को किसी मध्यस्थ को कमीशन देने की आवश्य होती है।
6. **अपव्यय में कमी (Reduce Over-expenditure)** - ई-वाणिज्य के माध्यम से विक्रेता एवं में सीधा सम्बन्ध हो जाने से विभिन्न अपव्ययों से बचा जा सकता है। जैसे किसी मध्यस्थ कमीशन से बचा जा सकता है।
7. **क्रेता-विक्रेता में सीधा सम्बन्ध (Direct Relationship between Purchaser and Sell** - ई-वाणिज्य के माध्यम से क्रेता एवं विक्रेता में सीधा सम्बन्ध स्थापित हो जाता है।
8. **भुगतान एवं सुपुर्दगी में आसानी (Easy To Payment and Delivery)** - ई-वाणिज्य माध्यम से वस्तु एवं सेवाओं के भुगतान को ऑनलाईन किया जा सकता है जिससे विभि क्रियाकलापों को कम किया जा सकता है एवं एक विक्रेता भी आसानी से वस्तुओं को क्रेता पहुंच सकता है।

ई-वाणिज्य के कुछ सामान्य दोष (Demerits of E-Commerce)

एम-वाणिज्य के कुछ सामान्य दोष निम्नलिखित हैं -

1. **वस्तु की विश्वसनीयता में कमी (Lack of Reliability)** - ई-वाणिज्य में कई बार वस्तु गुणवता में कमी पाई जाती है। जिससे उपभोक्ताओं का एम-वाणिज्य के माध्यम से वस्तुओं के क्र करने में संदेहता उत्पन्न होती है।

Scanned with CamScanner

2. **वस्तु की वास्तविकता का प्रस्तुतिकरण न होना (Lack of Presentation of Reality of Product)** - ई-वाणिज्य में वस्तु की वास्तविकता का पता नहीं चल पाता है क्योंकि वस्तु जिन बेवसाईटों पर बेची जाती है उन पर वस्तुओं की गुणवत्ता के बारे में बढ़ा-चढ़ा दिखाया जाता है।

3. **वस्तु के लेन-देन में कपट होने की संभावना (Possibility of Fraud)** - ई-वाणिज्य में वेबसाईट पर दिखाये गई वस्तुओं के देन-देन में कपट होने की संभावना पाई जाती है। कई उपभोगता के ऑनलाईन भुगतान करने पर भी उन्हें सुपुर्दगी नहीं मिलती है।

4. **उपभोगताओं में तकनीकी ज्ञान का अभाव (Lack of Knowledge of Technology in Consumers)** - कोई भी व्यक्ति जिसे मोबाईल फोन तकनीकी का ज्ञान नहीं है वह ई-वाणिज्य के माध्यम से लेन-देन नहीं कर सकता है।

5. **अशिक्षित लोगों के पहुंच से परे (Far from Access of Uneducated Persons)** - अशिक्षित लोग ई-वाणिज्य के माध्यम से वस्तु को क्रय करने के लिए आदेश देने में भी असमर्थ होते हैं एवं वे विभिन्न वस्तुओं की सूचनाओं को भी ई-वाणिज्य के माध्यम से प्राप्त नहीं कर सकते हैं।

6. **उपभोक्ता के अनुसार कीमत में कमी का अभाव (Consumers Can't Negotiate)** - ई-वाणिज्य के माध्यम से वस्तु को क्रय करने पर एक उपभोक्ता उस वस्तु की कीमत में कोई भी कमी नहीं कर सकता है।

प्रश्न-6. एम-वाणिज्य से क्या अभिप्राय है? इसकी विशेषताओं एवं दोषों का वर्णन करें।
What do you mean by M-Commerce? Describe its characteristics and demerits.

उत्तर - एम-वाणिज्य के अन्तर्गत वस्तुओं और सेवाओं का क्रय-विक्रय वायरलेस हथ उपकरण जैसे - मोबाईल फोन के माध्यम से किया जाता है। इसके अन्तर्गत किसी भी वस्तु एवं सेवाओं को मोबाईल फोन के माध्यम से बेचा जा सकता है और मोबाईल फोन के माध्यम से ही खरीदा जा सकता है। आज बहुत सी ऐसी बेवसाईट उपलब्ध है जिन के माध्यम से हम वस्तु एवं सेवाओं का क्रय-विक्रय कर सकते हैं। ये बेवसाईट किसी भी स्मार्ट फोन पर आसानी से संचालित की जा सकती हैं। जैसे - www.snapdeal.com,www.quikr.com, www.olx.com।

एम-वाणिज्य की विशेषताएं (Characteristics of M-Commerce)

एम-वाणिज्य की विशेषाताएं निम्नलिखित हैं -

1. **निश्चित स्थान का महत्व नहीं (No Importance of Particular Place)** - एम-वाणिज्य में कोई भी व्यक्ति कहीं पर भी किसी भी वस्तु एवं सेवाओं का क्रय-विक्रय कर सकता है। एम-वाणिज्य में लेन-देन के लिए कोई निश्चित स्थान की आवश्यकता नहीं होती है।

2. **निश्चित समय का महत्व नहीं (No Importance of Particular Time)** - एम-वाणिज्य में कोई भी व्यक्ति किसी भी समय विभिन्न बेवसाइटों पर कभी भी क्रय आ आदेश दे सकता है तथा कभी अपनी वस्तु एवं सेवाओं की विक्रय के लिए सूचना दे सकता है।

3. **शीघ्र लेन-देन (Instantly Transaction)** - एम-वाणिज्य के माध्यम से विक्रेता एवं क्रेता में में शीघ्र की सम्पर्क हो जाता है। इससे विक्रेता अपने माल एवं सेवाओं को आसानी से विक्रय कर सकता है और क्रेता अपनी आवश्यक वस्तुओं को आसानी से क्रय कर सकता है।

Scanned with CamScanner

4. **मध्यस्थता की आवश्यकता नहीं (No Requirement of Intermediator)** – एम-वाणि माध्यम से क्रेता सीधा विक्रेता से सम्पर्क करता है अतः इस कारण मध्यस्थों की आवश्यकता होती है। इससे विक्रेता को अपने माल को बेचने के लिए किसी को कोई कमीशन आवश्यकता नहीं होती है औन न ही क्रेता को किसी मध्यस्थ को कमीशन देने की आवश पड़ती है।

5. **अपव्यय में कमी (Reduce Over-expenditure)** – एम-वाणिज्य के माध्यम से विक्रेता एवं में सीधा सम्बन्ध हो जाने से विभिन्न अपव्ययों से बचा जा सकता है। जैसे किसी मध्यस्थ कमीशन से बचा जा सकता है।

6. **क्रेता-विक्रेता में सीधा सम्बन्ध (Direct Relationship between Purchaser and Sel** – एम-वाणिज्य के माध्यम से क्रेता एवं विक्रेता में सीधा सम्बन्ध स्थापित हो जाता है।

7. **भुगतान एवं सुपुर्दगी में आसानी (Easy To Payment and Delivery)** – एम-वाणिज्य माध्यम से वस्तु एवं सेवाओं के भुगतान को ओनलाईन किया जा सकता है जिससे विभि क्रियाकलापों को कम किया जा सकता है एवं एक विक्रेता भी आसानी से वस्तुओं को क्रेता पहुंच सकता है।

एम-वाणिज्य के कुछ सामान्य दोष (Demerits of M-Commerce)

एम-वाणिज्य के कुछ सामान्य दोष निम्नलिखित हैं –

1. **वस्तु की विश्वसनीयता में कमी (Lack of Reliability)** – एम-वाणिज्य में कई बार वस्तु गुणवता में कमी पाई जाती है। जिससे उपभोक्ताओं का एम-वाणिज्य के माध्यम से वस्तुओं के करने में संदेहता उत्पन्न होती है।

2. **वस्तु की वास्तविकता का प्रस्तुतिकरण न होना (Lack of Presentation of Reality Product)** – एम-वाणिज्य में वस्तु की वास्तविकता का पता नहीं चल पाता है क्योंकि वस्तु वेबसाईटों पर बेची जाती है उन पर वस्तुओं की गुणवत्ता के बारे में बढ़ा-चढ़ा दिखाया जाता

3. **वस्तु के लेन-देन में कपट होने की संभावना (Possibility of Fraud)** – एम-वाणिज्य वेबसाईट पर दिखाये गई वस्तुओं के देन-देन में कपट होने की संभावना पाई जाती है। उपभोगता के ऑनलाईन भुगतान करने पर भी उन्हें सुपुर्दगी नहीं मिलती है।

4. **उपभोगताओं में तकनीकी ज्ञान का अभाव (Lack of Knowledge of Technology Consumers)** – कोई भी व्यक्ति जिससे मोबाईल फोन तकनीकी का ज्ञान नहीं है एम-वाणिज्य के माध्यम से लेन-देन नहीं कर सकता है।

5. **अशिक्षित लोगों के पहुंच से परे (Far from Access of Uneducated Persons)** – अशिक्षित लोग एम-वाणिज्य के माध्यम से वस्तु को क्रय करने के लिए आदेश देने में भी असमर्थ होते एवं वे विभिन्न वस्तुओं की सेचनाओं को भी एम-वाणिज्य के माध्यम से प्राप्त नहीं कर सकते

6. **उपभोक्ता के अनुसार कीमत में कमी का अभाव (Consumers Can't Negotiate)** – एम-वाणिज्य के माध्यम से वस्तु को क्रय करने पर एक उपभोक्ता उस वस्तु की कीमत में कोई भी कमी नहीं कर सकता है।

Scanned with CamScanner

प्रश्न-7. शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण से क्या अभिप्राय है? इसके महत्व एवं ढांचे का वर्णन करें।

What do you mean by Pedagogical Analysis? Explain its importance and its structure.

उत्तर - शाब्दिक रचना की दृष्टि से शिक्षा शास्त्रीय विश्लेषण पद दो शब्दों से मिलकर बना है। शिक्षाशास्त्र + विश्लेषण। शिक्षाशास्त्र से अभिप्राय शिक्षक के द्वारा प्रयुक्त उन सभी तरीकों या साधनों से है जिनके द्वारा अपने शिक्षण कार्य को अधिक से अधिक सहजता और प्रभावपूर्णता से पूरा करने में समर्थ हो पाता है तथा उसे कम से कम साधन और शक्ति का व्यय करके वांछित अधिगम परिणामों की सर्वोत्तम उपलब्धि हो सके।

विश्लेषण (Analysis)

विश्लेषण पद का प्रयोग उस प्रक्रिया के लिए होता है, जिसमें किसी भी विषय वस्तु को छोटे खण्ड़ों, इकाईयों या भागों में बाँटा जाता है।

शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण का अर्थ (Meaning of Pedagogical Analysis)

जब किसी विषय का विश्लेषण एक शास्त्रीय एवं विधिवत ढंग से शिक्षाशास्त्र यानी शिक्षण विज्ञान की मर्यादाओं तथा सिद्धान्तों को आधार बनाकर कर सकते है, तब उसे उस विषय विशेष की विषय वस्तु का शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण कहकर पुकारा जाता है।

अतः सामाजिक अध्ययन की किसी विषय-वस्तु का शिक्षण विज्ञान या शिक्षाशास्त्र के नियमों को आधार बनाकर किया जाने वाला विश्लेषण ही सामाजिक अध्ययन की विषयवस्तु का शिक्षा-शास्त्रीय विश्लेषण कहलाता है।

शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण के सोपान (Steps of Pedagogical Analysis)

शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण के कार्य में सामाजिक अध्ययन द्वारा अपने विषय की विषयवस्तु का शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण करने हेतु जिन सोपानों का अनुसारण किया जाता है वो निम्नलिखित है -

1. **विषयवस्तु का विश्लेषण (Content Analysis)** - किसी भी इकाई या प्रकरण को पढ़ाने से पहले उसे छोटी-छोटी इकाइयों या खण्ड़ों में बाँटना आवश्यक है। इसी के आधार पर अध्यापक शिक्षण बिन्दु निर्धारित करता है तथा यह अध्यापक को शिक्षण के लिए दिशा प्रदान करता है। विषय वस्तु का विश्लेषण करने के बाद निश्चित करने में आसानी रहती है कि किन-किन तत्वों पर अधिक

Scanned with CamScanner

2. उद्देश्य निर्धारण (Objective Determine) - विषयवस्तु का विश्लेषण करने के बाद अध्यापक निश्चित करता है कि इस विषयवस्तु को पढ़ाने के क्या उद्देश्य हैं तथा अध्यापक छात्रों के व्यवहार में क्या परिवर्तन लाना चाहता है। शिक्षण उद्देश्य अधिगम प्रतिफल बनाते है अर्थात उद्देश्य निर्धारण करने के बाद ही यह ज्ञात होता है कि किस प्रतिफल को प्राप्त करना चाहता है। अतः शिक्षक के लिए किसी विषय से सम्बन्धित शिक्षण के विभिन्न उद्देश्यों की सूची तैयार करना आवश्यक होता है।

3. शिक्षण विधियाँ (Teaching Methods) - शिक्षण अधिगम उद्देश्यों की पूर्ति में किस रूप में सफलता मिलेगी, इस बात पर निर्भर करता है कि वह उपलब्ध विषयवस्तु को कितनी अच्छी विधियों, तकनीक व सहायक सामग्री के माध्यम से छात्रों के समक्ष प्रस्तुत करेगा। उपलब्ध विषयवस्तु को समझाने के लिए अध्यापक श्यामपट्ट का प्रयोग करेगा या चित्र प्रतिमान आदि सहायक सामग्री का प्रयोग करेगा। यह अध्यापक पर निर्भर करता है कि व्याख्यान, प्रश्नों आदि कौन सी विधि का प्रयोग विषयवस्तु का शिक्षण कराने में करें।

4. मूल्यांकन (Evaluation) - यह शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण का महत्वपूर्ण व अंतिम पद है। निर्धारित किए गए उद्देश्यों की पूर्ति कहाँ तक हुई है अर्थात शिक्षण कितना सफल हुआ है। इसके लिए मूल्यांकन किया जाता है। मूल्यांकन के लिए अध्यापक पढ़ाई गई विषयवस्तु से सम्बन्धित प्रश्न छात्रों से पूछता है। इसमें वस्तुनिष्ठ, लघुउत्तरीय व निबन्धात्मक प्रश्नों को शामिल किया जाता है। इन प्रश्नों के उत्तर की प्राप्ति के बाद उनका मूल्यांकन करने के बाद अध्यापक को ज्ञात होता है कि छात्र को कितना अधिगम हुआ व अध्यापक शिक्षण में कितना सफल हुआ।

अतः यदि शिक्षण कार्य में सफलता चाहिए तो शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के चार सोपानों पर ध्यान देना होगा। यदि किसी विषय वस्तु का शिक्षण करते समय इन सोपानों का प्रयोग करते है और विश्लेषण किया जाता है, उस विश्लेषण को शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण की संज्ञा दी जाती है।

एक शिक्षक के शिक्षण में शिक्षाशास्त्र की भूमिका
(Role of Pedagogical Analysis for Commerce Teacher)

शिक्षाशास्त्र की प्रकृति तथा प्रयोजनों पर दृष्टिपात किया जाए तो शिक्षाशास्त्र के द्वारा एक शिक्षक द्वारा सम्पादित शिक्षण कार्यक्रम में शिक्षाशास्त्र द्वारा दो निम्न प्रकार के प्रयोजन सिद्ध किए जा सकते है।

1. शिक्षण को बहुत ही सुचारू तथा सहज ढ़ंग से सम्पादित करना।
2. अपेक्षित व्यवहार परिवर्तनों या शिक्षण परिणामों के रूप में अधिक से अधिक अच्छे परिणामों की उपलब्धि।

शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण करते समय सावधानियाँ
(Precautions during Pedagogical Analysis)

एक अध्यापक को शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण करते समय विभिन्न चरणों में ध्यान देना आवश्यक है -

1. विषयवस्तु वस्तु का विश्लेषण करते समय ध्यान देने योग्य बातें - विषयवस्तु का विश्लेषण करते समय अध्यापक को निम्न बातों का ध्यान देना आवश्यक है -

(i) विषय वस्तु का विश्लेषण करने से पूर्व यह आवश्यक है कि अध्यापक को विषय वस्तु का पूर्ण व स्पष्ट ज्ञान हो।

(ii) विषय वस्तु के खण्ड/भाग सरल से कठिन की दिशा में हों।

(iii) विषय वस्तु के जितने सम्भव भाग हो सकें, विषयवस्तु का विश्लेषण उतना अच्छा है।

(iv) विषय वस्तु के खण्डित भाग एक दूसरे से सम्बन्धित होने चाहिये।

(v) विषय वस्तु के खण्डित भाग छात्रों के मानसिक स्तर के अनुकूल हो।

2. उद्देश्य निर्धारण के समय सावधानियाँ -

(i) उद्देश्यों का निर्धारण छात्रों के मानसिक स्तर के अनुकूल होना चाहिए।

(ii) उद्देश्यों का निर्धारण विषयवस्तु या पाठ्यसामग्री के अनुसार होना चाहिए।

(iii) उद्देश्यों का निर्धारण मनोवैज्ञानिक पक्षों जैसे रूचि, अभिरूचि, सृजनात्मकता के अनुसार होना चाहिये।

(iv) उद्देश्य छोटे-छोटे हों।

3. शिक्षण विधियों के चयन के समय ध्यान देने योग्य बातें -

(i) शिक्षण विधियाँ छात्रों के मानसिक स्तर के अनुकूल होनी चाहिये।

(ii) किसी प्रकरण के लिए, प्रकरण के अनुसार शिक्षण विधि में परिवर्तन आवश्यक है, अर्थात् सभी प्रकरणों को एक ही विधि से नहीं पढ़ाया जाना चाहिये।

(iii) शिक्षण विधियों का चयन छात्रों की रूचि के अनुसार किया जाना चाहिये।

(iv) व्याख्यान विधि का कम से कम प्रयोग करना चाहिये।

(v) किसी प्रकरण के किसी भाग को पढ़ाते समय किस विधि का प्रयोग उचित होगा, अध्यापक को इसका ज्ञान होना चाहिये।

शिक्षण सहायक सामग्री के चयन के समय ध्यान देने योग्य बातें -

(i) शिक्षण सहायक सामग्री का चयन छात्रों के मानसिक स्तर के अनुकूल होना चाहिये।

(ii) शिक्षण सहायक सामग्री का चयन छात्रों की रूचि के अनुसार होना चाहिये।

(iii) शिक्षण सहायक सामग्री दैनिक जीवन से सम्बन्धित होनी चाहिये।

(iv) एक अध्यापक के लिए आवश्यक है कि वह शिक्षण सहायक सामग्री का प्रयोग उचित समय पर करें।

(v) शिक्षण सहायक सामग्री अधिक व्ययपूर्ण नहीं होने चाहिये।

4. मूल्यांकन करते समय ध्यान देने योग्य बातें -

शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण में मुख्यतः लिखित मूल्यांकन किया जाता है। मूल्यांकन के समय अध्यापक को निम्नलिखित बातों का ध्यान देना चाहिये -

(i) मूल्यांकन के प्रश्न पढ़ायी गई पाठ्य वस्तु से लिया गया हो।

(ii) मूल्यांकन के प्रश्न निर्धारित उद्देश्यों के अनुसार होने चाहिये।

(iii) मूल्यांकन में सभी प्रकार के प्रश्नों जैसे निबन्धात्मक, लघुत्तरीय वस्तुनिष्ठ प्रश्नों का उचित समावेश

Scanned with CamScanner

होना चाहिये।

(iv) मूल्यांकन के प्रश्नों में ज्ञान, बोध, प्रयोग, कौशल सम्बन्धी सभी प्रकार के प्रश्नों का समा चाहिये।

(v) मूल्यांकन के प्रश्नों की भाषा शैली छात्रों के मानसिक स्तर के अनुकूल होनी चाहिये।

प्रश्न-8. निम्नलिखित उप विषयों पर शिक्षाशास्त्रीय विश्लेषण कीजिए :

Do the pedagogical analysis on the following topics :

(क) विज्ञापन (Advertisements)

(ख) व्यापार (Trade)

(ग) स्थिति विवरण (Balance Sheet)

(घ) रोकड़ बही (Cash Book)

(ड़) GST/VAT की गणना (GST/VAT Calculation)

उत्तर - विषय वस्तु का विश्लेषण (Content Analysis)

संगठनात्मक प्रबन्ध के विषय में विभिन्न जानकारी इस प्रकार से है -

(क) विज्ञापन (Advertisements)

विज्ञापन का शाब्दिक अर्थ किसी बात की सूचना देना होता है। अंग्रेजी में विज्ञापन के Advertising शब्द का प्रयोग किया जाता है। जिसकी उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द Advertire है जिसका अर्थ है - To turn अर्थात् किसी वस्तु विशेष की ओर ध्यान मोड़ना। अतः विज्ञापन वह है जो व्यक्ति का ध्यान दूसरी वस्तुओं की ओर से अपनी वस्तुओं की ओर मोड़ देता है। विज्ञा द्वारा क्रेताओं को बाजार में उपलब्ध विभिन्न प्रकार के उत्पादों की विशेषताओं तथा उन्हें प्रयोग की विधि आदि के बारे में जानकारी होती है। क्रेताओं के साथ -साथ विक्रेताओं को भी विज्ञापन से होता है। क्योंकि विज्ञापन द्वारा विक्रेता को ओर अधिक सुविधा मिलती है क्योंकि ग्राहक आस विज्ञापित वस्तु की मांग कर सकता है।

परिभाषाएं (Definitions)

फिलीप कोटलर के अनुसार, "विज्ञापन विपणन-संचार का अवैयक्तिक रूप है, जो परिचित प्रायो द्वारा मीडिया को भुगतान करके करवाया जाता है।" (Advertising is non-personal form communication conducted through paid media under sponsorship - Philip Kotler

लस्कर के अनुसार, "विज्ञापन मुद्रण के रूप में विक्रयकला है।" (Advertising is Salesmans in print -Lasker)

अतः विज्ञापनों द्वारा जनता से माल के क्रय की अपील की जाती है ताकि वे वस्तुओं को क्रय तथा उस वस्तु की बिक्री बढ़ सकें।

विज्ञापन के मुख्य उद्देश्य (Main Objectives of Advertising)

आधुनिक व्यवसाय का मुख्य उद्देश्य ग्राहकों की आवश्यकताओं को पूरा करके समाज की से करना है। विज्ञापन के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार से है -

Scanned with CamScanner

1. **विक्रयकर्ता की सहायता करना (To Assist Salesmen)** – विज्ञापन से भावी ग्राहक के मस्तिष्क में उत्पाद तथा विज्ञापनदाता दोनों की एक अच्छी छवि बन जाती है। जब कम्पनी के विक्रयकर्ता व्यक्तिगत रूप से ग्राहक के पास माल बेचने के लिए जाते है तो विज्ञापन उनका मनोबल बढ़ा देता है क्योंकि सम्भावित ग्राहक को उत्पाद के विषय में पहले से ही जानकारी होती है जिससे विक्रयकर्ता का कार्य आसान हो जाता है तथा उसे ग्राहक को अधिक समझाने की आवश्यकता नहीं होती।

2. **नए उत्पाद को बेचना (To Sell New Product)** – विज्ञापन का सबसे प्रमुख उद्देश्य नए उत्पाद को बाजार में परिचित करवाना है क्योंकि भावी ग्राहकों को इनके सम्बंध में कोई जानकारी नहीं होती। विज्ञापन द्वारा नए उत्पाद की सूचना भावी ग्राहकों को दी जाती है। उन्हें उत्पाद की विशेषताओं, गुण, कीमत, प्रयोग करने की विधि व उपलब्धता के स्थान आदि के बारे में जानकारी दी जाती है।

3. **ग्राहकों को याद दिलाना (To Remind the Customers)** – ऐसे उत्पाद जो बहुत जल्दी-जल्दी तथा थोड़ी-थोड़ी मात्रा में खरीदे जाते है उन्हें विज्ञापन द्वारा ग्राहकों को याद दिलाया जाता है ताकि क्रेता उस उत्पादक की वस्तु को उसके ब्राण्ड नाम से मांगे। ग्राहकों को अपना ब्राण्ड का नाम याद दिलाने के लिए उत्पादकों द्वारा स्लोगन का प्रयोग किया जाता है। इन स्लोगनों से ग्राहक को वस्तु याद रहती है। इससे वस्तु का ब्राण्ड नाम लोकप्रिय हो जाता है।

4. **ख्याति में वृद्धि (To Increase the Goodwill)** – विज्ञापन के द्वारा न केवल वस्तु के विक्रय में वृद्धि होती है अपितु विज्ञापन कराने वाली संस्थाओं की छवि में भी वृद्धि होती है। विज्ञापन से संबंधित सभी पक्षकार जैसे, जनता, सरकार, वित्तीय संस्थायें, अंशधारी तथा कर्मचारियों आदि के मध्य संस्था की प्रसिद्धि करना, विज्ञापन का उद्देश्य हो सकता है।

5. **ग्राहकों को परिवर्तन के बारे में जानकारी देना (To Inform Customers about the changes)** – विज्ञापन का एक अन्य उद्देश्य ग्राहकों को निर्माताओं द्वारा अपनी विपणन रणनीति के निर्माण में किए गए परिवर्तनों की जानकारी देना है। यदि कम्पनी ने विभिन्न तत्वों जैसे उत्पाद, मूल्य, स्थान या संवर्द्धन योजनाओं में कोई परिवर्तन किया है तो इसकी सूचना वर्तमान व भावी ग्राहकों को विज्ञापन के द्वारा दी जा सकती है।

6. **ब्राण्ड वरीयता बनाया (To Create Brand Preference)** – किसी विशिष्ट ब्राण्ड के प्रति वरीयता बनाए रखने के उद्देश्य से भी विज्ञापन कराया जाता है ताकि उपभोक्ता उसी ब्राण्ड को खरीदे। ब्राण्ड वरीयता के द्वारा ग्राहकों में ब्राण्ड के प्रति वफादारी को उत्पन्न किया जा सकता है।

7. **मध्यस्थों को वस्तु बेचने के लिए विवश करना (To Force Middlemen to Handle the Product)** – विज्ञापन का उद्देश्य विक्रेताओं को इस बात के लिए विवश करना है कि वे उस निर्माता की वस्तुओं को अपने यहां विक्रय करने हेतु रखे जिनका विज्ञापन किया जा रहा है। यह तभी सम्भव है जबकि ग्राहक विज्ञापनों से प्रभावित होकर उस वस्तु को क्रय करने के लिए उन मध्यस्थ विक्रेताओं से पूछताछ करें।

संक्षेप में, विज्ञापन व्यवसाय के जीवन काल में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। विज्ञापन का उद्देश्य निर्माताओं को लाभ पहुंचाना, ग्राहकों को शिक्षित करना तथा विक्रयकर्ताओं की मदद करना है।

विज्ञापन के महत्व (Importance of Advertisements)

आधुनिक समय में विज्ञापन का महत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। विज्ञापन किसी भी देश के

Scanned with CamScanner

आर्थिक विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। यह लक्षित श्रोताओं तक अपनी बात
का एक प्रभावी तरीका है। विज्ञापन से विभिन्न वर्गो जैसे निर्माताओं, उपभोक्ताओं तथा समा
अनेक लाभ मिलते है। इन वर्गो के लिए विज्ञापन का महत्व इस प्रकार से है -

1. **निर्माताओं के लिए महत्व (Importance to Manufactures/Producers) :–** निर्माताओं के
विज्ञापन का महत्व इस प्रकार से होता है -

क) **विक्रय में वृद्धि (Increase in Sales) :–** विज्ञापन की सहायता से उत्पाद की मांग का सृजन
जाता है जिससे विक्रय में वृद्धि होती है। विज्ञापन द्वारा उत्पादक ग्राहकों को नए उत्पाद, क
उत्पाद में परिवर्तन, उत्पाद के उपयोग, उपलब्धता के स्थान तथा कीमत आदि से सम्बंधित जान
देता है।

ख) **प्रति इकाई लागत में कमी (Lower Per Unit Price) :–** विज्ञापन उत्पाद की मांग का
करता है इससे बड़े पैमाने पर उत्पादन किया जाता है तथा बड़े पैमाने पर उत्पादन करने से
इकाई उत्पादन लागत तथा वितरण लागत में कमी आती है। जिसके परिणामस्वरूप निर्माता
बड़े पैमाने की बचते प्राप्त होती है।

ग) **ख्याति में वृद्धि (Increase in Goodwill) :–** विज्ञापन निर्माता के ब्राण्ड को प्रसिद्ध करने
सहायता करता है। यदि कम्पनी के उत्पाद की कीमत तथा किस्म उपभोक्ताओं की आवश्यकता
को संतुष्ट करती है तो इससे कम्पनी की ख्याति में वृद्धि होती है।

2. **उपभोक्ताओं के लिए महत्व (Importance to Customers) :–** विज्ञापन का उपभोक्ताओं
लिए महत्व इस प्रकार से है:-

क) **वस्तु का चयन करने में आसानी (Convenience in Selection of Goods) :–** विज्ञापन
विज्ञापन द्वारा ग्राहकों को उत्पाद की कीमत, गुण, मूल्य तथा क्वालिटी के बारे में जानकारी
है जिससे ग्राहकों के लिए उपयुक्त ब्राण्ड का चयन करना सरल हो जाता है।

ख) **जीवन-स्तर में वृद्धि (Increase in Standard of Living) :–** विज्ञापन से लोगों के जीवन
में भी सुधार आता है क्योंकि उन्हें विज्ञापन के द्वारा महंगी वस्तुएं कम कीमतों पर उपलब्ध हो
है। व्यक्ति जितनी अधिक वस्तुओं कां उपयोग करता है उसके जीवन स्तर में उतनी ही अधिक
होती है।

ग) **उत्पाद की कीमतो में कमी (Reduction in Prices of Product) :–** विज्ञापन में द्वारा
पैमाने पर उत्पादन व विक्रय किया जाता है जिससे प्रति इकाई उत्पादन लागतों में कमी आत
जिसके फलस्वरूप उत्पादक ग्राहकों को आकर्षित करने के लिए कीमतों में कमी कर देते है जि
फलस्वरूप उपभोक्ता को कम कीमत पर उत्पाद उपलब्ध हो जाता है।

घ) **उपभोक्ताओं के ज्ञान में वृद्धि (Increase in Knowledge of Consumers) :–** विज्ञ
उत्पाद की कीमत, उनके प्रयोग की विधि, उपलब्धता के स्थान आदि के सम्बंध में उपभोक्
के ज्ञान में वृद्धि करता है। यह जनसाधारण को घातक बीमारियों जैसे एड्स, पोलियों, टी
आदि के विषय में भी शिक्षित करता है।

3. **समाज के लिए महत्व (Importance to Society) :–** समाज के लिए विज्ञापन का महत्व
प्रकार से है -

Scanned with CamScanner

क) **रोजगार के अवसरों में वृद्धि (Increase in Employment Opportunities) :–** विज्ञापन समाज के एक बड़े वर्ग को प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से रोजगार प्रदान करता है। विज्ञापन अनेक कर्मचारी वर्गों जैसे- विज्ञापन प्रति तैयार करने वालों, पोस्टर बनाने वालों, विज्ञापन सेवाएं देने वालों आदि की रोजी-रोटी का साधन बन गया है।

ख) **निर्यातों में वृद्धि (Increase in Exports) :–** विज्ञापन के द्वारा उत्पाद को विदेशी बाजारों में विक्रय करने में सहायता मिलती है जिसके परिणाम स्वरूप निर्मातों में वृद्धि होती है। निर्मातों में वृद्धि होने से विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है।

ग) **मध्यस्थों की संख्या को कम करना (Reduction Number of Middlemen) :–** विज्ञापन मध्यस्थों की संख्या को कम करते है। यह उत्पादक तथा उपभोक्ताओं के मध्य प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित करते है। इससे उपभोक्ताओं को कम कीमत पर उत्पाद उपलब्ध हो जाता है। उत्पादक तथा उपभोक्ता के मध्य प्रत्यक्ष सम्पर्क होने के कारण अधिक मध्यस्थों की आवश्यकता नहीं होती।

घ) **समाचार-पत्रों की आय में वृद्धि (Increase in the Income of Newspapers) :–** समाचार पत्रों की कीमत कम होने का कारण उन्हें विज्ञापनों से प्राप्त होने वाली आय है। यदि समाचार-पत्र में विज्ञापन नहीं दिए जाते तो समाचार-पत्रों का मूल्य काफी अधिक होता जो एक साधारण व्यक्ति की पहुंच से बाहर होता।

विज्ञापन के माध्यम (Media of Advertising)

उत्तर- विज्ञापन माध्यम से अभिप्राय उस वाहन से है जो विज्ञापनकर्ता का संदेश लक्षित श्रोताओं तक पहुंचाता है। विज्ञापन माध्यमों की सहायता से विज्ञापनकर्ता भावी श्रोताओं से सम्पर्क करता है तथा उन्हें विज्ञापित उत्पाद या सेवा से अवगत कराता है तथा उत्पाद क्रय करने के लिए प्रेरित करता है। विज्ञापन माध्यम विभिन्न प्रकार के हो सकते है जैसे - प्रेस मीडिया, डाक द्वारा प्रत्यक्ष विज्ञापन, बाह्य विज्ञापन तथा विविध विज्ञापन आदि।

परिभाषाएँ (Definitions) –

प्रो. ब्रैनन के अनुसार, "विज्ञापन माध्यम एक ऐसा भौतिक साधन है जिसके द्वारा एक निर्माता अथवा वितरक अपने उत्पादों या सेवाओं के बारे में उपभोक्ताओं को जानकारी देता है। (The term media embraces each and every method that the advertiser has at his command to carry his message to the public - Brennan)

फिलिप कोटलर के अनुसार, "सम्प्रेषण माध्यम जो संदेश को प्रेषक से प्राप्तकर्ता तक ले जाते है, उन्हें मीडिया कहते है।" (The communication channels through which message moves from sender to receiver is called media- Philip Kotler)

विज्ञापन के माध्यमों को निम्नलिखित श्रेणियों में बांटा जा सकता है -

1. प्रिंट विज्ञापन मीडिया
2. डाक द्वारा प्रत्यक्ष विज्ञापन
3. बाह्य विज्ञापन
4. विविध विज्ञापन

Scanned with CamScanner

1. प्रिंट विज्ञापन मीडिया (...) ... कहलाता है। प्रकाशित विज्ञापन के आदि के माध्यम से किया जाने वाला विज्ञापन मीडिया कहलाता है। प्रेस विज्ञापन मीडिया को शिक्षित समुदाय से मीडिया' या 'प्रिंट मीडिया' भी कहा जाता है। प्रेस विज्ञापन मीडिया को शिक्षित समुदाय से ग्राहकों तक संदेश पहुंचाने का सर्वाधिक मितव्ययी, प्रभावी एवं लोचशील माध्यम माना ...

प्रिंट विज्ञापन के लाभ (Advantages of Press Advertising)

क) तत्काल प्रदर्शन (Immediate Appearance) :- विज्ञापन तैयार करने में अथवा ... अधिक समय नहीं लगता।

ख) वैश्विक निवेदन (Universal Appeal) :- प्रेस विज्ञापन की एक विशेषता यह है कि ... -पत्र की पहुंच दूर-दूर तक है जिससे संदेश दूर तक पहुंच जाता है।

ग) कम कीमत (Low Price) :- विज्ञापन की लागत अन्य माध्यमों की तुलना में प्रति ग्राहक कम ... है।

प्रेस विज्ञापन के दोष (Disadvantages of Press Advertising) :-

क) प्रेस विज्ञापन का एक दोष यह है कि इसमें विज्ञापन घटिया कागज पर छपाई एवं प्रूफ रीडिंग ... गलतियों के कारण विज्ञापन अधिक आकर्षक नहीं लगता।

ख) प्रेस विज्ञापन का एक अन्य दोष यह है कि यह केवल शिक्षित वर्ग के लिए ही उपयुक्त होता ...

ग) प्रेस विज्ञापन जो समाचार पत्र-पत्रिकाओं में होता है उनका जीवन बहुत कम होता है। इसलिए ग्राहकों के मस्तिष्क पर प्रभाव डालने के लिए विज्ञापन को बार-बार दोहराना आवश्यक है।

2. डाक द्वारा प्रत्यक्ष विज्ञापन (Direct Advertising through Mail) :- डाक द्वारा प्र... विज्ञापन से आशय ऐसे विज्ञापन से है जिसमें विज्ञापनकर्ता ग्राहकों से डाक द्वारा सम्पर्क स्थापित क... है। इसमें विज्ञापनकर्ता कुछ चुने हुए लोगों को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए उनके पास ... रूप से छपे हुए अथवा लिखित संदेश भेजता है। विज्ञापन के द्वारा ग्राहकों को दुकान पर न बुला... उनके घर पर ही डाक द्वारा प्राप्त आदेशों की वस्तुओं को पहुंचाना होता है।

डाक विज्ञापन के लाभ (Advantages of Mail Advertising)

क) डाक द्वारा प्रत्यक्ष विज्ञापन में विक्रेता तथा क्रेता के मध्य प्रत्यक्ष सम्पर्क हो पाता है।

ख) इस प्रकार विज्ञापन ग्राहकों का ध्यान अधिक आकर्षित करता है क्योंकि इसमें एक ही वस्तु का विज्ञा... किया जाता है।

ग) इसमें ग्राहकों की सूची को सुरक्षित रख कर तथा उनसे बार-बार पत्र-व्यवहार करके उनको स्थ... ग्राहक बनाया जा सकता है।

डाक विज्ञापन के दोष (Disadvantages of Mail Advertising)

क) इसमें छल-कपट की सम्भावना अधिक होती है। क्योंकि यहां पर वस्तुएं बिना किसी जांच के विज्ञा... देखकर ही खरीदी जाती है। अतः इसमें छल-कपट की सम्भावनाएं बढ़ जाती है।

ख) यह पद्धति केवल विशेष प्रकार की वस्तुओं के लिए ही उपयुक्त होती है।

3. बाह्य विज्ञापन (Outdoor Advertising) :- बाह्य विज्ञापन से आशय संस्था के बाहर या ... के बाहर दिए जाने वाले विज्ञापनों से है। यह विज्ञापन का परम्परागत तरीका है जिसका वर्तमा... समय में भी बड़े पैमाने पर प्रयोग हो रहा है। बाह्य विज्ञापन को दीवार विज्ञापन तथा बाह्य मीडिया भी कहा जाता है। वाहनों पर भी विज्ञापन बोर्ड लगाए जाते है। लाउडस्पीकर द्वारा गली-मुहल्ले में मुनादी करवाई जाती है।

बाह्य विज्ञापन के लाभ (Advantages of Outdoor Advertising)

क) बाह्य विज्ञापन अत्यंत आकर्षक होते है तथा रास्ते चलते राहगीरों को आकर्षित कर लेते है जिससे विज्ञापन सबसे अधिक जनता तक पहुंचता है।

ख) यह विज्ञापन कम खर्चीले होते है तथा इनका जीवनकाल अधिक होता है।

बाह्य विज्ञापन के दोष (Disadvantages of Outdoor Advertising)

क) बाह्य विज्ञापन में जनता का प्रयोग किया जाता है जोकि सामाजिक दृष्टि से अनुचित है।

ख) बाह्य विज्ञापन शहर की प्राकृतिक सुंदरता को नष्ट कर देते है।

4. विविध विज्ञापन (Miscelloneous Advertising)

क) रेडियों (Radio) :- रेडियों विज्ञापन का सबसे मुख्य और प्रभावशाली तरीका है। यह विज्ञापनकर्ता का संदेश बोले गए शब्दों (Spoken Words) के द्वारा प्रेषित किया जाता है। यदि इसका व्यवस्थित ढंग से प्रयोग किया जाए तो इससे अच्छा साधन कोई और नहीं है। वर्तमान समय में रेडियों सुनने वालों की संख्या कम होने के बावजूद भी ग्रामीण क्षेत्रों में यह काफी लोकप्रिय है। व्यावसायिक विज्ञापन ऑल इण्डिया रेडियों की आय का प्रमुख स्त्रोत है। तथा एफ एम रेडियों प्रसारण में तो रेडियों विज्ञापन में नई जान डाल दी है।

ख) टेलीविजन (Television) :- वर्तमान में लगभग 90 प्रतिशत जनसंख्या टेलीविजन को मनोरंजन के साधन के रूप में प्रयोग कर रही है। टेलीविजन एक ऐसा यंत्र है जो शब्दों तथा चित्रों को एक साथ दर्शकों के सम्मुख प्रस्तुत करता है। आज के युग में विकसित देशों में टेलीविजन का महत्व बहुत बढ़ गया है। इसमें उपभोक्ताओं के समक्ष उत्पाद सम्बंधी गुणों की व्याख्या के साथ-साथ उसे प्रयोग करने की विधि भी स्पष्ट रूप से दिखाई जाती है जिससे विज्ञापन के प्रति उपभोक्ता की रूचि जागृत होती है।

ग) मेले तथा प्रदर्शनियाँ (Fair and Exibitions) :- निर्माताओं द्वारा मेलों व प्रदर्शनियों में स्टाल लगाकर भी वस्तुओं का विज्ञापन किया जाता है जिससे ग्राहकों को वस्तु के निरीक्षण का अवसर मिलता है। प्रदर्शनियां स्थानीय, राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर आयोजित की जाती है। इससे बड़ी संख्या में ग्राहकों को वस्तु की विस्तृत जानकारी दी जाती है तथा ग्राहकों की प्रतिक्रिया और सुझाव भी लिये जाते है।

उद्देश्य (Objectives)

उपर्युक्त विषय वस्तु को पढ़ाने के उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

1. विज्ञापन को परिभाषित कर पाऐंगे।
2. छात्र विज्ञापन के विभिन्न माध्यमों के बारे में जान पायेंगे तथा बता पायेंगे।
3. छात्र विज्ञापन के महत्वों को जान पायेंगे।

Scanned with CamScanner

4. छात्र विज्ञापन के प्रिंट मिडिया और गैर-प्रिंट मिडिया में भेद कर पाएंगे।
5. छात्र एक उचित विज्ञापन की गुणवत्ता के जान पाएंगे।

शिक्षण विधियाँ (Teaching Methods)

विषय वस्तु का ज्ञान कराने में या विषय वस्तु का वर्णन करने में निम्न विधियों का प्रयोग कि है।

1. व्याख्यान विधि
2. प्रश्नोत्तर विधि
3. भाषण विधि
3. वाद विवाद विधि
5. भ्रमण विधि
6. योजना विधि
7. प्रयोगात्मक विधि

शिक्षण सामग्री या सहायक सामग्री (Teaching Materials or Teaching Aids)

विषय वस्तु की व्याख्या में निम्नलिखित सहायक सामग्री का प्रयोग किया गया।

क. चाट - श्यामपट्ट कार्य हेतु
ख. मुख्य बिन्दु दर्शाने हेतु
ग. संकेतक - बिन्दुओं को दर्शाने हेतु
घ. ओवर हैड प्रोजेक्टर - सम्पूर्ण विषयवस्तु का प्रक्षेपण हेतु
ड़. मॉडल - बैंकिंग प्रणाली दर्शाने हेतु।

मूल्यांकन (Evaluation)

क. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न -

1. विज्ञापन से आप क्या समझते हैं?
2. विज्ञापन के विभिन्न माध्यम कौन-कौन से हैं?
3. एक उचित विज्ञापन में कौन-कौन से गुण होने चाहिएं।

ख. लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. विज्ञापन को परिभाषित कीजिए।
2. विज्ञापन माध्यमों को परिभाषित कीजिए।
3. प्रिंट मिडिया को परिभाषित कीजिए।

ग. अति लघु प्रश्न -

1. विज्ञापन के महत्व क्या हैं?
2. विज्ञापन के दो माध्यमों का बताइए।
3. प्रिंट मिडिया के दो माध्यम बताइए।

ड़. बहु विकल्पीय प्रश्न -

1. प्रिंट मिडिया का साधन नहीं है -

(क) अखबार (ख) पत्रिका

Scanned with CamScanner

(ग) पोस्टर (घ) टीवी

2. विज्ञापन का गुण नहीं है -

(क) लोगों को प्रभावित करना (ख) उत्पाद की सूचना देना

(ग) उत्पाद के प्रयोग बताना (घ) खर्चीला होना

च. रिक्त स्थान -

1. अंग्रेजी में विज्ञापन के लिए ..... शब्द का प्रयोग किया जाता है।

2. विज्ञापन ..... एक ऐसा भौतिक साधन है जिसके द्वारा एक निर्माता अथवा वितरक अपने उत्पादों या सेवाओं के बारे में उपभोक्ताओं को जानकारी देता है।

छ. हाँ या नहीं वाले प्रश्न -

1. अखबार एक प्रिंट मिडिया है। ( )

2. टीवी एवं रेडियो एक गैर-प्रिंट मिडिया है। ( )

निष्कर्ष (Conclusion)

विज्ञापन के शिक्षा शास्त्रीय विश्लेषण के द्वारा शिक्षण कार्य को सरल बनाया जा सकता है और इसका उद्देश्य है कि छात्र इस प्रकार विषय वस्तु के विषय में पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर सकें तथा इसके द्वारा एक छात्राध्यापक को उचित प्रश्नों के वर्गीकरण का ज्ञान होता है। अतः शिक्षा शास्त्रीय विश्लेषण के विषय में ज्ञान होना अति आवश्यक व उपयोगी है।

Scanned with CamScanner

(ग) स्थिति विवरण (Balance Sheet)

'एकांउटिंग स्टैण्डर्ड्स बोर्ड' भारत ने स्थिति-विवरण को ऐसे परिभाषित किया है- "किसी व्य वित्तीय स्थिति का एक ऐसा विवरण जिसमें एक निश्चित तिथि को एक उद्योग की संपत्तियों, पूंजी संचय तथा अन्य खातों के शेषों को उनके पुस्तक मूल्यों पर दर्शाया जाता है स्थिति विवरण है।" संपत्तियों को निम्न प्रकार परिभाषित किया गया है- "एक व्यवसाय के द्वारा स्वामि वास्तविक वस्तुएं या अवास्तविक अधिकार जिनसे भविष्य में सभावित लाभ हों, संपत्तियां हैं।" को एक उपक्रम के स्वामीकोष, को छोड़कर दूसरे वित्तीय देनदारियों के रूप में परिभाषित किया पूंजी को एक उपक्रम के स्वामियों द्वारा उपक्रम में निवेश किए गए धन को माना गया है। ये की संपत्तियों में स्वामियों के हित के रूप में भी समझी जा सकती हैं। इसलिए स्थिति विवरण एक तिथि को उपक्रम की वित्तीय स्थिति का विवरण प्रस्तुत करते हैं। इसी कारण इसे वित्तीय स्थि विवरण या वित्तीय दशा का विवरण भी कहा जाता है। वित्तीय विश्लेषण हैंड बुक के अनुसार स एक निश्चित बिन्दु पर वित्तीय दशा की वर्तमान स्थिति के रूप में स्थिति विवरण व्यवसाय के द्वार गई मुख्य संपत्तियों, बाहरी व्यक्तियों द्वारा दिए गए दायित्वों और स्वामी के दावों को प्रस्तुत कर संक्षेप में स्थिति विवरण एक निश्चित समय तिथि पर वित्तीय स्थिति का चित्र प्रस्तुत करता है।

BALANCE SHEET

as on or as at.....

LIABILITIES		ASSETS	
Current Liabilities :		***Current Assets :***	
Bills Payable		Cash at Bank	
Sundry Creditors		Bills Receivable	
Outstanding expenses		Short Term Investments	
Unearned Income		Sundry Debtors	
Fixed Liabilities :		Closing Stock	
Long term loans		Prepaid Expenses [see note (iii)]	
Reserves		Accrued Income	
Capital		***Fixed Assets :***	
Add: Net Profit		Loose Tools	
Less Net Loss		Motor Vehicle	
Less: Drawings		Long Term Investments	
		Plant and Machinery	
		Land and Building	
		Patents	
		Goodwill	

Scanned with CamScanner

उद्देश्य (Objectives)

उपर्युक्त विषय वस्तु को पढ़ाने के उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

1. स्थिति विवरण को परिभाषित कर पाऐंगे।
2. छात्र स्थिति विवरण के दोनों पक्षों को समझ पायेंगे।
3. छात्र दायित्वों एवं सम्पतियों को विस्तार से समझ पाएंगे।
4. छात्र दायित्वों पक्ष में आने वाली विभिन्न मदों का जान पाएंगे।
5. छात्र सम्पति पक्ष में आने वाली विभिन्न मदों का जान पाएंगे।

शिक्षण विधियाँ (Teaching Methods)

विषय वस्तु का ज्ञान कराने में या विषय वस्तु का वर्णन करने में निम्न विधियों का प्रयोग किया गया है।

1. व्याख्यान विधि
2. प्रश्नोत्तर विधि
3. भाषण विधि
3. वाद विवाद विधि
5. भ्रमण विधि
6. योजना विधि
7. प्रयोगात्मक विधि

शिक्षण सामग्री या सहायक सामग्री (Teaching Materials or Teaching Aids)

विषय वस्तु की व्याख्या में निम्नलिखित सहायक सामग्री का प्रयोग किया गया।

क. चाट - श्यामपट्ट कार्य हेतु

ख. मुख्य बिन्दु दर्शाने हेतु

ग. संकेतक - बिन्दुओं को दर्शाने हेतु

घ. ओवर हैड प्रोजेक्टर - सम्पूर्ण विषयवस्तु का प्रक्षेपण हेतु

ड़. मॉडल - बैंकिंग प्रणाली दर्शाने हेतु।

मूल्यांकन (Evaluation)

क. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न -

1. स्थिति विवरण से क्या तात्पर्य है?
2. स्थिति विवरण के दायित्व पक्ष एवं सम्पत्ति पक्ष क्या हैं?
3. स्थिति विवरण क्या सूचना देती है?

ख. लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. स्थिति विवरण को परिभाषित कीजिए।
2. दायित्व पक्ष की विभिन्न मदों का वर्णन करें।
3. सम्पत्ति पक्ष में आने वाली विभिन्न मदों का वर्णन करें।

ग. अति लघु प्रश्न -

1. दायित्व क्या हैं?
2. सम्पत्तियां क्या हैं?

Scanned with CamScanner

3. दीर्घकालीन दायित्व क्या है?

ङ. बहु विकल्पीय प्रश्न -

1. सम्पत्ति पक्ष की मद नहीं है -
   (क) लेनदान (ख) देनदार
   (ग) भूमि (घ) मशीनरी
2. सम्पत्ति पक्ष की मद नहीं है -
   (क) देनदार (ख) निवेश
   (ग) पूंजी (घ) भूमि

च. रिक्त स्थान -

1. वे समस्त वस्तुऐ जिन्हें पैसे में परिवर्तित किया जा सकता है एवं उन पर संस्था का स्वामित्व है ..... कहलाती हैं।
2. पूंजी को स्थिति विवरण के ..... पक्ष में दर्शाया जाता है।

छ. हाँ या नहीं वाले प्रश्न -

1. पूंजी को स्थिति विवरण के दायित्व पक्ष में दर्शाया जाता है। ( )
2. लेनदारों को स्थिति विवरण के सम्पत्ति पक्ष में दर्शाया जाता है। ( )

(घ) रोकड़ बही (Cash Book)

रोकड़ बही वह पुस्तक है जिसमें नकद प्राप्तियों व भुगतानों से संबंधित सभी लेन-देनों का अभिलेखन किया जाता है। इसे अवधि विशेष में नकद अथवा बैंकस्थ रोकड़ के प्रारंभिक शेष से आरंभ किया जाता है। साधारणतः यह प्रति मास बनाई जाती है। यह एक लोकप्रिय पुस्तक है इसलिए व्यापार चाहे छोटा हो या बड़ा, संस्था लाभार्जन के उद्देश्य वाली हो या गैर लाभकारी सभी रोकड़ बही अवश्य बनाते हैं यही वह पुस्तक है जो रोजनामचा व खाता-बही दोनों के उद्देश्य पूर्ण करती है। क्योंकि रोकड़ बही में लेन-देनों की प्राथमिक प्रविष्टि की जाती है। इसलिए इसे मूल प्रविष्टि की बही भी कहते हैं। इसके डेबिट पक्ष में रोकड़ की प्राप्ति को दर्शाया जाता है एवं क्रेडिट पक्ष में रोकड़ के भुगतान को दर्शाया जाता है। रोकड़ बही तीन स्थितियों में बनाई जाती है।

1. जब केवल फर्म के रोकड़ के लेन-देन का हिसाब रखना है।
2. जब फर्म के रोकड़ के लेन-देन एवं बैंक आदि के देन-देन का हिसाब भी रखना है।
3. जब फर्म रोकड़, बैंक लेन-देन एवं विभिन्न डिसकाउन्टों का हिसाब रखना चाहती है तो रोकड़, बैंक लेन-देन एवं डिसकान्ट का हिसाब रखा जाता है।

इन तीनो स्थितियों के लिए रोकड़ बही तीन प्रकार के प्रारूप बनाये जाते हैं। जो निम्नलिखित हैं -

1. **सिंगल कॉलम केस बुक** - इस स्थिति में केवल रोकड़ की प्राप्ति एवं भुगतान का हिसाब रखा जाता है।
2. **टू कॉलम केस बुक** - इस स्थिति में रोकड़ लेन-देन एवं बैंक से हुए लेन-देन का हिसाब रखा जाता है।
3. **थ्री कॉलम केस बुक** - इस स्थिति में रोकड़, बैंक लेन-देन के साथ-साथ डिस्काउन्ट का भी हिसाब रखा जाता है कि डिस्काउन्ट के रूप में कितने रोकड़ में वृद्धि हुई और कितने रोकड़ की बचत हुई।

Single Column Cash Book

Dr. Cr.

Date	Particulars	J.F.	R No.	Amount (Rs.)	Date	Particulars	J.F.	V No.	Amount (Rs.)

Double Column Cash Book

Dr. Cr.

Date	Particular	Cash	Bank	Date	Particular	Cash	Bank

Three Column Cash Book

Dr Receipts Payments Cr

Date	Particular	Dis- Rs.	Cash Rs.	Bank Rs.	Date	Particulars	Dis- Rs.	Cash Rs	Bank Rs.

उद्देश्य (Objectives)

उपर्युक्त विषय वस्तु को पढ़ाने के उद्देश्य निम्नलिखित हैं -

1. छात्र रोकड़ बही को परिभाषित कर पाऐंगे।
2. छात्र रोकड़ के दोनों पक्षों को समझ पायेंगे।
3. छात्र रोकड़ बही के विभिन्न प्रारूपों को समझ पायेंगे।
4. छात्र डेबिट पक्ष में आने वाली मदों को समझ सकेंगे।
5. छात्र क्रेडिट पक्ष में आने वाली मदों को समझ सकेंगे।

शिक्षण विधियाँ (Teaching Methods)

विषय वस्तु का ज्ञान कराने में या विषय वस्तु का वर्णन करने में निम्न विधियों का प्रयोग किया गया है

Scanned with CamScanner

3. भाषण विधि
5. भ्रमण विधि
7. प्रयोगात्मक विधि
6. योजना विधि

शिक्षण सामग्री या सहायक सामग्री (Teaching Materials or Teaching Aids)

विषय वस्तु की व्याख्या में निम्नलिखित सहायक सामग्री का प्रयोग किया गया।

क. चार्ट - श्यामपट्ट कार्य हेतु

ख. मुख्य बिन्दु दर्शाने हेतु

ग. संकेतक - बिन्दुओं को दर्शाने हेतु

घ. ओवर हैड प्रोजेक्टर - सम्पूर्ण विषयवस्तु का प्रक्षेपण हेतु

ङ. मॉडल - बैंकिंग प्रणाली दर्शाने हेतु।

मूल्यांकन (Evaluation)

क. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न -

1. रोकड़ बही से क्या तात्पर्य है?
2. रोकड़ बही के डेबिड पक्ष एवं क्रेडिट पक्ष क्या हैं?
3. रोकड़ बही के विभिन्न प्रारूप कौन-कौन से हैं?

ख. लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. रोकड़ बही को परिभाषित कीजिए।
2. डेबिट पक्ष की विभिन्न मदों का वर्णन करें।
3. क्रेडिट पक्ष में आने वाली विभिन्न मदों का वर्णन करें।

ग. अति लघु प्रश्न -

1. रोकड़ बही क्या है?
2. दो कॉलम रोकड़ बही क्या है?
3. तीन कॉलम रोकड़ बही क्या है?

घ. बहु विकल्पीय प्रश्न -

1. जब केवल रोकड़ का हिसाब रखना होता है तो कितने कॉलम की रोकड़ बही बनाई जाती है?
   (क) एक (ख) तीन
   (ग) दो (घ) चार
2. रोकड़ बही में किन लेन-देनों का लेखा किया जाता है -
   (क) केवल रोकड़ के लेन-देन (ख) संस्था के समस्त लेन-देन
   (ग) उधार के लेन-देन (घ) उपरोक्त सभी गलत हैं

घ. रिक्त स्थान -

1. रोकड़ बही में केवल ..... लेन-देन का हिसाब रखा जाता है।
2. एक कॉलम रोकड़ बही में केवल ..... का कॉलम बनाया जाता है।

ङ. हाँ या नहीं वाले प्रश्न -

1. रोकड़ बही में केवल नकद लेन-देन का हिसाब रखा जाता है। ( )
2. रोकड़ की प्राप्तियाँ क्रेडिट पक्ष में लिखी जाती हैं। ( )

(इ) GST/VAT की गणना (GST/VAT Calculation)

मूल्य वर्धित कर (VAT), या वस्तु और सेवा कर (GST) एक उपभोग कर (CT) है, किसी भी मूल्य पर जो एक उत्पाद में जोड़ी जाती है। बिक्री कर के विपरीत, VAT, उत्पादक और अंतिम उपभोक्ता के बीच मार्ग की संख्या के संबंध में तटस्थ है। जहां बिक्री कर प्रत्येक चरण में कुल मूल्य पर लगाया जाता है (हालांकि अमेरिकी और कई अन्य देशों में बिक्री कर सिर्फ अंतिम उपभोक्ता को अंतिम बिक्री पर लगाया जाता है और अंतिम उपयोगकर्ता उपयोग कर, इस तरह वहां थोक या उत्पादन स्तर पर कोई बिक्री कर नहीं दिया जाता), इसका परिणाम एक सोपान है (नीचे के कर ऊपर के करों पर लगाए जाते हैं)।

VAT एक अप्रत्यक्ष कर है, इस रूप में कि कर को ऐसे किसी से एकत्र किया जाता है जो कर का पूरा खर्च नहीं उठाता।

मौरिस लौरे फ्रेंच कर प्राधिकरण के संयुक्त निदेशक, Direction générale des impôts प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने 10 अप्रैल 1954 को VAT पेश किया, हालांकि जर्मन उद्योगपति डॉ. विल्हेम वॉन सीमेंस ने 1918 में इस अवधारणा का प्रस्ताव दिया था। शुरू में बड़े पैमाने के कारोबारों पर लक्ष्यित, समय के साथ सभी व्यावसायिक क्षेत्रों को शामिल करने के लिए इसका विस्तार किया गया। फ्रांस में यह देश के वित्त का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत है, जो देश के राजस्व में 52 प्रतिशत का योगदान करता है।

उत्पादों और सेवाओं के निजी अंतिम उपभोक्ता, खरीद पर VAT को वसूल नहीं सकते, लेकिन उद्योग उन माल और सेवाओं पर जिन्हें वे आगे की आपूर्ति या सेवा प्रदान करने के लिए खरीदते हैं, जिसे सीधे या परोक्ष रूप से अंतिम उपयोगकर्ता को बेचा जाएगा, VAT को वसूल सकते हैं। इस तरह, आपूर्ति की आर्थिक श्रृंखला में प्रत्येक स्तर पर लगाया गया कुल कर, मूल्य का एक निरंतर अंश है जो एक व्यवसाय द्वारा अपने उत्पादों में जोड़ा जाता है और कर संग्रह की लागत का अधिकांश, राज्य के बजाय कारोबार द्वारा वहन किया जाता है। VAT का आविष्कार इसलिए किया गया क्योंकि बहुत अधिक बिक्री करों और शुल्कों ने धोखाधड़ी और तस्करी को प्रोत्साहित किया। आलोचकों का कहना है कि इससे मध्यम वर्गीय और कम आय वाले घरों पर असंगत रूप से कर का बोझ बढ़ जाता है।

बिक्री कर एवं VAT

मूल्य योजित कर, उत्पादन के हर चरण में योजित मूल्य पर कर लगा कर बिक्री कर के सोपान असर से बचाता है। पारंपरिक बिक्री कर की बजाय मूल्य योजित कराधान को दुनिया भर में पसंद किया जा रहा है। सिद्धांत रूप में, मूल्य योजित कर उन सभी वाणिज्यिक गतिविधियों पर लागू

Scanned with CamScanner

होते है जिसमे माल का उत्पादन और वितरण ... VAT का मूल्यांकन और एकत्रण किया जाता है। के प्रत्येक लेनदेन मे माल मे जुड़े मूल्य पर VAT का ... अवधारणा के तहत सरकार को प्रत्येक लेनदेन के सकल मार्जिन पर कर दिया जाता है।

भारत जैसे कई विकासशील देशों मे, बिकी कर/VAT एक महत्वपूर्ण राजस्व स्रोत है ... उच्च बेरोजगारी और न्यून प्रति व्यक्ति आय, अन्य आय स्रोतों को अपर्याप्त बना देती है। हालांकि, उप-राष्ट्रीय सरकारों द्वारा इसका विरोध होता है चूंकि इससे उनके द्वारा एकत्रित कुल राजस्व मे कमी होती है साथ ही साथ स्वायत्तता का कुछ नुकसान भी होता है।

बिकी कर आमतौर पर उपभोक्ताओं को केवल अंतिम बिकी पर लगाए जाते है - प्रतिपूर्ति ... वजह से, VAT का अंतिम कीमतों पर वैसा ही समय आर्थिक प्रभाव पड़ता है। मुख्य अंतर, ... अतिरिक्त लेखांकन का है जिसे उन लोगों द्वारा करने की आवश्यकता होती है जो आपूर्ति श्रृंखला ... बीच मे आते है, VAT की इस कमी को, उत्पादन श्रृंखला के प्रत्येक सदस्य पर, उनकी और प्राप्त ... की इस श्रृंखला मे स्थिति को ध्यान ना देकर और उनकी स्थिति की जांच करने और प्रमाणित करने के प्रयास को खत्म कर, समान कर के प्रयोग द्वारा संतुलित किया जाता है। जब VAT प्रणाली मे कुछ छूट हो तो, यदि कोई हो, जैसा की न्यूजीलैंड मे GST के साथ, VAT का भुगतान करना और ... आसान हो जाता है।

एक सामान्य आर्थिक विचार यह है कि यदि बिकी कर 10% से अधिक हो जाता है तो लोग बड़े पैमाने पर करापवंचन गतिविधियों मे लिप्त हो जाते हैं (जैसे इंटरनेट पर खरीददारी करना, ... कारोबार होने का नाटक करना, थोक मे खरीदना, एक नियोक्ता के माध्यम से उत्पादों की खरीद आदि) दूसरी ओर, कुल VAT दर, अभिनव संग्रह प्रणाली के कारण व्यापक चोरी के बिना 10% से अधिक हो सकती है। तथापि, क्योंकि अपने संग्रह की विशेष व्यवस्था के कारण, VAT काफी आसानी से विशिष्ट धोखाधड़ी का निशाना बन जाती है जैसे कैरोजल फ्रॉड जो राज्यों के लिए कर आमदनी में कमी के मामले मे बहुत महंगा हो सकता है।

VAT का सिद्धांत

VAT लागू करने के लिए मानक तरीका यह सिद्धांत है कि एक व्यापार उत्पाद की कीमत से पूर्व में चुकाए गए सभी कर को घटाते हुए कुछ प्रतिशत का अधिकार रखता है। यदि VAT दर 10% है, तो एक संतरे का रस निर्माता प्रति गैलन कीमत 5 रूपये के 10% (50 पैसे) को संतरे के किसान द्वारा पूर्व मे भुगतान किये गए कर से घटा कर देगा (शायद 20 पैसे)। इस उदाहरण में, संतरे का रस निर्माता 30 पैसे कर देयता होगा। प्रत्येक व्यवसाय के आपूर्तिकर्ताओं के लिए अपने करों का भुगतान करने के लिए एक मजबूत प्रोत्साहन होता है, जिससे एक खुदरा बिक्री कर की तुलना में VAT दर, कम कर चोरी के साथ ऊंची हो जाती है। इस सरल सिद्धांत के पीछे इसके कार्यान्वयन में भिन्नताएं हैं, जैसा कि अगले भाग मे चर्चा की गई है।

उद्देश्य (Objectives)

उपर्युक्त विषय वस्तु को पढ़ाने के उद्देश्य निम्नलिखित है -

1. छात्र GST/VAT को परिभाषित कर पाऐंगे।
2. छात्र GST/VAT विभिन्न पक्षों को समझ पायेंगे।
3. छात्र ... समझ पायेंगे।
4. छात्र GST/VAT की गणना के सिद्धान्त को समझ पायेंगे।
5. छात्र GST/VAT की सम्पूर्ण प्रणाली को समझ पायेंगे।

शिक्षण विधियाँ (Teaching Methods)

विषय वस्तु का ज्ञान कराने में या विषय वस्तु का वर्णन करने में निम्न विधियों का प्रयोग किया गया है।

1. व्याख्यान विधि
2. प्रश्नोत्तर विधि
3. भाषण विधि
3. वाद विवाद विधि
5. भ्रमण विधि
6. योजना विधि
7. प्रयोगात्मक विधि

शिक्षण सामग्री या सहायक सामग्री (Teaching Materials or Teaching Aids)

विषय वस्तु की व्याख्या में निम्नलिखित सहायक सामग्री का प्रयोग किया गया।

क. चाट - श्यामपट्ट कार्य हेतु
ख. मुख्य बिन्दु दर्शाने हेतु
ग. संकेतक - बिन्दुओं को दर्शाने हेतु
घ. ओवर हैड प्रोजेक्टर - सम्पूर्ण विषयवस्तु का प्रक्षेपण हेतु
ड़. मॉडल - बैंकिंग प्रणाली दर्शाने हेतु।

मूल्यांकन (Evaluation)

क. दीर्घ उत्तरीय प्रश्न -

1. GST/VAT से क्या तात्पर्य है?
2. GST/VAT का समाज के विभिन्न समुदायों पर क्या प्रभाव पड़ता है?
3. GST/VAT गणना करने की विधि का वर्णन करें।

ख. लघु उत्तरीय प्रश्न -

1. GST/VAT को परिभाषित कीजिए।
2. GST/VAT का समाज के मध्यवर्गी एवं गरीब वर्ग पर क्या प्रभाव पड़ता है?
3. GST/VAT का क्या सिद्धान्त है?

ग. अति लघु प्रश्न -

1. VAT क्या है?
2. GST/VAT का सिद्धान्त क्या है?
3. GST/VAT समाज के लोगों पर क्या प्रभाव पड़ता है?

ह. बहु विकल्पीय प्रश्न -

1. VAT लगाया जाता है
   (क) वस्तुओं पर   (ख) सेवाओं पर

Scanned with CamScanner

(ग) वस्तुओं एवं सेवाओं पर (घ) वस्तुओं एव सेवाओं दोनों पर नही

2. VAT की गणना वस्तुओं और सेवाओं की/के ..... के आधार पर लगाया जाता है

(क) कीमत के आधार पर (ख) के वजन

(ग) आकार (घ) मात्रा

च. रिक्त स्थान -

1. VAT की गणना वस्तुओं और सेवाओं की/के ..... के आधार पर लगाया जाता है

2. VAT लगाया जाता है सम्पूर्ण..... के मूल्यों पर।

छ. हाँ या नहीं वाले प्रश्न -

1. VAT वस्तुओं एवं सेवाओं की कीमत के आधार पर लगाया जाता है। ( )

2. VAT का नाम है - Value Added Tax ( )

Scanned with CamScanner

प्रश्न-9. पाठ योजना से आप क्या समझते हैं? पाठ योजना की आवश्यकता एवं म वर्णन कीजिए।

(What do you mean by Lesson Plan? Describe need and impor of Lesson Plan.)

उत्तर - जब हम किसी कार्य को करते हैं तो उस कार्य को करने से पहले हम उसके बारे में हैं, विचार करते हैं तदुपरान्त् हम अपनी आवश्यकता एवं क्षमता को ध्यान में रखते हुए उस क करने के लिए योजना बनाते हैं। कार्य के बारे में विचार करना, चिंतन करना और फि आधार पर योजना बनाना उस कार्य की सफलता के लिए किए जाने वाले सार्थक प्रयास हैं, उ की पूर्ण सफलता एवं असफलता वास्तव में पूर्व चिंतन एवं योजना पर निर्भर करती है। संक्षेप कहा जा सकता है कि किसी भी कार्य को अगर सही रूप से सम्पादित एवं पूर्ण करना है तथा की समुचित प्राप्ति करनी है तो इसके लिए योजना का होना अथवा बनाना अनिवार्य होता है

▪ पाठ-योजना का अर्थ (Meaning of Lesson-Planning)

'पाठ-योजना' दो शब्दों से मिलकर बनी है - पाठ और योजना अर्थात् पाठ को आयोजित क योजना। पाठ पढ़ाने से पूर्व पाठ की जो लिखित तैयारी की जाती है और जिसमें अध्यापक सम्बन्धी मुख्य अंशों को लिखकर रखता है एवं अध्यापन के वक्त उसका सही उपयोग कर पाठ-योजना कहलाती है। संक्षेप रूप में पाठ-योजना का अभिप्राय उस पूर्व योजना से है जिसके अ शिक्षक नई ज्ञान नीतियों एवं सहायक सामग्री के माध्यम से छात्रों के सामने एक निश्चित अवधि के प्रस्तुत करता है, वहीं दूसरे रूप/शब्दों में यह कहा जा सकता है कि पाठ-योजना शिक्षक द्वारा पाठ्यवस्तु तथा अधिगम एवं शिक्षण सिद्धान्तों को ध्यान में रखकर पूर्व चिंतन के आधार पर बन योजना है। यह योजना अध्यापन में अध्यापक के मार्गदर्शन का काम (कार्य) करती है तथा यह लिखित रूप में होती है।

पाठ-योजना की परिभाषाएँ (Definitions of Lesson Planning)

पाठ-योजना से सम्बन्धित कुछ प्रमुख परिभाषाएँ निम्नलिखित हैं -

एल.बी.सैण्डस् - "पाठ-योजना वस्तुतः कार्य करने की योजना है। इसमें अध्यापक का कार्य

Scanned with CamScanner

दर्शन ज्ञान, अपने विद्यार्थियों के सम्बन्ध में जानकारी, शिक्षा लक्ष्यों का बोध, विषय-वस्तु का ज्ञान तथा प्रभावपूर्ण विधियों के प्रयोग में उसकी योग्यता का समावेश होता है।"

बासिंग के शब्दों में – "पाठ-योजना उस विवरण का नाम है जिसमें यह स्पष्ट किया जाता है कि किसी पाठ से क्या उपलब्धियाँ प्राप्त करनी हैं और उन्हें किस साधनों द्वारा कक्षा की क्रियाओं के फलस्वरूप प्राप्त किया जा सकता है।"

बाइनिंग एवं बाइनिंग के अनुसार – "दैनिक पाठ-योजना के निर्माण में उद्देश्यों को परिभाषित करना, पाठ्यवस्तु का चयन करना, उसे क्रमबद्ध रूप में व्यवस्थित करना और प्रस्तुतिकरण की विधियों तथा प्रतिक्रियाओं का निर्धारण करना है।"

डेविस के अनुसार – "शिक्षण व्यवस्था के सभी पक्षों के व्यावहारिक रूप का आलेख ही पाठ-योजना है।"

सिम्पसन के अनुसार – "शिक्षक अपनी पाठ्य-सामग्री तथा अपने छात्रों के बारे में जो कुछ भी जानता है उन सबका प्रयोग पाठ-योजना में किया जाना आवश्यक होता है।"

रायबर्न के अनुसार – "शिक्षा के लिए हमें पूर्व प्राप्त अनुभवों का प्रयोग अपने कार्यों को करने के लिए करना चाहिए।"

डेविस का विचार – "पाठ-योजना के सम्बन्ध में डेविस महोदय का विचार है है – "कक्षा में जाने से पूर्व शिक्षक को पूरी तैयारी कर लेनी चाहिए क्योंकि शिक्षक की प्रगति के लिए कोई बात इतनी बाधक नहीं जितनी की शिक्षण की अपूर्ण तैयारी।"

अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा शब्दकोश के अनुसार – "पाठ-योजना किसी पाठ के उन आवश्यक बिन्दुओं की रूपरेखा है जिन्हें उस क्रम में व्यवस्थित किया जाता है जिस क्रम में उन्हें शिक्षक द्वारा विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत किया जाना होता है।"

वेलेनटाइन डेविस ने लिखा है – "छात्र-प्रशिक्षण में सर्वाधिक महत्वपूर्ण बात व्याख्यान सुनना नहीं, पाठ तैयार करना तथा उसे प्रस्तुत करना है।"

ए. डिक्की का विचार – "सम्पूर्ण शैक्षिक प्रक्रिया के पाठ-योजना सर्वाधिक फलदायक पक्ष है।"

भाटिया एवं भाटिया – "पाठ-योजना से पता चलता है कि बच्चों ने क्या पढ़ लिया है, आगे किस दिशा में उनके पथ-प्रदर्शन का कार्य किया जाए और तत्काल क्या पढ़ाया जाए।"

डॉ. नरेश कुमार यादव के अनुसार, "कक्षा-कक्ष में अध्यापक द्वारा निश्चित समय में किए जाने वाले सभी क्रियाकलापों के क्रमबद्ध लिखित प्रारूप को पाठ-योजना कहते हैं। यह योजना शिक्षण को सफल एवं प्रभावशाली बनाने के लिए वास्तविक शिक्षण से पूर्व बनाई जाती है।"

डॉ. के.पी. पाण्डेय के अनुसार – "शिक्षण से पूर्व कार्य विश्लेषण, उद्देश्य निरूपण एवं शैक्षिक युक्तियों तथा रचना कौशलों के चुनाव पर आधारित वह रूपरेखा पाठ-योजना कहलाती है जो अधिगम लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु अपेक्षित क्रियाओं को प्रेरित करती है।"

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पाठ-योजना वास्तव में उन क्रियाओं/कार्यों की एक योजना है जिसमें अध्यापक का क्रियात्मक दर्शन, उसका दर्शन संबंधी ज्ञान, अपने विद्यार्थियों के विषय में उसका ज्ञान एवं सूझ-बूझ, शैक्षिक उद्देश्यों के प्रति उसका दृष्टिकोण, उसका

Scanned with CamScanner

पाठ-योजना का महत्व (Importance of Lesson Planning)

पाठ-योजना के महत्व को निम्नलिखित प्रकार से वर्णित किया जा सकता है –

पाठ-योजना के महत्व को निम्नलिखित प्रकार से वर्णित किया जा सकता है –

1. सफल एवं प्रभावपूर्ण शिक्षण के लिए।
2. उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए।
3. विषय-वस्तु के स्वरूप एवं प्रस्तुतिकरण को निश्चित करने के लिए।
4. शिक्षण एवं अधिगम में सह-संबंध के संदर्भ में।
5. अधिगम सामग्री के सही (उचित) चुनाव के लिए।
6. अध्यापक तथा विद्यार्थी दोनों के समय एवं ऊर्जा शक्ति की बचत करने के सम्बन्ध में।
7. अध्यापक के आत्मविश्वास में बढ़ोत्तरी के सम्बन्ध में।
8. शिक्षण-विधि की प्रभावशीलता को जानने के लिए।
9. विभिन्न कठिनाइयों में उचित सम्बन्ध स्थापित करने के लिए।
10. विभिन्न पाठों एवं इकाइयों में उचित सम्बन्ध स्थापित करने के लिए।
11. शिक्षण की प्रभावशीलता, सफलता एवं सुव्यवस्थित शिक्षण प्रक्रिया के संदर्भ में।
12. शिक्षण विधियों, शिक्षण-व्यूह रचनाओं तथा शिक्षण सामग्री के प्रयोग के सम्बन्ध में।
13. मूल्यांकन को आधार प्रदान करने के लिए।
14. गृहकार्य के सम्बन्ध में।

पाठ-योजना की आवश्यकता (Need of Lesson Planning)

1. पाठ-योजना के द्वारा अध्यापक का कार्य क्रमबद्ध और सुव्यवस्थित हो जाता है।
2. इसके माध्यम से शिक्षण को व्यावहारिक रूप प्रदान किया जाता है।
3. विभिन्न शिक्षण क्रियाओं का अधिगम स्वरूपों के साथ सम्बन्ध स्थापित किया जाता है।
4. इसके द्वारा अध्यापक अधिक आत्मविश्वास के साथ पढ़ा सकता है।
5. शिक्षण कार्य को नियमित एवं व्यवस्थित बनाया जा सकता है।
6. सीखने के लिए अनुकूल वातावरण प्रदान किया जा सकता है।
7. इसके द्वारा कक्षा में अनुशासन अच्छी तरह बनाए रखा जा सकता है।
8. इसके द्वारा शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति आसानी से हो जाती है।
9. पाठ-योजना शिक्षण के दोषों का परिष्कार करती है।
10. इसके द्वारा शिक्षक का कार्य नियमित एवं व्यवस्थित बनता है।
11. पाठ पूर्ण होने पर प्रतिपुष्टि एवं मूल्यांकन का आकलन आसानी से किया जा सकता है।
12. इसके माध्यम से पाठ को अधिक रोचक, सरल एवं प्रभावशाली बनाया जा सकता है।
13. इसमें व्यक्तिगत भिन्नता को ध्यान में रखकर शिक्षण किया जाता है।
14. इसमें अध्यापक क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित रूप से सोपानों के माध्यम से शिक्षण कार्य को आगे बढ़ाता

15. पाठ-योजना द्वारा शिक्षक पाठ्यवस्तु सम्बन्धी प्रत्येक तथ्यों से अवगत हो जाता है।
16. पाठ-योजना शिक्षक को शिक्षण सहायक सामग्री के चयन एवं निर्धारण करने में मदद प्रदान करती है।
17. पाठ-योजना द्वारा शिक्षण शिक्षक को निर्देश देने का कार्य करता है।
18. इसके द्वारा प्रस्तुतिकरण के क्रम तथा पाठ्यवस्तु के स्वरूप को निश्चित कर लिया जाता है।
19. पाठ-योजना मनोवैज्ञानिक शिक्षण प्रदान करती है।

एक आदर्श पाठ-योजना की विशेषताएँ (Characteristics of Good Lesson Planning)

1. पाठ योजना लिखित होनी चाहिए।
2. यह पूर्व ज्ञान से सम्बन्धित होनी चाहिए।
3. इसमें सामान्य एवं विशिष्ट उद्देश्यों का उल्लेख स्पष्ट रूप से होना चाहिए।
4. यह पदों एवं सोपानों में उचित रूप से व्यवस्थित होनी चाहिए।
5. इसमें क्रियाओं का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए।
6. पाठ-योजना में भाषा की सरलता होनी चाहिए।
7. इसमें आव्यूह, युक्तियों, प्रविधियों तथा उपकरणों का उचित समावेश एवं प्रयोग होना चाहिए।
8. पाठ-योजना सुन्दर एवं स्पष्ट होनी चाहिए।
9. इसमें अभ्यास के लिए प्रश्नों को उचित स्थान मिलना चाहिए।
10. पाठ-योजना में विकासात्मक एवं पुनरावृत्ति से सम्बन्धित प्रश्न भी होने चाहिए।
11. यह योजना छात्रों के जीवन से सम्बन्धित होनी चाहिए।
12. पाठ-योजना छात्रों की रूचि, क्षमता, प्रवृत्ति एवं योग्यता के अनुरूप होनी चाहिए।
13. इसके प्रत्येक पद का दूसरे पद से उचित समन्वय होना चाहिए।
14. पाठ-योजना के द्वारा शिक्षण स्मृति स्तर से चिंतन स्तर तक होना चाहिए।
15. इसके द्वारा समय का उचित प्रयोग किया जाना चाहिए।
16. इसमें मूल्यांकन एवं गृहकार्य का विशेष स्थान होना चाहिए।

पाठ-योजना तैयार करने सम्बन्धी आवश्यक बिन्दु एवं कुछ ध्यान देने योग्य बातें –

1. उद्देश्यों की स्पष्टता होनी चाहिए।
2. पाठ्यवस्तु पर शिक्षक का पूर्ण स्वामित्व होना चाहिए।
3. विषय का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।
4. शिक्षण के सिद्धान्तों, विषयों एवं नीतियों का पूर्ण ज्ञान होना चाहिए।
5. विद्यार्थियों की प्रकृति का ज्ञान चाहिए।
6. पूर्व ज्ञान की स्पष्टता होनी चाहिए।
7. कक्षा स्तर का उचित ज्ञान होना चाहिए।
8. सोपानों का उचित विभाजन होना चाहिए।

Scanned with CamScanner

9. सहायक सामग्री का उचित प्रयोग हो।
10. लचीलेपन को उचित स्थान दिया जाना चाहिए।
11. समय का उचित प्रयोग एवं उचित समय व्यवस्था होनी चाहिए।
12. विवरण, कथन व्याख्या तथा स्पष्टीकरण संक्षिप्त एवं बोधगम्य होने चाहिए।
13. पाठ-योजना सरल, स्पष्ट एवं रुचिकर होनी चाहिए।
14. पुनरावृत्ति एवं मूल्यांकन की उचित व्यवस्था होनी चाहिए।
15. पाठ-योजना दैनिक अनुभवों से सम्बन्धित होनी चाहिए।

योजना के प्रकार/स्तर (Types/Levels of Planning)

योजना के प्रकार/स्तर मुख्य रूप से चार प्रकार के होते हैं -

1. वार्षिक योजना।
2. मासिक योजना।
3. साप्ताहिक योजना।
4. दैनिक योजना।

योजना के स्तर के रूप के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि किसी भी कार्य विशेष को कर के लिए हम विभिन्न प्रकार की योजनाओं को बनाते हैं। योजना मुख्यतः उद्देश्य एवं समय को ध्य में रखकर बनाई जाती है। जब हम वार्षिक योजना बनाते हैं तो वह योजना वर्ष भर के कार्यकल से सम्बन्धित होती है अर्थात् वर्ष भर के अन्दर क्या-क्या कार्य किए जाने हैं तथा उनकी प्राप्ति कि प्रकार करनी है आदि से सम्बन्धित होती है। योजना के अन्दर कार्य सम्बन्धी सम्पूर्ण ब्यौरा होता है इसी तरह जब हम मासिक, साप्ताहिक या दैनिक योजना बनाते हैं तो समय एवं स्थिति के अनुस योजना के समय एवं कार्य स्वरूप में भी अंतर आ जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि योजना विभिन्न स्तर एवं कार्य की प्रकृति के अनुरूप इसे अलग-अलग प्रकार/तरीके से बनाया जा सकता है हमारी पाठ-योजना दैनिक पाठ-योजना के अन्तर्गत आती है।

पाठ-योजना का वर्गीकरण (Classificaiton of Lesson Planning)

पाठ-योजनाओं को हम निम्नलिखित प्रकार से वर्गीकृत कर सकते हैं -

1. **व्यापक पाठ-योजना (Wide Lesson Planning)** - व्यापक पाठ-योजनाएँ वे पाठ-योजनाएं हैं जो कक्षा में निर्धारित कालांश अवधि को ध्यान में रखकर बनाई जाती है। इसकी अवधि 30-5 मिनट तक हो सकती है। यह योजना कक्षा के सम्पूर्ण छात्रों को ध्यान में रखकर बनाई जाती है इस योजना में पाठ का आधार बड़ा होता है तथा पाठ्यवस्तु भी पर्याप्त होती है। इस तरह की पाठ-योजनाएं महाविद्यालयों एवं प्रशिक्षण संस्थानों में विशेष रूप से बनाई जाती है।
2. **सूक्ष्म पाठ-योजना (Micro Lesson Planning)** - सूक्ष्म पाठ योजनाएँ वे योजनाएँ हैं। जिनमें पाठ एवं विषय-वस्तु का आधार बहुत ही छोटा होता है। इसके अन्तर्गत एक छोटे से समूह 5-10 छात्र को 5-10 मिनट तक की अवधि के लिए पढ़ाया जाता है। ये पाठ-योजनाएँ विशेष रूप से किसी कौशल विषय में दक्षता प्रदान करने के लिए बनाई जाती है तथा एक समय में एक ही कौशल पर पूर्ण ध्यान दिया जाता है। इसमें छात्रों की संख्या, पाठ्यवस्तु एवं समय तीनों की सूक्ष्म होते

हैं; अतः इन्हें सूक्ष्म पाठ-योजनाएं कहा जाता है।

3. **लिखित पाठ-योजना (Written Lesson Planning)** - लिखित पाठ-योजना वह योजना है जो लिखित रूप में होती है। इस प्रकार की योजनाएं प्रशिक्षण कॉलेजों एवं सस्थानों में सामान्य रूप से विद्यार्थियों द्वारा तैयार करनी पड़ती है। छात्र योजना तैयार करने से पूर्व अध्यापक से जरूरी मार्गदर्शन एवं परामर्श प्राप्त करते हैं तत्पश्चात् सोच-विचार कर पाठ-योजना लिखते हैं। अध्यापक इस लिखित योजना के आधार पर वास्तविक कक्षा शिक्षण से तुलना करता है और उसके आधार पर मूल्यांकन करते हुए उचित प्रतिपुष्टि एवं सुधार के लिए सुझाव देता है, अतः लिखित पाठ-योजना किसी योजना के लिखित स्वरूप से सम्बन्धित होती है।
4. **अलिखित पाठ-योजना (Unwritten Lesson Planning)** - अलिखित पाठ-योजना को लिखित पाठ-योजना के प्रतिकूल कहा जा सकता है। अध्यापक कक्षा में जाने से पूर्व अपने व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर कक्षा शिक्षण के लिए मन-ही-मन में योजना तैयार कर लेता है कि कक्षा में वह क्या पढ़ाएगा, कब पढ़ाएगा, कैसे पढ़ाएगा, कितना पढ़ाएगा; शिक्षण विधि एवं सहायक सामग्री क्या होगी? आदि बातों का समावेश शिक्षक अपनी अलिखित पाठ-योजना में कर लेता है और फिर उसी अलिखित पाठ-योजना के अनुसार अपना शिक्षण कार्य प्रारम्भ करता है। ऐसी पाठ-योजनाओं को अलिखित पाठ-योजनाएं कहा जाता है। इस प्रकार की पाठ-योजना में शिक्षक का अपना क्रियात्मक दर्शन काम करता है।

पाठ-योजना के सोपान (Steps of Lesson Planning)

पाठ-योजना निर्माण में अनेक उपागमों को प्रयुक्त किया जाता है। जब हम प्रचलित उपागमों एवं पाठ-योजनाओं के प्रारूपों को देखते हैं तो पाते हैं कि किसी भी उपागम को हम हू-बहू रूप में प्रयुक्त नहीं कर पाते। वास्तव में दैनिक पाठ-योजना में किसी भी उपागम को यंत्रवत् प्रयोग करना काफी कष्टकर कार्य है, क्योंकि शिक्षण क्रिया यांत्रिक क्रिया नहीं है। पाठ-योजना शिक्षण प्रक्रिया को सूझ-बूझ के साथ आयोजित करने में सहायक होती है। वह साध्य नहीं साधन है, अतः सम्पूर्ण पाठ-योजना को हम निम्नलिखित सोपानों में बाँट सकते हैं। इन सोपानों को उसी क्रम में व्यवस्थित करना चाहिए जिस क्रम में इन्हें कक्षा में प्रस्तुत किया जाना है।

1. **परिचयात्मक सूचनाएँ (Administration Information)** - इस प्रकार की सूचनाओं में विद्यालय का नाम, कक्षा, वर्ग, कालांश, अवधि, विषय, उप-विषय, प्रकरण एवं अध्यापक का नाम आदि सम्मिलित होते हैं। इन सूचनाओं को हम सामान्य सूचनाएं भी कहते हैं। इस प्रकार की सूचना देते समय पर ध्यान रखा जाए कि ये सूचनाएं स्पष्ट एवं संक्षिप्त हों।
2. **उद्देश्य (Objectives)** - पाठ-योजना का यह एक महत्वपूर्ण सोपान है। इस सोपान के अन्तर्गत उद्देश्यों का स्पष्टीकरण किया जाता है। सामान्यतया पाठ के दो प्रकार के उद्देश्य निश्चित/निर्धारित किए जाते हैं।

क) सामान्य उद्देश्य (General Objective) - सामान्य उद्देश्यों में हम सामान्य स्तर के उद्देश्य रखते हैं जो वार्षिक योजना से भी लिए जा सकते है तथापि ये सामान्य रूप से विषय विशेष से सम्बन्धित होते हैं।

ख) विशिष्ट उद्देश्य (Specific Objective) - विशिष्ट उद्देश्य वे उद्देश्य होते हैं जिनकी प्राप्ति कालांश

Scanned with CamScanner

अवधि में ही हो जाए। हमें किसी भी पाठ ... विशिष्ट उद्दे...
विशेष बल देना चाहिए ताकि उनका मूल्यांकन पाठ की समाप्ति पर हो सके। विशिष्ट उद्दे... अन्तर्गत हम ज्ञानात्मक, बोधात्मक, प्रयोगात्मक, कौशलात्मक एवं रचनात्मक आदि उद्देश्यों... शामिल करते हैं। विशिष्ट उद्देश्यों को पाठ-योजना में व्यवहारगत परिवर्तन के रूप में ... चाहिए।

3. **अनुदेशनात्मक सामग्री (Instructional Material)** – इस सोपान में शिक्षक द्वारा प... पढ़ाने के लिए उपयोग में लाई जाने वाली सामग्री का उल्लेख किया जाता है। कक्षा में क... उपकरण, जैसे - श्यामपट्ट, चौक (खड़िया), डस्टर (झाड़न), पोइंटर (संकेतक) के अतिरिक्त ... प्रकार की आवश्यक एवं कम खर्चीली सामग्री, वातावरण में उपलब्ध सामग्री तथा मानचित्र, ... चार्ट एवं चित्र आदि ऐसी सहायक सामग्रियाँ हैं जिनका उल्लेख इसमें लिया जाता है। स... सामग्री को हम कई बार दो वर्गों (सामान्य एवं विशिष्ट सहायक सामग्री के रूप) में भी क... कर देते हैं/सकते हैं।

4. **शिक्षण पद्धति एवं तकनीक (Teaching Method and Techniques)** – इस सोपान में शि... (छात्र-अध्यापक) पाठ एवं प्रकरण विशेष को पढ़ाने के लिए उपयोग में लाई जाने वाली शिक्षण वि... (पद्धति एवं तकनीक) का उल्लेख करता है। लेकिन पाठ एवं प्रकरण विशेष को पढ़ाने से ... छात्र-अध्यापक को यह अवश्य सुनिश्चित कर लेना चाहिए कि पाठ एवं प्रकरण विशेष (क... कहानी, व्याकरण, नाटक, निबंध एवं पत्र आदि) को पढ़ाने के लिए (से संबंधित) कौन-सी ... अथवा विधियाँ उचित एवं उपयोगी होंगी। इसके (शिक्षण के) लिए अध्यापक एक अथवा ए... अधिक शिक्षण विधियों का चयन कर सकता है। उचित एवं उपयुक्त विधियाँ ही पाठ एवं प्र... विशेष के प्रस्तुतिकरण एवं शिक्षण प्रक्रिया को रोचक तथा प्रभावशाली बनाती है। वास्तव में शि... भी शिक्षण की पूर्ण सफलता इसके (शिक्षण के) लिए निर्धारित अथवा चयनित की गई शि... विधियों पर ही निर्भर होती (रहती) हैं।

5. **पूर्व ज्ञान (अनुमानित) (Pre-Knowledge)** – पूर्व ज्ञान वह ज्ञान है जिसके आधार पर ... नवीन विषय-वस्तु एवं नवीन ज्ञान प्राप्त करते हैं। अध्यापक जो विषय-वस्तु पढ़ा रहा है उससे ... ज्ञान का सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक होता है। इसी के आधार पर विद्यार्थी नवीन ज्ञान ... करते हैं। एक कुशल अध्यापक में यह गुण होना चाहिए कि वह विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान एवं ... अनुभवों का लाभ उठाते हुए विषय-वस्तु को सहज, सरल तथा रोचक ढंग से प्रस्तुत कर... जिससे पाठ की प्रभाविकता एवं सार्थकता सिद्ध हो सके। पूर्व ज्ञान में उन बातों का उल्लेख कि... जाना चाहिए जिन्हें विद्यार्थी पहले से जानते हैं अर्थात् पढ़ाए जा रहे पाठ के सम्बन्ध में विद्... कितनी जानकारी एवं ज्ञान रखते हैं इसका ज्ञान अध्यापक को होना चाहिए; अतः पूर्व ज्ञान ... जानना तथा पाठ-योजना में उसका यथास्थान उल्लेख करना नितांत आवश्यक होता है।

6. **पूर्व ज्ञान परीक्षण तथा प्रस्तावना (Pre-Knowledge Test)** – इस सोपान में अध्यापक के द्... छात्रों के पूर्व ज्ञान का परीक्षण किया जाता है। शिक्षक अपने पाठ को कैसे आरंभ करेगा इस... प्रस्तावना पहले से ही तैयार कर ली जाती है। प्रस्तावना में छात्रों को पूर्व ज्ञान से संबंधित प्र... की सहायता से पढ़ाए जाने वाले प्रकरण पर लाया जाता है। पाठ की शुरूआत करने में प्रक... की भूमिका के लिए प्रस्तावना स्तर के प्रश्नों की सहायता ली जाती है। पाठ की प्रस्तावना जि...

रोचक, सहज और प्रभावी होगी छात्र उतनी की सहजता एवं सफलता से विषय-वस्तु को ग्रहण कर सकेंगे। प्रस्तावना पाठ की प्रकृति तथा विद्यार्थियों के स्तर को देखते हुए तैयार की जाती है। भाषा शिक्षण में प्रश्नों द्वारा, लघु कथा द्वारा, प्रसंग विशेष द्वारा, कवितांश द्वारा, दृष्टांत सामग्री द्वारा प्रस्तावना की जा सकती है।

7. **उद्देश्य कथन (Objective Statement)** – पूर्व ज्ञान परीक्षण एवं प्रस्तावना की सहायता से शिक्षक छात्रों को प्रकरण पर लाता है तत्पश्चात् अध्यापक अपने प्रकरण को पढ़ाने के लिए उद्देश्य कथन की घोषणा करता है। वास्तव में यह उद्देश्य कथन उस प्रकरण विशेष से सम्बन्धित होता है जिसे अध्यापक द्वारा पढ़ाया जाना है। अध्यापक को स्वाभाविक रीति के उद्देश्य कथन प्रस्तुत करना चाहिए। जैसे - अच्छा बच्चो, आज हम डॉ. भगवती लाल व्यास द्वारा रचित कविता 'जो संघर्ष नहीं कर सके' का अध्ययन करेंगे।

8. **प्रस्तुतिकरण (Presentation)** – इस सोपान पर पहुंचने पर पाठ अथवा प्रकरण का प्रस्तुतिकरण किया जाता है अर्थात् विषय सामग्री छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत की जाती है। विषय सामग्री का क्रमिक विकास, सहायक सामग्री, शिक्षण विधियों, शिक्षण बिन्दु, छात्राध्यापक-क्रिया, छात्र-क्रिया, श्यामपट्ट कार्य एवं मूल्यांकन आदि का उल्लेख इस सोपान के अन्तर्गत विशेष रूप से किया जाता है। परन्तु प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया प्रायः अध्यापक एवं संस्थान विशेष द्वारा अलग-अलग तरीके से तैयार एवं प्रस्तुत की जाती है। इसके अंतर्गत 3 कॉलम से लेकर 6 कॉलम तक प्रयोग में लाए जाते हैं अर्थात् इन कॉलमों को आधार बनाकर पाठ का प्रस्तुतिकरण किया जाता है। विभिन्न प्रकार के पाठों को लिखने (पढ़ाने) के लिए एवं विभिन्न विधाओं के शिक्षण में अलग-अलग तरीकों, चरणों एवं सोपानों का प्रयोग किया जाता है।

9. **विकासात्मक प्रश्न एवं स्पष्टीकरण (Development Question and Clarification)** – यह सोपान प्रस्तुतिकरण सोपान के अंतर्गत कार्य करता है। यह सोपान मुख्यतः प्रस्तुतिकरण की प्रक्रिया को बल प्रदान करता है। विकासात्मक प्रश्नों के द्वारा पाठ को रोचक एवं पाठ का उचित विकास किया जाता है; वहीं स्पष्टीकरण द्वारा पाठ की सरल एवं स्पष्ट रूप से अभिव्यक्ति एवं व्याख्या की जाती है। इस सोपान में छात्रों की तार्किक क्षमताओं का अधिक विकास होता है।

10. **श्यामपट्ट कार्य (Black Board Work)** – श्यामपट्ट कार्य का पाठ-योजना में विशेष रूप से उल्लेख किया जाता है। भाषा शिक्षण कराते समय छात्र-अध्यापक द्वारा पाठ में आए कठिन शब्दों का अर्थ, कहावतों, मुहावरों, उच्चारण, वाक्य रचना, व्याकरण एवं पाठ से संबंधित अन्य पक्षों आदि को श्यामपट्ट पर स्पष्ट रूप से लिखा जाता है। श्यामट्ट कार्य जो पाठ विशेष को पढ़ाते समय किया जाना है उसका उल्लेख स्पष्ट रूप से पाठ-योजना में होना चाहिए।

11. **पुनरावृत्ति (Recal)** – मूल पाठ का शिक्षण समाप्त करने के पश्चात् विषय-वस्तु को स्थायी रूप प्रदान करने के लिए उसको दोहराने की आवश्यकता होती है। इस सोपान के अन्तर्गत अध्यापक को ऐसे प्रश्नों का निर्माण करना चाहिए जिससे कि समूचे पाठ की पुनरावृत्ति हो सके। पुनरावृत्ति प्रश्नों की सहायता से ज्ञान को ठोस बनाया जाता है तथा विचारों को सुव्यवस्थित रूप प्रदान किया जाता है। इससे यह बोध होता है कि छात्रों ने कितना सीखा है। पुनरावृत्ति सोपान के अन्तर्गत इस प्रकार के प्रश्नों (पुनरावृत्ति से सम्बन्धित) को लिखा जाता है।

Scanned with CamScanner

12.प्रयोग एवं गृहकार्य (Experiment and Assignment) – गृहकार्य पाठ-योजना के अंग होता है। ज्ञान के स्थायित्व के लिए इसका प्रयोग करना आवश्यक होता है। इस ऐसे अभ्यासात्मक प्रश्नों का उल्लेख किया जाना चाहिए जिनकी सहायता से विद्यार्थी प्राप्त प्रयोग कर सकें। विद्यार्थियों को दिया जाने वाला गृहकार्य रूचिकर तथा सृजनात्मक हो भाषा के पाठों के अन्तर्गत कई प्रकार से गृहकार्य दिया जा सकता है; जैसे – पाठ का में पढ़े पाठ का घर पर सस्वर वाचन, शब्दों का वाक्यों में प्रयोग, परिवार के सदस्यों सुनाना, कविताओं एवं कहानियों का संग्रह करना, पाठ का सार लिखकर लाना, कहा शिक्षा मिली इसको अपने शब्दों में स्पष्ट करना एवं लिखना तथा अन्य संबंधित अध्ययन करना आदि के रूप में गृहकार्य छात्रों को दिया जा सकता है। गृहकार्य के पाठ्य-सामग्री को अच्छी तरह आत्मसात कर सकते हैं।

पाठ योजना के सिद्धान्त (Principles of Lesson Planning)

उपयोगी, प्रभावी, सुव्यवस्थित तथा क्रियात्मक पाठ योजना के लिए निम्नलिखित सिद्ध ध्यान में रखना चाहिए।

1. पाठ योजना मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों पर आधारित होनी चाहिए। अध्यापक को विद्यार्थ मानसिक आवश्यकताओं, रूचियों तथा बौद्धिक योग्यताओं का ध्यान रखना चाहिए।
2. पाठ योजना लचीली होनी चाहिए। यह मूर्त एवम् विशिष्ट भी होनी चाहिए। प्रत्येक बालक योग्यता, अनुभवों, आवश्यकताओं व रूचियों में भिन्न होता है। और प्रत्येक की अपनी होती है। योजना में आवश्यक विस्तार पुनः संगठन, पुनः व्यवस्थित करना शिक्षण की गुणवत्ता रखने के लिए आवश्यक होता है।
3. इसको विद्यार्थियों के क्रियात्मक सहयोग के लिए पर्याप्त स्थान होना चाहिए।
4. प्रकरण को कुछ निश्चित भागों में बांट लेना चाहिए। और प्रत्येक भाग की शिक्षण अधिगम को स्पष्ट किया जाना चाहिए।
5. विद्यार्थियों के पूर्व ज्ञान को नवीन ज्ञान से सम्बन्धित किया जाना चाहिए।
6. पाठ योजना की प्रकृति विशिष्ट होनी चाहिए। योजना के द्वारा शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के बारे में विशिष्ट सूचना प्रदान की जानी चाहिए।
7. वाणिज्य शास्त्र अध्यापक के द्वारा अपने शिक्षण साधनों का ध्यानपूर्वक मूल्यांकन किया जाना
8. इसमें पर्याप्त एवम् उचित विषय सामग्री का समावेश किया जाना चाहिए।
9. शैक्षिक विकास के स्तरों को ध्यान में रखा जाना चाहिए।
10. प्रत्येक पाठ को दिए जाने वाले समय को ध्यान में रखना चाहिए।
11. पाठ योजना सुगठित, सुसम्बन्धित एवं क्रमबद्ध होनी चाहिए।

पाठ योजना का विकास (Development of Lesson Planning)

पाठ योजना को शिक्षण प्रक्रिया से प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है। और इसमें मुख्य रूप तीन तथ्यों का होता है।

Scanned with CamScanner

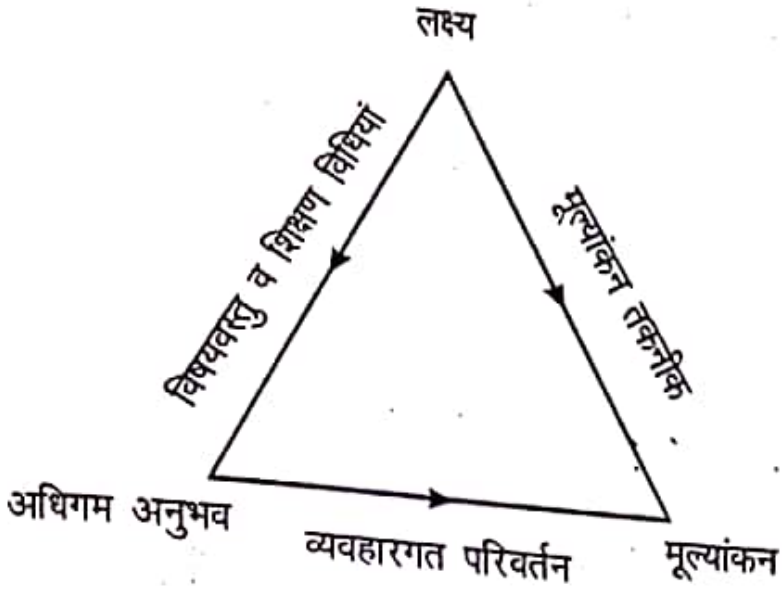

इस त्रिगुण के शीर्ष पर शिक्षण उद्देश्य, दूसरे कोण पर अधिगम अनुभव तथा सीसरे कोण पर अधिगम अनुभव तथा तीसरे कोण पर मूल्यांकन है। शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु विषय सामग्री का चुनाव तथा शिक्षण विधि का चयन किया जाता है और उनके माध्यम से विद्यार्थी अधिगम अनुभव प्राप्त करते हैं। इन्हीं अधिगम अनुभवों के परिणामस्वरूप विद्यार्थियों में व्यवहारगत परिवर्तन आता है। और ये शिक्षण उद्देश्यों के कितने अनुकूल है। यह जानने के लिए विभिन्न मूल्यांकन तकनीकों की सहायता से मूल्यांकन किया जाता है। पाठ योजना का विकास इसी आधार पर निर्धारित किए जाते हैं। जो इस प्रकार हैं -

1. **परिचय (Introduction)** - इस प्रक्रिया के अंतर्गत कुछ सूचनाएं प्रदान की जाती है कि यह पाठ योजना किसी कक्षा, किस विषय, किस प्रकरण, किस कालांश तथा कितनी अवधि के लिए बनाई जाती है।

पाठ योजना संख्याक्रम

क.	विषय	कक्षा
	इकाई	कालांश
	उप इकाई	अवधि
	प्रकरण	तिथि

2. **उद्देश्य (Aims)** - सभी योजनाओं में उद्देश्यों का महत्वपूर्ण स्थान है। अध्यापक को हमेशा यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि उद्देश्य की कोई सीमा नहीं है परन्तु सभी उद्देश्य एक दूसरे से सम्बन्धित होने चाहिएं। उद्देश्य सदा सामान्य से विशिष्ट की ओर चलते हैं। इसमें शामिल हैं -
   - क) शैक्षिक प्रक्रिया के सामान्य उद्देश्य
   - ख) विषय उद्देश्य
   - ग) इकाई उद्देश्य
   - घ) दैनिक पाठ के लिए विशिष्ट/व्यवहारगत उद्देश्य

क) **सामान्य उद्देश्य (General Aims)** - विभिन्न समितियों तथा कमेटियों के द्वारा अपनी-अपनी रिपोर्टों में विभिन्न शैक्षिक उद्देश्य को सिफारिश की गई है। वाणिज्य अध्यापक को इन शैक्षिक

Scanned with CamScanner

उद्देश्यों को अनुरूप ही अपने विषय के उद्देश्यों का निर्माण करना चाहिए क्योंकि वाणिज्य शिक्षा का एक भाग है। और बालक को व्यवसायिक प्रबंध आर्थिक तथा नागरिकता के विषय ओर ले जाता है।

ख) **विषय के उद्देश्य (Aims of the Subject)** - अध्यापक का इनसे सीधा सम्बन्ध होता है सहायता से उसे यह ज्ञान होता है कि वह वाणिज्य शास्त्र क्यों पढा रहा है। शिक्षा के उद्देश्यों को ध्यान में रखकर अध्यापक वर्ष के अन्त में यह जांच कर सकता है कि वह विद्यार्थियों को इसके के अधिगम की सहायता से उन उद्देश्यों की प्राप्ति में कहां तक ले गय

ग) **इकाई उद्देश्य (Aims of Unit)** - अध्यापक इकाई के उद्देश्यों से अधिक सम्बन्धित होत क्योंकि यह वही है जिससे विषय सामग्री को इकाईयों के लिए उद्देश्य का निर्माण करना होत अध्यापक को उस इकाई में शिक्षण के उद्देश्य के बारे में जानकारी होनी चाहिए। उसका कार्य देखना भी है कि इकाई का उद्देश्य विषय की उद्देश्य की समानता में हो।

घ) **दैनिक पाठ के विशिष्ट उद्देश्य (Specific Objectives of the Daily Lesson)** - किं शिक्षण उद्देश्यों का सम्बन्ध इस तथ्य से होता है कि अध्यापक कक्षा के समय में क्या प्राप्त क की आशा करता है। उसके मन में यह निश्चित पक्का होना चाहिए कि वह प्रतिदिन क्या करना चाहता है। उदाहरण के लिए, वह यह उद्देश्य स्थापित कर सकता है कि विद्यार्थी व्यव में प्रबंध के महत्व को समझ जाए। ये उद्देश्य इकाई के उद्देश्यों के अनुरूप होने चाहिए। कक्ष समय में इन उद्देश्यों को व्यवहारागत रूप में लिखा जाता है जैसे कि ब्लूम, मैसन तथा सिम्प के वर्गीकरण में वर्णित किया गया है। उदाहरण के लिए प्रबंध प्रकरण पर उद्देश्य इस प्रकार हों

Scanned with CamScanner

Unit - III

पाठ्यक्रम, शिक्षण–अधिगम सामग्री एवं वाणिज्य शिक्षण कौशल

[Curriculum, Teaching Learning Material and Skills of Teaching Commerce]

Scanned with CamScanner

पाठ्यक्रम का अर्थ एवं परिभाषा
(Meaning and Definition of Curriculum)

पाठ्यक्रम का अर्थ (Meaning of Curriculum)

(अ) शाब्दिक अर्थ (Etymological Meaning) : 'पाठ्यक्रम' शब्द लैटिन भाषा के 'करीकुलम' (Curriculum) शब्द का हिन्दी रूपान्तर है। 'करीकुलम' शब्द लैटिन भाषा से अंग्रेजी में लिखा गया है, जिसका अर्थ है 'दौड़ का मैदान'। शिक्षा में इसका तात्पर्य विद्यार्थी के दौड़ के मैदान से है। यहाँ शिक्षा एक दौड़ के सदृश है और पाठ्यक्रम उस दौड़ के मैदान के सदृश्य है जिसको पार करके कोई विद्यार्थी या बालक अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँचता है (It is a run away course which runs to teach goal)। संक्षेप में शाब्दिक अर्थ के अनुसार पाठ्यक्रम वह मार्ग है जिसके अनुसार चलकर विद्यार्थी शिक्षा के लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल होता है।

(ब) संकुचित अर्थ (Narrower Meaning) : संकुचित तथा परम्परात्मक अर्थ के अनुसार पाठ्यक्रम 'अध्ययन का कोर्स' (Courses of Study) 'सिलेबस' (Syllabus) का पर्यायवाची माना जाता है। जिसमें केवल कुछ विषयों के तथ्यों की सीमायें निश्चित रहती हैं। इस प्रकार संकुचित अर्थ के अनुसार पाठ्यक्रम को केवल पुस्तकीय ज्ञान (Bookish Knowledge) तक सीमित कर दिया जाता है। उसमें बालकों का आवश्यकताओं, रूचियों, प्रवृत्तियों, अभिवृत्तियों, क्षमताओं तथा व्यवहारिक जीवन में काम आने वाली क्रियाओं का कोई स्थान नहीं होता है। संक्षेप में संकुचित अर्थ के अनुसार पाठ्यक्रम का तात्पर्य अध्ययन के उस कोर्स से है। जिसमें बालकों को पुस्तकीय ज्ञान प्रदान करने मात्र की व्याख्या होती है।

(स) व्यापक अर्थ (Wider Meaning) : वर्तमान काल में पाठ्यक्रम का स्वरूप बड़ा व्यापक है। अब यह अध्ययन के कोर्स या 'सिलेबस' तक सीमित नहीं है। सिलेबस तो इसका अंग मात्र है। अब पाठ्यक्रम के अन्तर्गत् उन समस्त अनुभवों का समावेश होता हैं जो बालक अपने व्यक्तित्व के संकीर्ण विकास के लिए अपनी आवश्यकताओं, रूचियों, अभिवृत्तियों तथा क्षमताओं के अनुसार कक्षा के अंदर तथा बाहर विभिन्न विषयों तथा खेलों, क्रियाओं सरस्वती यात्राओं इत्यादि से प्राप्त करते हैं। मुनरो के अनुसार, "पाठ्यक्रम में वे समस्त शैक्षिक अनुभव सम्मिलित होते हैं जो शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए प्राप्त किये जाते हैं।" वेस्ट तथा क्रोनेनबर्ग शब्दों में "संक्षेप में पाठ्यक्रम, पाठ्यवस्तु (Contents of Studies) का सुव्यवस्थित रूप है जो बालकों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए तैयार किया जाता है।" शैक्षणिक समाजशास्त्रियों (Educational Sociologists) ने पाठ्यक्रम के अन्तर्गत् सामाजिक पहलू को भी स्थान दिया है। संक्षेप में व्यापक अर्थ के अनुसार पाठ्यक्रम का तात्पर्य

Scanned with CamScanner

विद्यार्थियों के लिए आयोजित उन सभी अनुभवों तथा क्रियाओं से है जो उनके
समाज के सर्वांगीण विकास के लिए सहायक हों।

(ब) पाठ्यक्रम की परिभाषा (Definition of Curriculum)

(1) होर्नी—"पाठ्यक्रम वह है जो कि शिक्षार्थियों को पढ़ाया जाता है। यह
एवं शान्तिपूर्ण पढ़ने से अधिक है। इसमें उद्योग, व्यवसाय, ज्ञानोपर्जन अभ्यास तथा
सम्मिलित होते हैं। इस प्रकार वह शिक्षार्थी के स्नायुमंडल के संगठन में होने
गतिवादी एवं संवेदनात्मक तत्वों को व्यक्त करता है। समाज के क्षेत्र में यह वह
अभिव्यक्त करता है जो प्रजाति ने संसार के सम्पर्क में कार्य किये हैं।".

"The curriculum is that which the pupil is taught. It
involves more than the acts of learning and quite study, it
involves occupations, productions, achievments, exercises
activity. It, thus, is representative of the motor as well as the
sensory elements in the nervous system of the side of society, it
is representative of what the race has done in its contact with
its world." —*Horne*

(2) कनिंघम—"पाठ्यक्रम कलाकार (शिक्षक) के हाथ में एक साधन है जिससे
वह अपने पदार्थ (शिक्षार्थी) को अपने आदर्श (उद्देश्य) के अनुसार अपने कलागृह
(शिक्षालय) में चित्रित कर सकें।"

"It (Curriculum) is a tool in the hands of the artist (teacher)
to mould his material (pupil) according to his ideal (objective) in
his studio (school)." —***Cunningham***

(3) डीवी—"सीखने का विषय या पाठ्यक्रम पदार्थों, विचारों और सिद्धान्तों का
चित्रण है जो कि उद्देश्यपूर्ण लगातार क्रियान्वेषण से, साधन या बाधा के रूप में आ जाते
हैं।"

"Subject matter of learning or curriculum is identical with
all the objects, ideas and principles which enter as resources or
obstacles into the continuous intentional persuit of a course of
action." —***Dewey***

(4) फोबेल—"पाठ्यक्रम सम्पूर्ण मानव जाति के ज्ञान एवं अनुभव के प्रति रूप में
जानना चाहिये।"

"Curriculum should be conceived as an epitome of the
rounded whole of the knowledge and experience of the human
race." —***Frobale***

(5) शिक्षण प्रक्रिया के पुनर्रचित सिद्धान्त के अनुसार—"जो कुछ पढ़ा और
सीखा जाता है उसकी क्रमबद्ध व्यवस्था को पाठ्यक्रम कहते हैं।

"Curriculum is the orderly arrangement of what is thus to
be studied and learned." —***Reconstructed Theory of
Educative Process .***

पाठ्यक्रम के उद्देश्य
(Aims and Objects of Curriculum)

एक अच्छे पाठ्यक्रम के निम्नलिखित उद्देश्य होते है—

(1) यह शिक्षालय के समस्त छात्रों के सर्वांगीण विकास को व्यक्त, संबंधित तथा प्रेरित करता है।

(2) यह एक विद्वानों के समुदाय का सृजन करता है जो कि ज्ञान, खोज एवं अनुसंधान की सीमाओं को अग्रसर कर सकें।

(3) इसके अन्तर्गत् समस्त छात्रों की आवश्यकताओं, रूचियों, योग्यताओं, क्षमताओं, अभिवृत्तियों की तृप्ति होती है।

(4) यह छात्रों में सहयोग, ईमानदारी, मित्रता, निष्कपटता, निर्णय, परोपकार, सद्भावना इत्यादि गुणों को विकसित करके उनके चरित्र का विकास करता है।

वाणिज्य पाठ्यक्रम के निम्न लक्षण हो सकते हैं—

1. छात्रों को आरम्भ अर्थात् स्कूल स्तर से लेकर बाद अर्थात् महाविद्यालय स्तर तक निरन्तर व क्रमबद्ध अनुभव प्रदान करना।
2. तथ्यों के अर्जन के स्थान पर प्रत्ययों के अर्जन सम्बंधी दृष्टिकोण विकसित करना।
3. छात्रों के व्यक्तिगत विभेदों जैसे योग्यता, रूचि या आवश्यकता को दृष्टिगत रखना।
4. स्थानीय कौशलों एवं साधन सामग्री के उपयोग के अधिकतम अवसर प्रदान करना।

पाठ्यक्रम में पाठ्य वस्तु चयन
(Selection of the Subject Matter in Curriculum)

यंग के अनुसार पाठ्यक्रम में पाठ्य-वस्तु चयन के समय निम्न सिद्धान्तों को दृष्टिगत रखना चाहिये—

1. विभिन्न वाणिज्यिक/आर्थिक/व्यावसायिक विचारों को स्पष्ट और लाभदायक रूप में प्रदर्शित करना।
2. समाज के आर्थिक बेहतरी समझने में सहायता देना।
3. आधुनिक जीवन शैली व वाणिज्य के सम्बन्ध को स्पष्ट करना और समस्याओं के हल से वाणिज्य के सम्बंध का योगदान।
4. पाठ्यवस्तु को एकरूपता प्रदान करना।

Scanned with CamScanner

शिक्षा दर्शन एवं वाणिज्य पाठ्यक्रम
(Philosophy of Education and Commerce Curriculum)

शिक्षा के क्षेत्र में प्रचलित विभिन्न दार्शनिक परम्पराओं ने पाठ्यक्रम संगठन के सिद्धान्तों के विषय में विभिन्न प्रकार के विचार दिये हैं, उन्हीं विचारों पर आधारित पाठ्यक्रमों के निर्माण का प्रयास समय-समय पर शिक्षाविदों ने किया है। यथार्थ में यह सभी प्रयास पाठ्यक्रम विन्यास को नवीन दिशायें देने में सक्षम है।

1. आदर्शवाद एवं पाठ्य-क्रम (Idealism and Curriculum)— मानव के विचारों, सत्यों, मूल्यों तथा आदर्शों के आधार पर पाठ्य-क्रम का निर्माण होना चाहिये। वे इस सम्बंध में बालक, उसकी वर्तमान तथा भावी क्रियाओं एवं संसार की अन्य वस्तुओं को कोई महत्त्व नहीं देते। वे बालक के वर्तमान अनुभवों की अपेक्षा समस्त मानव जाति के अनुभवों को अधिक महत्त्व देते हैं।

चूँकि आदर्शवादियों के अनुसार मनुष्य जीवन का अन्तिम लक्ष्य आत्मिक पूर्णता या आत्मानुभूति प्राप्त करना है, इसलिए आदर्शवादी भौतिक ज्ञान एवं क्रियाओं की अपेक्षा आध्यात्मिक ज्ञान, क्रियाओं एवं अनुभवों को पाठ्य-क्रम में प्रमुख स्थान देते हैं। इस दृष्टि से आदर्शवादी पाठ्य-क्रम में भाषा, साहित्य, धर्म, ललित कला, संगीत तथा नीतिशास्त्र को प्रमुख तथा अन्य विषयों को गौण स्थान देते हैं।

2. प्रकृतिवाद और पाठ्यक्रम (Naturalism and Curriculum)— शिक्षा के पाठ्य-क्रम के विषयों का निर्धारण की प्राकृतिक रूचियों, क्रियाओं तथा वर्तमान अनुभवों पर निर्भर होता है। पाठ्य-क्रम में वे ही विषय सम्मिलित हैं जो विकासमान बालक की विभिन्न आवश्यकताओं को पूरा कर सकें। पाठ्य-क्रम ऐसा होना चाहिये जो बालक को स्वयं अनुभव करने का अवसर दे सकें। उसकी स्वाभाविक क्रियाओं का विकास कर सके और उसे व्यावहारिक ज्ञान प्रदान कर सके। प्रकृतिवादी ज्ञान के लिए ज्ञान के आदर्श के विरोधी हैं। प्रकृतिवादी अपने पाठ्यक्रम में खेल-कूद, स्वास्थ्य-रक्षा, प्रकृति निरीक्षण, भूगोल, इतिहास आदि को महत्त्व का स्थान देते हैं और भाषा, साहित्य तथा कविता को गौण स्थान देते हैं।

3. प्रयोजनवाद एवं पाठ्यक्रम (Pragmatism and Curriculum)— प्रयोजनवादी शिक्षा की प्रक्रिया में शिक्षा के ग्रन्थ, विषयों तथा शिक्षकों की अपेक्षा बालक को अधिक महत्त्वपूर्ण मानते हैं। उसे शिक्षा का केन्द्र समझते है। अतः उनके अनुसार पाठ्य-क्रम ऐसा होना चाहिये जो बालक को उत्तम, उपयोगी समृद्धिशाली तथा सम्पूर्ण अनुभव प्रदान कर सके और उसे भावी सामाजिक जीवन के लिए तैयार कर सके। इस दृष्टि से प्रयोजनवादियों के अनुसार *पाठ्यक्रम में विषयो की अपेक्षा अनुभवों को स्थान देना चाहिये।* इन अनुभवों का आधार उपयोगिता होना चाहिये।

Scanned with CamScanner

प्रयोजनवादियों के अनुसार पाठ्य-क्रम नियोजन का दूसरा सिद्धान्त क्रिया है। अत: बालक को क्रिया करने का अवसर देना चाहिये, जिससे वह सक्रिय रहकर उपयोगी अनुभव प्राप्त कर सके। इस दृष्टि से पाठ्यक्रम में उन क्रियाओं को स्थान देना चाहिये जो स्वतंत्र, सामाजिक सोद्देश्य और स्वाभाविक प्रकृति के अनुरूप हों।

प्रयोजनवादियों के अनुसार पाठ्य-क्रम के संगठन का तीसरा आधार बालक की प्राकृतिक अभिरूचियाँ हैं। इन्हीं पर पाठ्यक्रम का नियोजन आधारित होना चाहिये। विकास की विभिन्न अवस्थाओं को स्वाभाविक अभिरूचियों के आधार पर पाठ्यक्रम का निर्माण करना चाहिये। पाठ्यक्रम की वस्तु का निर्वाचन उनके वास्तविक जीवन की क्रियाओं और अभिरूचियों पर आधारित होता जाये।

पाठ्यक्रम को इस प्रकार व्यवस्थित करना चाहिये जिससे अनुभवों, क्रियाओं और विषयों में परस्पर सह-सम्बंध हों और यह सब परस्पर एक रूप होकर बालक को उपयोगी ज्ञान दे सकें।

4. यथार्थवाद और पाठ्यक्रम (Realism and Curriculum)— यथार्थवादियों के अनुसार, *वस्तु महत्त्वपूर्ण* है। अतएव वे पुस्तकीय ज्ञान का विरोध करते हैं और व्यावहारिक ज्ञान के पक्षपाती हैं। वे बालकों को ऐसा ज्ञान देना चाहते हैं जो उनके लिए उपयोगी हो व उनके वास्तविक जीवन से सम्बन्धित हो। इस धारणा के अनुकूल वे पाठ्यक्रम में ऐसे विषयों को स्थान देते हैं जो उनको वास्तविक जीवन की परिस्थितियों से अवगत करा देंगे और वे अपने भावी जीवन में इनसे लाभ उठा सकेंगे। यथार्थवादी अपने पाठ्य-क्रम में भावात्मक एवं अमूर्त विषयों को गौण स्थान देते हैं।

पाठ्यक्रम के आधार
(Basis of Curriculum)

पाठ्यक्रम निर्माण को निश्चित स्वरूप देने हेतु सामान्यत: निम्न आधार माने जाते हैं—

1. दार्शनिक आधार (Philosophical Basis)—क्योंकि पाठ्यक्रम निर्माण का लक्ष्य शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति है और शिक्षा के उद्देश्य विभिन्न दार्शनिक परम्पराओं से प्रभावित होते रहते हैं, अत: पाठ्यक्रम निर्माण का प्रारूप भी दार्शनिक विचारधारा से प्रभावित होता रहता है।

यह शिक्षालय के विषयों तथा क्रियाओं के बीच की खाई को पाटती है।

2. मनोवैज्ञानिक आधार (Psychological Basis)—इस आधार के अन्तर्गत् शिक्षा का केन्द्र बिन्दु छात्र होता है और शिक्षा एवं पाठ्यक्रम उसी के अनुरूप बनाये जाते हैं। स्वाभाविक रूप से उनका आधार बालक की योग्यतायें और क्षमतायें होती हैं। इस आधार पर ये पाठ्य-वस्तु का चयन करते समय मनोवैज्ञानिक विधियों और सिद्धान्तों को तो दृष्टिगत रखा ही जाता है, साथ ही बालक की नैसर्गिक प्रवृत्तियों को भी प्रमुख स्थान दिया जाता है।

Scanned with CamScanner

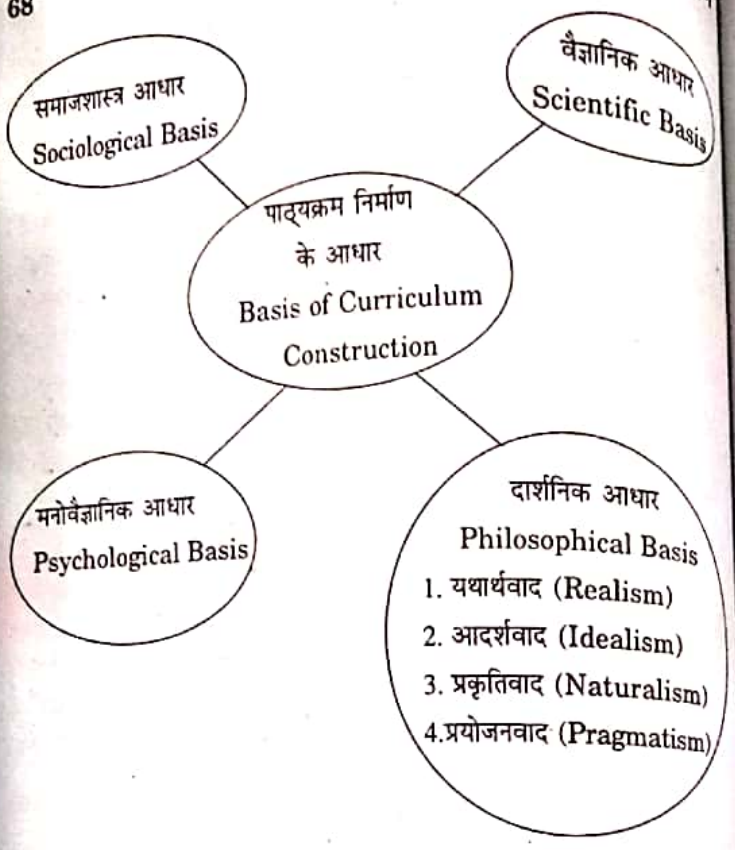

3. सामाजिक आधार (Socialogical Basis)—इस दृष्टिकोण का आधार बालक मे सामाजिकता का विकास करना होता है। अत: इसके अन्तर्गत् उन सभी वस्तुओं को सम्मिलित किया जाता है जो बालक में सामाजिक गुणो के विकास में सहायक हो सके, जिससे कि बालक एक अच्छा नागरिक बन सके।

यह छात्रों को सामाजिक एवं प्राकृतिक विज्ञानों, कलाओं, धर्मों के साथ परस्पर घनिष्ठ सम्पर्क द्वारा मूल्यों के निर्धारण करने के योग्य बनाता है।

यह छात्रों को प्रजातान्त्रिक देश का सफल नागरिक बनने के लिए तैयार करता है।

4. वैज्ञानिक आधार (Scientific Basis)—यह आधार पाठ्यक्रम मे वैज्ञानिक विषयों को सम्मिलित करने का पक्षधर है, जिससे कि बालक सम्पूर्णता से जीवन व्यतीत कर सके और समाज के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित कर सके।

यह एक ऐसे वातावरण का सृजन करता है। जहाँ पर वे चिन्तन, तर्क निर्णय, निरीक्षण आदि की शक्तियों का विकास कर सकें।

पाठ्यक्रम के प्रकार
(Kinds of Curriculum)

पाठ्यक्रम का संगठन भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से किया जाता है। इस दृष्टि से पाठ्यक्रम अनेक प्रकार के हो सकते है। नीचे हम पाठ्यक्रम के विभिन्न प्रकारों पर संक्षिप्त मे प्रकाश डालेंगे।

(1) बाल-केन्द्रित पाठ्यक्रम (Child Centred Curriculum)—अब पाठ्यक्रम का संगठन बालक की प्रवृत्तियों, रूचियो और योग्यताओ, अवस्था इत्यादि को ध्यान में रखते हुए किया जाता है, तो उसे बाल-केन्द्रित पाठ्यक्रम कहते हैं।

(2) कार्यो पर केन्द्रित पाठ्यक्रम (Activity Centred Curriculum) : जब विद्यालय में बालकों के व्यक्तित्व विकास के लिए उनकी रूचियाँ, योग्यताओं, आवश्यकताओं, भावनाओं, इत्यादि के आधार पर उनको अनेक प्रकार की क्रियायें करने के लिए दी जाती है तो इस प्रकार की व्यवस्था को क्रियाओं पर केन्द्रित पाठ्यक्रम कहते है।

(3) अनुभव केन्द्रित पाठ्यक्रम (Experience Centred Curriculum) : जब पाठ्यक्रम का निर्माण बालको के अनुभवों को ध्यान मे रखते हुए किया जाता है तो इस प्रकार के पाठ्यक्रम को अनुभव केन्द्रित पाठ्यक्रम कहते है।

(4) विषय केन्द्रित पाठ्यक्रम (Subject Centred Curriculum) : विषय केन्द्रित पाठ्यक्रम वह पाठ्यक्रम है जिसमे बालक को महत्त्व न देकर विभिन्न विषयो को महत्त्व दिया जाता है। भारत में प्राय: इसी प्रकार के पाठ्यक्रमो का प्रचलन है।

(5) व्यवसाय एवं प्राविधिक केन्द्रित पाठ्यक्रम (Vocational and Technical Centred Curriculum) : जब बालकों को शिक्षालय विभिन्न व्यवसाय तथा प्राविधिक कार्य सिखाये जाते है तो इस प्रकार की पाठ्य वस्तु व्यवसाय एवं प्राविधिक केन्द्रित पाठ्यक्रम कहते हैं।

(6) शिल्प केन्द्रित पाठ्यक्रम (Craft Centred Curriculum) : शिक्षालय मे बालको से विभिन्न प्रकार की शिल्पकलाओ जैसे—कृषि, कताई, बुनाई, और लकड़ी का कार्य इत्यादि सीखने के लिए विशेष अवसर दिये जाते है। वे इस प्रकार की पाठ्य वस्तु को शिल्प केन्द्रित पाठ्यक्रम कहते है। बेसिक शिक्षा (Basic Education) या वर्धा स्कीम में इस प्रकार से पाठ्यक्रम को विशेष महत्त्व दिया जाता है। इसमें अन्य विषयों यथा (1) मातृ-भाषा, (2) गणित, (3) समाज विज्ञान, (4) चित्रकला, (5) संगीत, (6) शरीर विज्ञान तथा (7) साधारण विज्ञान को शिल्पों को केन्द्रित करते हुए पढ़ाया जाता है।

(7) कोर पाठ्यक्रम (Core Curriculum) :

अर्थ (Meaning) : कोर पाठ्यक्रम का तात्पर्य उस पाठ्यक्रम से है जिनमें से कुछ विषय तो अनिवार्य होते है ओर कई विषय ऐसे होते है जिनमें से कुछ को विद्यार्थी अपनी रूचियों और क्षमताओं के अनुसार चुन लेते है। अमेरिका में इस तरह के

Scanned with CamScanner

पाठ्यक्रम बहुत प्रचलित है। इस प्रकार के पाठ्यक्रम में एक तो बालक अपने जीवन में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण विषयों को अनिवार्य रूप से पढ़ते हैं दूसरे वे अपनी रूचियों तथा आवश्यकतानुसार कुछ विषयों को चुनकर पढ़ने का अवसर प्राप्त कर लेते है।

उद्देश्य (Aims) : कोर पाठ्यक्रम का उद्देश्य 'समस्त युवकों को व्यक्तिगत और सामाजिक समस्याओं से सम्मिलित अनुभव प्रदान करना है। बालकों में वास्तविक समस्याओं के सुलझाने का अनुभव देना है। इस प्रकार उन्हें भावी समस्याओं का सामना करने के योग्य बनाना है। इसके द्वारा बालकों को वह अनुभव प्रदान करता है जो उन्हें समाज का अच्छा नागरिक बनने में सहायता करता है।

"To provide all youth a comman body of experience or around personal and social problems to give boys and girls successful experience in solving the problems which are real to them here and now thus preparing them to meet future problems to give youth experience which will lead them to become other citizens in a community office of education, federal security frequency." —***Bulletin 1952 N***

विशेषतायें (Characteristics) : (1) कई विषयों को एक साथ पढ़ाया जाना, (2) किसी विषय के पढ़ाने के लिए निश्चित समय का अभाव, (3) बाल केन्द्रित या मनोवैज्ञानिक तथा (4) कार्यों द्वारा समस्याओं को हल करने का अनुभव प्राप्त होना।

अनिवार्य विषय (Compulsory Subjects) : कोर पाठ्यक्रम में निम्न विषयो को अनिवार्य रूप से प्रमुख स्थान दिया जाता है—(1) स्वास्थ्य, शिक्षा, शारीरिक प्रशिक्षण—किशोरावस्था मे शारीरिक परिवर्तन एवं विकास तीव्रगति से होता है ऐसी परिस्थिति में बालकों को स्वास्थ्य एवं शारीरिक शिक्षा देना नितान्त आवश्यक है जिससे कि स्वास्थ नागरिकता की नींव पड़ जाये। स्वास्थ्य विधि एवं स्वास्थ्य विज्ञान के पढ़ाने के साथ-साथ व्यायाम, सामूहिक खेल, कसरत, नृत्य, तैरना आदि क्रियाओं का आयोजन करना चाहिये। (2) कला, संगीत प्रयोगात्मक कार्य—भाव एवं कल्पना जगत में विचरण करने वाले प्राणी अर्थात् किशोरों के लिए कला, संगीत एवं प्रयोगात्मक कार्यों की परमावश्यकता है। अत: पाठ्यक्रम में साहित्य, संगीत, नमूने बनाना, चित्र कला, सजावट एवं नाना प्रकार की प्रयोगात्मक क्रियाओं लकड़ी, धातु, कागज, बाग बानी, मिट्टी बुनाई एवं जिल्द बाँधने के काम को स्थान मिलना चाहिये। (3) विज्ञान-प्रकृति के रहस्यों को जानने के लिए एवं मानव ने प्रकृति पर कैसे विजय प्राप्त की है यह पता लगाने के लिए बालकों के पाठ्यक्रम में विज्ञान का समावेश होना परमावश्यक है। इसके लिए वनस्पति, विज्ञान, शरीर विज्ञान, भौतिकशास्त्र एवं रसायनशास्त्र आदि विषयों को पढ़ाना चाहिये। (4) मानवीय एवं सामाजिक विषय—मनुष्य सामाजिक प्राणी है। अत: प्रत्येक बालक को मानवीय एवं सामाजिक विषयों के पढ़ने का अवसर मिलना चाहिये। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए इतिहास, नागरिकशास्त्र, भूगोल समाजशास्त्र आदि विषयों को पढ़ाना चाहिये ताकि बालकों का सामाजिक विकास उचित रूप से हो और वे एक योग्य नागरिक बने।

(5) गणित—संख्या, ज्ञान, अमूर्त विचारों एवं तर्क शक्ति के विकास और दैनिक जीवन में गणित सम्बंधी क्रियाओं के लिए बालकों को गणित पढ़ाना बहुत ही आवश्यक है। गणित एक कठिन विषय अवश्य होता है परन्तु मनोवैज्ञानिक ढंग से पढ़ाने से उसकी दुरूहता चली जाती है। (6) भाषा—भाषा विज्ञान एवं प्रयोग मनुष्य की सबसे बड़ी विशेषता है। इस अवस्था में तो भाषा की शिक्षा और भी अधिक महत्त्व रखती है। बालकों को केवल बोलना ही नहीं सीखना है, वरन् अच्छी तरह बोलना सीखना है। बालको को पढ़ने के लिए साहित्यिक पुस्तकें, समाचार पत्र, यात्रा सम्बंधी कहानियाँ, नाटक कवितायें आदि को प्रदान करना चाहिये। साथ ही साथ नाटक खेलने, वाद-विवाद करने एवं अन्ताक्षरी की व्यवस्था करना चाहिये।

प्रचलित पाठ्यक्रम के दोष
(Drawbacks of Existing Curriculum)

ब्रिटिशकाल की शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए प्रचलित पाठ्यक्रम का संगठन किया गया था किन्तु अब यह स्वतंत्र भारत के उद्देश्यों की पूर्ति नहीं करता। प्रचलित पाठ्यक्रम मे उन विषयों, अनुभवों तथा क्रियाओं का सर्वथा अभाव है जो बालकों को उत्तम नागरिक बना सके। माध्यमिक शिक्षा समिति ने प्रचलित पाठ्यक्रम के निम्नलिखित दोषों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है—

(1) संकुचित आधार (Narrower Bases) : प्रचलित पाठ्यक्रम उच्च दार्शनिक तत्वों, सामाजिक आवश्यकताओं बालकों की मनोवैज्ञानिक विशेषताओं एवं क्षमताओं तथा वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित नहीं है। यह केवल विद्यार्थियों को विश्वविद्यालय को शिक्षा प्राप्त करने के लिए तैयार कर पाता है। ऐसी दशा में न बालक अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के योग्य हो पाते हैं और न समाज की। इस प्रकार प्रचलित पाठ्यक्रम का आधार या दृष्टिकोण बहुत ही संकुचित है।

(2) विषयों की अधिकता (Multiplicity of Subjects) : प्रचलित पाठ्यक्रम में आवश्यकता से अधिक विषयों का समावेश है। फलस्वरूप बालक किसी भी विषय का अध्ययन ठीक से नहीं कर पाते। सामान्य तौर से बालक विचारों के बोझ से दबे रहते हैं। इसके साथ-साथ विषयों में सह-सम्बंध स्थापित करते हुए बालकों को नहीं पढ़ाया जाता। फलस्वरूप वे ज्ञान के समग्र रूप से परिचित होने से वंचित रह जाते हैं। पाठ्यक्रम में निर्धारित विभिन्न विषयों की पाठ्य-वस्तु का चयन बालकों की रूचि तथा क्षमताओं के अनुसार नहीं किया जाता। इन सब बातों से पाठ्यक्रम और भी बोझिल हो जाता है।

(3) पुस्तकीय एवं सैद्धान्तिक ज्ञान की व्यवस्था (Provision of Bookish and Theoretical Knowledge) : प्रचलित पाठ्यक्रम बालकों को केवल पुस्तकीय एवं सैद्धान्तिक ज्ञान प्रदान करता है। वह बालकों को ऐसे तथ्यों को प्रदान करता है जिनका उनके व्यावहारिक जीवन से कोई सम्बंध नहीं है। फलस्वरूप जब

Scanned with CamScanner

वे सैद्धान्तिक ज्ञान प्राप्त कर व्यावहारिक जीवन में प्रवेश करते हैं तो वे जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में अपने आप को अयोग्य पाते हैं।

(4) जीवन से असम्बन्धित (Unrelated With Life) : प्रचलित पाठ्यक्रम में ऐसे विषयों को स्थान दिया जाता है जिनका बालकों के जीवन में कोई सम्बंध नहीं है। परिणामस्वरूप शिक्षा तथा उनके जीवन के बीच एक गहरी खाई पड़ जाती है। वे न वास्तविक जीवन की समस्याओं और आवश्यकताओं को समझ पाते हैं और न ही वे उससे समायोजन स्थापित कर पाते हैं। माध्यमिक शिक्षा समिति के अनुसार, "माध्यमिक शिक्षा की भाँति माध्यमिक पाठ्यक्रम का जीवन से कोई सम्बन्ध नहीं है, यह बालकों को जीवन के लिए तैयार करने में असफल रहा है, यह वहाँ से बाहर की दुनियाँ का उन्हें कोई आभास नहीं कराता, जिसमें वे शीघ्र ही प्रवेश करने वाले हैं।"

"Like secondary education secondary curriculum is out of time with life to prepare students for life, it does not give them a real understanding or sight into the world outside the school, into which they shall have to enter presently.

—Secondary Education Committee

(5) तकनीकी एवं व्यावसायिक शिक्षा की व्यवस्था का अभाव (Lack of the Provision of Technical and Professional Education): आज का युग ओद्योगिकरण (Industrialization) का युग है। विश्व के समस्त देश औद्योगिक विकास में संलग्न है। स्वतंत्रता प्रगति के बाद भारत की ओर सक्रिय कदम उठा रहा है। किन्तु यह बहुत ही दु:ख की बात है प्रचलित पाठ्यक्रम में तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा की अत्यधिक कमी है। फलस्वरूप देश को तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा प्राप्त कुशल कार्यकर्त्ता प्राप्त नहीं हो पाते हैं और इस तरह देश की वास्तविक औद्योगिक प्रगति नहीं हो पा रही है। तकनीकी तथा व्यावसायिक शिक्षा के अभाव में बालकों में श्रम के प्रति महत्त्व की भावना भी जाग्रत नहीं होने पाती।

(6) परीक्षा की प्रधानता (Primacy of Examination) : हमारे देश की शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य बालकों को परीक्षा के लिए तैयार करना है। ताकि वे जैसे भी हो प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हो सकें। इस उद्देश्य को ध्यान में रहकर ही प्रचलित पाठ्यक्रम का निर्माण किया जाता है। पाठ्यक्रम में किन-किन विषयों को स्थान दिया जाए, निर्धारित विषयों में क्या-क्या पढ़ाया जाए, कौन-सी पुस्तकों को पाठ्यक्रम में स्थान दिया जाये, शिक्षालय में किस शिक्षक की नियुक्ति की जाए, किस विधि से पढ़ाया तथा पढ़ा जाए इत्यादि का निर्धारण परीक्षा पास करने की दृष्टि से किया जाता है। विद्यार्थी पाँच-छः महीने तो यह भी नहीं जानने का प्रयास करते हैं कि कक्षा में उन्हें क्या पढ़ाया जा रहा है किन्तु जब परीक्षा निकट आ जाती हैं तो उन परीक्षा का भूत सवार हो जाता है। अब वे थोड़ें समय में क्या करें, सभी कुछ तो पढ़ा नहीं जा सकता, परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त करना ही है, ऐसी स्थिति में वे परीक्षा में आने वाली सम्भावित विषय को रटने में संलग्न

हो जाते हैं। शिक्षक भी क्या विद्यार्थियों को परीक्षा में आने वाली सम्भावित सामग्री को बताने और रटाने में मदद देने लगते हैं। इससे एक तो बालकों को किसी भी विषय का वास्तविक ज्ञान प्राप्त नहीं हो पाता दूसरे श्रम तथा समय का भारी अपव्यय होता है। इस प्रकार वर्तमान पाठ्यक्रम का परीक्षा प्रधान होना अत्यन्त दोषपूर्ण है।

(7) व्यक्तिगत विभिन्नताओं की उपेक्षा (Negligence of Individual Difference) : प्रचलित पाठ्यक्रम में बालकों में पाई जाने वाली व्यक्तिगत विभिन्नताओं का कोई स्थान नहीं है। एक कक्षा के सब बालकों के लिए, चाहे उनकी प्रवृत्तियों, अभिवृत्तियों, रूचियों, बुद्धि स्तर, आयु, सीखने की गति इत्यादि में कितना भी अन्तर क्यों न हो, एक ही प्रकार का पाठ्यक्रम निर्मित किया जाता है। यह मनोवैज्ञानिक दृष्टि से सर्वथा उचित है। इससे बहुत से बालक अनुकूल शिक्षा प्राप्त न होने के कारण पढ़ने से वंचित रह जाते हैं और बहुत से बालक अनुशासनहीनता, अपराध तथा अन्य समाज विरोधी भावनाओं का शिकार हो जाते हैं। इस प्रकार प्रचलित पाठ्यक्रम में व्यक्तिगत विभिन्नता की उपेक्षा एक बहुत भारी अभिशाप है।

(8) नैतिक शिक्षा की उपेक्षा (Negligence of Moral Education) : ऐसा कोई भी विचारक न होगा जो किसी न किसी रूप में शिक्षा का उद्देश्य चरित्र विकास (Character Development) करना न मानता हो। किन्तु प्रचलित पाठ्यक्रम में नैतिक शिक्षा का कोई स्थान नहीं है तो चरित्र विकास को आधार है। फलस्वरूप बालकों में आत्म-विश्वास, आत्म-अनुशासन, ईमानदारी, परोपकारिता, सद्भावना, व्यक्तिगत एवं सामाजिक उत्तरदायित्व, नेतृत्व इत्यादि नैतिक गुणों का विकास नहीं हो पाता और इस प्रकार हमारा वर्तमान पाठ्यक्रम बालकों के चरित्र विकास में किंचित् मात्र भी सहयोग नहीं दे पाता।

(9) प्रजातांत्रिक व्यवस्था के अयोग्य (Unsuitable for Democratic Set-up) : प्रचलित पाठ्यक्रम में उन विषयों तथा क्रियाओं का कोई स्थान नहीं है जो बालकों में प्रजातंत्रीय भावना का विकास कर सकें। जब तक नवयुवक अपने देश तथा समाज के प्रति अपने उत्तरदायित्वों को भली प्रकार नहीं समझेंगे तब तक सही माने में प्रजातांत्रिक देश के नागरिक कहलाने के अधिकारी न हो सकेंगे और हमारे देश का भविष्य उज्जवल न हो सकेगा। ऐसी स्थिति में पाठ्यक्रम में प्रजातंत्रीय आदर्शों को स्थान देना आवश्यक है।

(10) बालकों में सर्वांगीण विकास के लिए अयोग्य (Unsuitable for the Harmonious Development of the Children) : प्रचलित पाठ्यक्रम के उक्त दोषों से यह स्पष्ट है कि यह बालकों के सर्वांगीण विकास में सहायक नहीं होता। ऐसी स्थिति में आवश्यकता इस बात ही है कि पाठ्यक्रम में ऐसे विषय तथा विषय-वस्तु का समावेश किया जाये तो शिक्षा के अन्तिम उद्देश्य अर्थात् सर्वांगीण विकास के उद्देश्य को पूरा कर सकें।

Scanned with CamScanner

पाठ्यक्रम को प्रभावित करने वाले घटक
(Factors Influencing Curriculum)

शैक्षिक तथा सामाजिक घटक पाठ्यक्रम का प्रभावित करते हैं। कुछ अन्य प्रमुख घटक निम्न है—

1. शासन पद्धति (Form of Government) : शिक्षा द्वारा राष्ट्र के समाज की आवश्यकताओ की पूर्ति की जाती है। शासन प्रणाली बदलने से पाठ्यक्रम के प्रारूप को बदलना होता है। केन्द्र तथा राज्य स्तर पार्टी की सत्ता बदलने से भी पाठ्यक्रम के प्रारूप पर प्रभाव पड़ता है। पाठ्यक्रम के विशिष्ट प्रारूप को केन्द्रीय सरकार प्रभावित करती है।

2. परीक्षा प्रणाली (Examination System) : परीक्षा प्रणाली पाठ्य-क्रम को प्रभावित करती है। वस्तुनिष्ठ परीक्षा में पाठ्यवस्तु के सूक्ष्म पाठ्यवस्तु से ही प्रश्न पूछे जाते है। जबकि निबन्धात्मक परीक्षा मे पाठ्यवस्तु के व्यापक—स्वरूप से प्रश्न पूछे जाते है। निबन्धात्मक परीक्षा मे उच्च उद्देश्यो का मापन किया जाता है जबकि वस्तुनिष्ठ मे निम्न उद्देश्यो का ही मापन किया जा सकता है।

3. शिक्षा व्यवस्था (The Organization of Education) : शिक्षा व्यवस्था और पाठ्यक्रम का गहन सम्बंध है, वह एक दूसरे को प्रभावित करते रहे है। पाठ्यक्रम का प्रारूप लचीला तथा परिवर्तनशील रहा है। छोटे बालकों का पाठ्यक्रम अनुभव केन्द्रित रहा है। माध्यमिक स्तर पर विषय केन्द्रित रहा है।

4. सामाजिक परिवर्तन (Social Change) : सामाजिक परिवर्तन मे आर्थिक परिवर्तन की गति अधिक तीव्र है इसलिये ये आर्थिक तथा भौतिक परिवर्तन भी पाठ्यक्रम को प्रभावित करते है। वाणिज्य ने सामाजिक जीवन को अधिक प्रभावित किया है। इसलिए व्यावसायिक पाठ्यक्रमो के साथ आर्थिक क्षेत्र में प्रशिक्षण सम्बंधी नये पाठ्यक्रम विकसित किये जा रहे है। शिक्षा के अन्तर्गत् दूरवर्ती शिक्षा (Distance Education) प्रणाली का विकास हुआ है। जिसमें माध्यमों तथा सम्प्रेषण विधियों को विशेष महत्त्व दिया जाता है।

5. अध्ययन समिति (Board of Studies) : पाठ्यक्रम के प्रारूप का निर्माण अध्ययन समितियों द्वारा किया जाता है। विभिन्न स्तरों पर अध्ययन समितियों के द्वारा पाठ्यक्रम का निर्माण तथा सुधार किया जाता है। अध्ययन समिति के सदस्यों की सूझबूझ तथा अनुभवो द्वारा ही पाठ्यक्रम के प्रारूप को विकसित करते हैं। इसलिए इन सदस्यों की अभिरूचियों, अभिवृत्तियों तथा मानसिक क्षमताओं का सीधा प्रभाव पाठ्यक्रम पर पड़ता है।

6. राष्ट्रीय आयोग तथा समितियाँ (National Commissions and Committes) : शिक्षा में सुधार और विकास हेतु राष्ट्रीय स्तर आयोग तथा समितियाँ गठित की जाती है। उन्होने विश्वविद्यालय, माध्यमिक तथा प्राथमिक स्तर पर सुधार के लिए सुझाव दिये और उन सुझावों को लागू करने का प्रयास किया गया जिससे पाठ्यक्रम

के प्रारूप को भी बदलना पड़ा। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में व्यावसायिक शिक्षा (Vocational Education) को अधिक महत्त्व दिया है। इसलिए माध्यमिक स्तर पर व्यावसायिक पाठ्यक्रम का प्रारूप विकसित किया गया है। शिक्षा के आयोगों तथा समितियों के सुझाव के आधार पर भी पाठ्यक्रम का प्रारूप प्रभावित होता है।

पाठ्यक्रम निर्माण के सिद्धान्त
(Principles of Curriculum Construction)

अभी यह देखा कि प्रचलित पाठ्यक्रम अनेक दोषों से पूर्ण है। अब हम पाठ्यक्रम के निर्माण के उन सिद्धान्त को प्रस्तुत है जिनका अनुगमन करने से ऐसे पाठ्यक्रम का निर्माण किया जा सकता है जिसके द्वारा शिक्षार्थी शिक्षक, समाज आदि सभी लाभान्वित होंगे।

(1) जीवन से सम्बन्धित होने का सिद्धान्त (Principle of Relation with Life) : पाठ्यक्रम निर्माण का प्रथम सिद्धान्त है कि पाठ्यक्रम के अन्तर्गत् उन्हीं विषय-सामग्रियों तथा क्रियाओं का समावेश किया जाये जो बालकों के वर्तमान जीवन से सम्बन्धित हों ताकि वह अपने वर्तमान जीवन की समस्याओं को अच्छी तरह समझ और सुलझा सकें।

(2) संस्कृति तथा सभ्यता के ज्ञान का सिद्धान्त (Principle of the knowledge of Culture and Civilization) : पाठ्यक्रम निर्माण या निर्धारण का दूसरा सिद्धान्त यह है कि इसमें ऐसे विषयो, क्रियाओं तथा वस्तुओं का समावेश किया जाये जिनके द्वारा बालक अपनी संस्कृति तथा सभ्यता अर्थात् जातीय अनुभवों का अच्छी तरह ज्ञान कर सकें। इस सम्बंध में हैण्डबुक ऑफ सजेशन्स फॉर टीचर्स नामक पुस्तक में लिखा है "वास्तव में यह तथ्य अधिकाधिक स्वीकार किया जा रहा है कि पाठ्यक्रम के विभिन्न विषय निपुणताओं के प्रतीक होते हैं जो सम्पूर्ण जाति के अनुभव में महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो चुकी हैं और जिनकी शिक्षा देना प्रत्येक आने वाली पीढ़ी के लिए आवश्यक होता है। इस दृष्टि से पाठशाला का कर्त्तव्य है कि व्यवहार को उन परम्पराओं, ज्ञान एवं प्रमाणों को जिन पर हमारी सभ्यता आधारित है, रक्षा करें और उन्हें आगे बढ़ाये।"

"It is in fact, being increasingly recognised that the various subjects of the curriculum represent certain forms of skill and certain branches of knowledge which have proved to be of importance in the experience of the race, and which have to be taught to each succeding generation. From this point of view it is the function the school to preserve and transmit the tradition, knowledge and standards of conduct on which our civilization depends."

—Handbook of Suggestions for Teacher P. 31 (Board of Education London)

Scanned with CamScanner

(3) अग्रदर्शिता का सिद्धान्त (Principle of Farward Looking): पाठ्यक्रम में ऐसे विषयों, क्रियाओं तथा वस्तुओं का समावेश किया जाये जिनके द्वारा बालक जीवन में आगे आने वाली परिस्थितियों को अच्छी तरह समझ सके और सफल जीवन यापन करने के लिए उससे अनुकूलीकरण कर सके। इस सम्बंध में रायबर्न ने लिखा है "बालक जो कुछ शिक्षालय में सीखता है उसके द्वारा उसे इस संसार की जीवन परिस्थितियों के संग अनुकूलीकरण करने के योग्य होना चाहिये..... जो उसे आवश्यकता पड़ने पर परिस्थितियों में परिवर्तन करने के योग्य भी बना सके।"

"What a child learns in school must help to adjust himself to conditions of living in this world, and must further give him a foundation of knowledge ..... which will enable him to change those conditions where they need changing." —*Ryburn*

(4) सृजनात्मक तथा रचनात्मक शक्तियों के उपयोग का सिद्धान्त (Principle of Utilization of Creative and Constructive Powers): बालक में सृजनात्मक एवं रचनात्मक शक्तियाँ जन्म से ही पाई जाती हैं। पाठ्यक्रम के निर्माण में ऐसी विषय वस्तु तथा क्रियाओं का समावेश होना चाहिये जो इन शक्तियों के विकास तथा इनका उपयोग कर सके। इससे बालक एक न एक सृजनात्मक उपलब्धि प्राप्त करने में समर्थ हो जायेगा जो उसके भावी जीवन के लिए आवश्यक है।

(5) व्यक्तिगत विभिन्नताओं पर ध्यान देने का सिद्धान्त (Principle of Attention on Individual Difference): जबसे शिक्षा में मनोविज्ञान को स्थान प्राप्त हुआ तबसे पाठ्यक्रम के निर्माण में बालकों में पाई जाने वाली व्यक्तिगत विभिन्नताओं पर ध्यान देना आवश्यक समझा जाने लगा है। इसके लिए पाठ्यक्रम कठोर (Regid) न होकर लचीला (Flexible) होना चाहिये, ताकि उसमें बालकों की व्यक्तिगत रूचियों, प्रवृत्तियों, आवश्यकताओं, क्षमताओं के अनुसार परिवर्तन किया जा सके।

(6) खेल और कार्य सम्बंधी क्रियाओं के अन्तर्सम्बंध का सिद्धान्त (Principle of Interrelation of Play and Work Activities): ये बालक की जन्मजात प्रवृत्ति है। जिसमें वह सुख आनन्द तथा स्वतंत्रता की अनुभूति करता है। ऐसी स्थिति में पाठ्यक्रम के निर्माण में बालकों से जो भी कार्य कराने तथा सिखाने की योजना बनाई जाए उनमें बालकों को अपनी खेल प्रवृत्ति की अभिव्यक्त करने का अवसर प्रदान किया जाये। इससे बालक जो भी कार्य करेंगे उनमें वे सुख तथा आनन्द का अनुभव करेंगे। इस प्रकार पाठ्यक्रम के निर्माण खेल तथा कार्य सम्बंधी क्रियाओं में अन्तर्सम्बंध स्थापित करने का प्रयत्न किया जाये।

(7) जीवन सम्बंधी समस्त क्रियाओं के समावेश का सिद्धान्त (Principle of Inclusion of all Life Activities): बालकों के जीवन को पूर्णता प्रदान करने अर्थात् उनके व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं यथा शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, राजनैतिक तथा नैतिक पक्ष के विकास के लिए पाठ्यक्रम में उनके जीवन से सम्बन्धित समस्त क्रियाओं का समावेश करना आदि आवश्यक है।

(8) सह-सम्बंध का सिद्धान्त (Principle of Correlation): पाठ्यक्रम के निर्माण में इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि इसमें जो भी विषय निर्धारित किए जायें उनमें सह-सम्बंध हो ताकि बालक जो भी ज्ञान प्राप्त करें वह परस्पर सम्बन्धित रहे और इस तरह वे ज्ञान के समग्र रूप से परिचित हो जाये।

(9) विकास की सतत् प्रक्रिया का सिद्धान्त (Principle of Continuous Process of Evolution): पाठ्यक्रम स्थिर न होकर परिवर्तन की अनवरत प्रक्रिया में विकसित होना चाहिये। " आर्थिक प्रगति नवीन व्यावसायिक अवसर, लोगों के बीच अधिक व्यापक अन्तर्सम्बंध एवं उन्नत आदर्श और महत्वाकांक्षायें यह मांग प्रस्तुत करती हैं कि शिक्षा सिद्धान्त तथा व्यवहार को ज्ञान, कुशलता और दृष्टिकोण के परिवर्तित पक्षों की आवश्यकताओं की पूर्ति के हेतु संचालित किया जाना चाहिये। वस्तुत: शिक्षालय से सम्बंधित कुछ व्यक्तियों द्वारा यह सुझाव दिया गया है कि पुस्तकों को समय-समय पर परिवर्तित अनुभवों एवं ज्ञानों के द्वारा प्रति स्थापित किया जा सके।

(10) स्वस्थ्य आचरण के आदर्शों की प्राप्ति का सिद्धान्त (Principle of Achievement of wholesome Behaviour Patterns): पाठ्यक्रम में इस प्रकार के विषय क्रियाओं तथा वस्तुओं को स्थान दिया जाए जिनसे बालक स्वस्थ आचरण के आदर्शों की प्राप्ति कर सकें अर्थात् वे दूसरों के प्रति सद्व्यवहार करना सीख सकें।

(11) बाल-केन्द्रियता का सिद्धान्त (Principle of Child Centrism): पाठ्यक्रम के निर्माण में बालकों की रूचियों, आवश्यकताओं, प्रवृत्ति अभिवृत्तियों, क्षमताओं बुद्धि, आयु इत्यादि पर ध्यान देना अति आवश्यक है। दूसरे शब्दों में पाठ्यक्रम बाल-केन्द्रित (Child-Centred) होना चाहिये।

(12) पर्याप्त समय की व्यवस्था का सिद्धान्त (Principle of Provision of Sufficient Time): किसी विषय के पाठ्यवस्तु को पूरा करने के लिए जितने समय की आवश्यकता है उतना समय पाठ्यक्रम में उसके लिए निश्चित कर देना चाहिये। इस प्रकार विभिन्न विषयों के कोर्स को पूरा करने के लिए पाठ्यक्रम में पर्याप्त समय की व्यवस्था कर देनी चाहिये।

उपर्युक्त सिद्धान्तों के अतिरिक्त पाठ्यक्रम निर्माण के कुछ अन्य सिद्धान्त भी हैं जिनमें से प्रमुख निम्निलिखित हैं—

(1) बालकों में जनतंत्रीय भावना का विकास करना।
(2) लड़कों तथा लड़कियों के पाठ्यक्रम में अन्तर होना।
(3) ग्रामीण तथा नगरों के शिक्षालयों के पाठ्यक्रमों में कुछ अन्तर होना।
(4) बालकों में परिश्रम के प्रति रूचि उत्पन्न करना।
(5) ह्वाइटहैड के अनुसार पाठ्यक्रम में कौतूहल (Curocty), यथार्थता (Precision) तथा सामान्यीकरण (Generalization) इन जीवन की तीन आवश्यकताओं का समावेश होना चाहिये।

Scanned with CamScanner

प्रचलित पाठ्य विवरण का आलोचनात्मक अध्ययन (Critical Appraisal of Existing Syllabus)

पाठ्यक्रम की अवधारणा विस्तृत एवं व्यापक है। इसमें वे समस्त अनुभव आ जाते हैं जिन्हें छात्र विद्यालय के तत्वाधान में प्राप्त करता है। इसमें कक्षा में और कक्षा के बाहर अर्जित समस्त शैक्षणिक एवं पाठ्यक्रम सहगामी क्रियायें आ जाती हैं। पाठ्यक्रम को क्रिया एवं अनुभव के रूप मे समझा जा सकता है।

पाठ्य-विवरण (Syllabus) शब्द का प्रयोग कभी-कभी भ्रमवश पाठ्य-क्रम (Curriculum) के अर्थ में कर दिया जाता है। यथार्थ में बौद्धिक विषय की सामग्री को पाठ्य-वस्तु (content) कहा जाता है। कक्षा में शिक्षण की दृष्टि से शिक्षण की सुविधा के लिए जब इस पाठ्य-वस्तु को व्यवस्थित कर लिया जाता है तो इसे पाठ्य-विवरण (Syllabus) कह सकते है।

इस प्रकार पाठ्य-विवरण विद्यालय वर्ष के दौरान विभिन्न विषयों में शिक्षण द्वारा छात्रों को दिये जाने वाले ज्ञान की मात्रा के विषय में निश्चित जानकारी प्रस्तुत करता है जबकि पाठ्यक्रम यह प्रदर्शित करता है कि शिक्षक किस प्रकार की शैक्षिक क्रियाओं के द्वारा पाठ्य-विवरण की आवश्यकता की पूर्ति करेगा। दूसरे शब्दों में पाठ्य-विवरण शिक्षण की पाठ्यवस्तु का निर्धारण करता है और पाठ्यक्रम उसे देने के लिए प्रयुक्त विधि का।

वाणिज्य शिक्षण को अधिक प्रभावशाली बनाया जा सकता है यदि वाणिज्य अध्यापक उस पाठ्यक्रम से पूर्णत: संतुष्ट है, जिसे कि उसे पढ़ाना है। साथ ही वह उसकी उपादेयता से भी परिचित होना चाहिये। यह तभी सम्भव हो सकता है, यदि वह प्रचलित पाठ्य-विवरण (Syllabus) का आलोचनात्मक अध्ययन करे। यह बात पूर्ण रूप से स्पष्ट होनी चाहिये कि प्रत्येक विषय में कुछ विशिष्ट उद्देश्य होते हैं जिन्हें छात्रों को प्राप्त करना होता है। अध्यापक को यह परीक्षा कर लेनी चाहिये कि वे कौन-से उद्देश्य है और क्या प्रस्तुत पाठ्य-विवरण के आधार पर उन्हें प्राप्त किया जा सकता है।

इस दृष्टि से प्रचलित पाठ्य-विवरण के आलोचनात्मक अध्ययन हेतु निम्न आधारों को दृष्टिगत रखा जा सकता है—

1. पाठ्य-वस्तु और शिक्षण उद्देश्यों से सम्बंध (Content in relation to objectives) : पाठ्य-वस्तु उद्देश्य प्राप्ति का साधन होती है। यदि लक्ष्य व साधन परस्पर सम्बन्धित न हों तो वांछित फल मृगतृष्णा सिद्ध होंगे। पाठ्य-विवरण की उपादेयता इस बात पर निर्भर करती है कि उसमें निहित प्रकरण सम्बन्धित शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति में कहाँ तक सहायक है? इस हेतु पाठ्य विवरण का इस संदर्भ में मूल्यांकन करना आवश्यक होगा। इसको वस्तुनिष्ठता से जानने हेतु निम्न तालिका का प्रयोग किया जा सकता है—

शिक्षण उद्देश्य (Objectives)

क्रमांक (S. No.)	प्रकरण (Topic)		ज्ञानात्मक पक्ष (Cognative Domain)	भावनात्मक पक्ष (Affective Domain)	मनोदैहिक पक्ष (Psycho-motor Domain)
1.	सैद्धान्तिक प्रकरण (Theoretical Topics)	2 3 4			
2.	प्रायोगिक प्रकरण (Practical Topics)	1 2 3 4			

2. पाठ्य-वस्तु का चयन व संगठन (Selection of Organisation of Content)—पाठ्य-वस्तु का चयन दूसरी महत्त्वपूर्ण कसौटी है जिसके आधार पर आलोचनात्मक विश्लेषण करना चाहिये। पाठ्यक्रम के विवेचन में पीछे पाठ्य-वस्तु संगठन के विषय में विवरण दिया गया है, उसका लाभ निम्न तालिका में उठाया जा सकता है—

क्रमांक (S. No.)	पाठ्य वस्तु संगठन (Organisation of Content)	प्रकरण (Tp) (1)	प्रकरण (2)	प्रकरण (3)	प्रकरण (4)	प्रकरण (5)
1.	तर्क पूर्ण संगठन (Logical)					
2.	प्रकरण केन्द्रित (Content Centered)					
3.	चक्रीय (Cyclic)					
4.	रूचि व आवश्यकता (Need & Interest)					
5.	जनतांत्रिक (Democratic)					

Scanned with CamScanner

3. पाठ्य-वस्तु की गहनता (Comprehensiveness) : पाठ्य-वस्तु चयन छात्रों के स्तर के अनुरूप होना चाहिये। इस कारण प्रकरणों में निहित पाठ्य न तो छिछली (Floating) हो और न अत्यधिक गहरी (deep)।

गहनता एक गुणात्मक (Qualitative) प्रत्यय है। इस कारण गहनता मूल्यांकन सापेक्षिक रूप से ही करना होगा। इसके लिए निर्धारण मापनी (rating scale) का प्रयोग करना होगा। यदि सामान्य विश्लेषण करना हो तो तीन बिन्दु निर्धा मापनी (Three points rating scale) का प्रयोग करना चाहिये, यदि अधि गहराई से विश्लेषण करना हो, तो पाँच बिन्दु निर्धारण मापनी (five points rating scale) का प्रयोग वांछनीय होगा।

क्रमांक (S. No.)	पाँच बिन्दु निर्धारण मापनी (Five Points Rating Scale)	सैद्धान्तिक प्रकरण					प्रायोगिक प्रकरण			
1.	अत्यधिक गहन (Most Comprehensive)									
2.	बहुत गहन (Very Comprehensive)									
3.	गहन (Comprehensive)									
4.	कम गहन (Less Comprehensive)									
5.	गहन नहीं (Not Comprehensive)									

उपरोक्त तालिका में दी गयी सूचना को आंकिक मूल्य (Numerical Value) देकर पूरे पाठ्य विवरण की गहनता को निकाला जा सकता है। (इसके लिए अत्यधिक गहन की समस्त चिन्हों (Tellies) को 5 से गुणा करें, बहुत गहन को 4 से, गहन को 3 से, कम गहन को 2 से और गहन नहीं को 1 से गुणा करके, पूर्ण गहन स्थिति को निकाला जा सकता है।)

4. सैद्धान्तिक, व्यावहारिक या दोनों (Theoretical, Practical or both) : वाणिज्य के दोनों पक्ष (सैद्धान्तिक व व्यावहारिक) समान रूप से महत्वपूर्ण हैं। केवल सैद्धान्तिक पाठ्य विवरण ही होगा तो वह पाठ्यक्रम को पुस्तकीय व अनुपयोगी बना देगा। इस कारण प्रत्येक प्रकरण में निहित पाठ्य सामग्री में यह देखना होगा, कि

उसका सैद्धान्तिक पक्ष कितना है और व्यावहारिक सम्भावनायें कितनी है? इसको वस्तुनिष्ठता से इस प्रकार विश्लेषित किया जा सकता है।

क्रमांक (S. No.)	प्रकरण (Topic)	सैद्धान्तिक पाठ्य वस्तु प्रतिशत (Theoretical Content %)	व्यावहारिक पाठ्य वस्तु-प्रतिशत (Practical Content %)	योग प्रतिशत (Total Percentage)
1.	—			
2.	—			
3.	—			
4.	—			
5.	—			

5. परीक्षा केन्द्रित (Examination Centred) : छात्र और शिक्षक दोनों के लिए ही, आजकल, किसी भी प्रकरण का महत्त्व, परीक्षा में उसकी महत्ता के आधार पर किया जाता है। शिक्षक अपने शिक्षण में व छात्र अपने अध्ययन में उन्हीं प्रकरणों पर उतना ही जोर देते हैं, जितने अंकों का प्रश्न उक्त प्रकरण से परीक्षा में आता है। इसका प्रभाव यहाँ तक पड़ने लगा है कि अब पाठ्य विवरण में प्रकरणों से पूछे जाने वाले प्रश्नों की संख्या व अंकों का वितरण तक दिया जाने लगा है। परीक्षा के प्रभाव का विश्लेषण निम्न तालिका द्वारा किया जा सकता है—

क्रमांक (S. No.)	प्रकरण (Topic)	प्रश्न-पत्र में प्रश्नों की संख्या (Number of Questions in Question Paper)	अंक (Score)
1.	—		
2.	—		
3.	—		
4.	—		
5.	—		

Scanned with CamScanner

6. बाल केन्द्रित (Child Centred) : पाठ्य विवरण केवल मात्र सामान्य छात्रों के लिए ही नहीं होना चाहिये, उसमें पिछड़े छात्र व प्रतिभाशाली छात्रों के लिए भी प्रावधान होना चाहिये। पाठ्य विवरण का इस दृष्टिकोण से भी विश्लेषण कर लेना चाहिये।

पाठ्य विवरण का केन्द्र बिन्दु छात्र होना चाहिये, उसकी आयु, पूर्वज्ञान, रुचि, अभिरूचि, आवश्यकता, आदि का ध्यान पाठ्य-वस्तु चयन के समय रखना चाहिये। पाठ्य विवरण में उक्त चीजों को कितना महत्त्व दिया गया है, यह जान लेना चाहिये। इसी के आधार पर उसकी छात्र के लिए उपादेयता का मूल्यांकन करना सम्भव हो सकेगा।

7. सह-सम्बंध (Correlation) : क्योंकि छात्र ज्ञानार्जन समग्र रूप में करता है और वाणिज्य का दूसरे विषयों पर प्रभाव व दूसरे विषयों का वाणिज्य पर वाणिज्य पर प्रभाव, एवं वाणिज्य की स्वयं की शाखाओं के मध्य सह-सम्बंध के महत्त्व को नकारा नहीं जा सकता, इस कारण पाठ्य विवरण का स्वरूप एकांगी तो नहीं है, यह जानने हेतु उसका विश्लेषण उपरोक्त आधार पर भी कर लेना चाहिये।

क्रमांक (S. No.)	प्रकरण (Topic)	ऐकिक सह-सम्बंध के विषय (Subjects of Unilateral Correlation)	पारस्परिक सह-सम्बंध के विषय (Subjects of Collateral Correlation)	गुणांक सह-सम्बंध के विषय (Subjects of Multilateral correlation)
1.	—			
2.	—			
3.	—			
4.	—			
5.	—			

8. भावी शिक्षा के लिए (For Future Education) : माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम और उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम को अन्तर सम्बंधित (Inter-connected) होना चाहिये, जिससे ज्ञानार्जन की निरन्तरता (continuity) बनी रहे। पाठ्य विवरण का विश्लेषण इस आधार पर भी कर लेना चाहिये, जिससे यह ज्ञात हो सके कि कौन-कौन से प्रकरण भावी शिक्षा के लिए आधार बन सकते हैं, जिससे पाठ्य-विवरण का भावी जीवन में समायोजन करने की क्षमता का मूल्यांकन किया जा सके।

Scanned with CamScanner

of bonafide teaching. It is not suitable for practice in teaching (*e.g.*, problem of discipline and classroom control cannot at present be dealt with in micro teaching setting) but certainly it supplies some impressive alternatives, such as close supervision, manageable objectives established, according to individual training needs and progress, continuous diagnostic feedback, unprecedented opportunity for self evaluation, immediate guidance in area of demonstrated deficiency and an opportunity to repeat a lesson conveniently, as often as desirable."

वाणिज्य शिक्षण के कौशल
(SKILL OF COMMERCE TEACHING)

जैसा कि हम जान चुके हैं कि सूक्ष्म शिक्षण का उद्देश्य प्रशिक्षित एवं अनुभवी अध्यापक बनाना है अर्थात् उनमें शिक्षण कौशलों का विकास करना है। क्योंकि एक अध्यापक को निरन्तर अपने शिक्षण व्यवहार को सुधारने की आवश्यकता होती है अत: एक प्रशिक्षण-अध्यापक के लिए आवश्यक हो जाता है कि वह शिक्षण कौशल के अर्थ को समझे और उन कौशलों की पहचान कर सके।

शिक्षण कौशलों का अर्थ एवं परिभाषा
(MEANING AND DEFINITION OF TEACHING SKILL)

एन. एल. गेज (1968) के अनुसार, "शिक्षण कौशल वह विशिष्ट अनुदेशन प्रक्रिया है जिसे अध्यापक अपनी कक्षा में प्रयोग करता है। इनका सम्बन्ध शिक्षण की विभिन्न अवस्थाओं से होता है अथवा अध्यापक इनका अपने शिक्षण में निरन्तर प्रयोग करता है।"

"Teaching skills are specific instructional activities and procedures that a teacher may use in his classroom. These are related to the various stages of teaching or in the continuous flow of the teacher performance"

—*N.L. Gage* (1968)

भारतीय शिक्षाशास्त्री **बी. के. पासी** (1976) ने भी शिक्षण कौशल की परिभाषा दी है जो इस प्रकार है—

"शिक्षण कौशल, छात्रों को सीखने के लिए सुगमता प्रदान करने के विचार से सम्पन्न की गई सम्बन्धित शिक्षण क्रियाओं या व्यवहारों का समूह है।"

"Teaching skills are a set of related teaching acts or behaviour performed with the intention to facilitate pupils learning."

—*B.K. Passi* (1976)

ब्रिटेन के स्टर्लिंग विश्वविद्यालय के **मैकईनटेयर तथा व्हाइट** ने शिक्षण कौशल की परिभाषा इस प्रकार दी है—

"शिक्षण कौशल, शिक्षण व्यवहारों से सम्बन्धित वह स्वरूप होता है जो कक्षा की अन्तःक्रिया उन विशिष्ट परिस्थितियों में उत्पन्न करता है जो शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक होते हैं और छात्रों को सीखने में सुगमता प्रदान करते हैं।"

"Teaching skill is a set of related teaching behaviours which are specified types of classroom interaction situations which tend to facilitate the achievement of specified educational objectives."

—*M.C. Intyeard White* (1965)

प्रभावशाली शिक्षण के लिए विभिन्न कौशलों की पहचान
(IDENTIFICATION OF VARIOUS TEACHING SKILLS FOR EFFECTIVE TEACHING)

प्रभावशाली शिक्षण में विभिन्न शिक्षण कौशलों का प्रयोग किया जाता है। समस्त विषयों के शिक्षण कौशलों की पहचान सर्वप्रथम ऐलन तथा रायन (1969) ने की थी। इन्होंने 14 शिक्षण कौशलों को प्रस्तुत किया है—

(i) उद्दीपन भिन्नता (Stimulus Variation)
(ii) विन्यास प्रेरणा (Set Induction)
(iii) समीपता (Closer)
(iv) मौन एवं अशाब्दिक अन्त:प्रक्रिया (Silence and Non-verbal Cues)
(v) पुनर्बलन (Reinforcement)
(vi) प्रश्न पूछना (Asking Questions)
(vii) खोजपूर्ण प्रश्न (Probing Questions)
(viii) विकेन्द्रीय प्रश्न (Divergent Questions)
(ix) छात्र व्यवहार का ज्ञान (Attending Behaviour)
(x) दृष्टान्त देना (Illustrating)
(xi) व्याख्यान (Lecturing)
(xii) उच्च स्तरीय प्रश्न (High Order Questions)
(xiii) नियोजित पुनरावृत्ति (Planned Repetition)
(xiv) सम्प्रेषण की पूर्णता (Completeness of Communication)

भारतीय शिक्षाशास्त्री बी. के. पासी (1976) ने भी 13 कौशलों को प्रस्तुत किया है। ये शिक्षण कौशल निम्नलिखित हैं—

(1) अनुदेशन उद्देश्यों को लिखना (Writing Instructional Objectives)
(2) पाठ की प्रस्तावना (Introduction of a Lesson)
(3) प्रश्नों की प्रवाहशीलता (Fluency of Questioning)
(4) खोजपूर्ण प्रश्न (Probing Questions)
(5) व्याख्या कौशल (Explanatory Skills)
(6) दृष्टांत देना (Illustrating)
(7) उद्दीपन भिन्नता (Stimulus Variation)
(8) मौन तथा अशाब्दिक अन्त:प्रक्रिया (Silence and Non-verbal Cues)
(9) पुनर्बलन (Reinforcement)
(10) छात्रों के कार्यों को प्रोत्साहन (Increasing Students Participation)
(11) श्यामपट्ट का प्रयोग (Use of Blackboard)
(12) समीपता की प्राप्ति (Achieving Closure)
(13) छात्र व्यवहार की पहचान (Students Attending Behaviours)

किसी सूक्ष्म शिक्षण परिस्थिति में इनकी संख्या घट-बढ़ सकती है। एक अध्यापन पाठ के विभिन्न स्तरों पर आवश्यक शिक्षण कौशलों की सूची निर्धारित की गई है। इनका वर्गीकरण पाठ योजना की अवस्थाओं के सन्दर्भ में किया गया है—

Scanned with CamScanner

पाठ-योजना के वर्गीकरण के आधार पर विभिन्न शिक्षा कौशल (DIFFERENT TEACHING SKILLS BASED ON CLASSIFICATION OF LESSON PLAN)

पाठ योजना की अवस्थाएँ (Stages of Lesson Plan)	विभिन्न शिक्षण कौशल (Different Teaching Skills)
(1) पाठ योजना (Planning of Lesson)	(1) अनुदेशन के उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखना (Writing instructional objectives) (2) पाठ गति (Pacing the lesson) (3) दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री का चयन (Selection of the audio-visual aid material)
(2) प्रस्तुतीकरण (Presentation)	(4) उचित परिस्थितियाँ पैदा करना (Creating set for introducing the lesson) (5) प्रश्नों की प्रवाहशीलता (Fluency of questions) (6) व्याख्या कौशल (Explaining skills) (7) श्यापट्ट का प्रयोग (Use of Blackboard) (8) मौन एवं अशाब्दिक अन्त:प्रक्रिया (Silence and Non-verbal Cues) (9) पुनर्बलन (Reinforcement) (10) खोजपूर्ण प्रश्न (Probing Questions) (11) विकेन्द्रीय प्रश्न (Divergent Questions) (12) उच्च स्तरीय प्रश्न (Higher Order Questions) (13) अनुक्रिया प्रबन्ध (Response Management) (14) नियोजित पुनरावृत्ति (Planned Repetition)
(3) पाठ समापन (Closing Lesson)	(15) पाठ समापन (Achieving Closure) (16) गृहकार्य देना (Giving Assignment) (17) विद्यार्थियों की प्रगति का मूल्यांकन करना (Evaluating the Pupils Progress)

विभिन्न शिक्षण कौशलों का स्वरूप (STRUCTURE OF DIFFERENT TEACHING SKILLS)

(1) व्याख्या कौशल (Skill of Explaining)—इस कौशल के अन्तर्गत अध्यापक को मूर्त एवं अमूर्त प्रकारों को व्याख्या द्वारा स्पष्ट करना होता है। इस व्याख्या का स्पष्टीकरण के कौशल के अन्तर्गत विषय-वस्तु पर आधारित परस्पर पूरी तरह से सम्बन्धित, क्रमबद्ध तथा सार्थक कथन शिक्षक द्वारा दिए जाते हैं।

व्याख्या कौशल के घटक (COMPONENTS OF SKILL EXPLAINING)

(1) प्रारम्भिक कथनों का स्पष्टता से प्रयोग करना।
(2) निष्कर्षात्मक कथन स्पष्ट करना।
(3) भाषा में प्रवाह होना।
(4) उपयुक्त शब्दों का प्रयोग।
(5) कथनों में तारतम्य होना।
(6) असम्बद्ध कथनों की अनुपस्थिति।
(7) विचारों में परस्पर जोड़ने वाले शब्दों का प्रयोग।
(8) छात्रों के बोध के परीक्षण के लिए बीच-बीच में पूछे गए प्रश्न।

स्पष्टीकरण या व्याख्या कौशल का प्रमुख उद्देश्य, स्पष्टीकरण के प्रभावशाली व्यवहारों में वृद्धि करना तथा व्यवधान अथवा बाधा डालने वाले व्यवहारों को कम करना होता है।

यह कौशल शिक्षक व्यवहारों का वह समूह है जिसके द्वारा किसी सम्प्रदाय, नियम, पद, परिभाषा, विधि प्रविधि तथा संरचना आदि को भली-भाँति समझाने के लिए अन्त:सम्बन्धित एवं अन्त:आश्रित (Interdependent) कथनों का प्रयोग किया जाता है।

व्याख्या कौशल का निरीक्षण-अनुसूची तथा रेटिंग-स्केल प्रारूप (PROFORMA OF OBSERVATION SCHEDULE-CUM RATING SCALE)

छात्राध्यापक का नाम—

विषय : उपविषय :
कक्षा : अवधि :
दिनांक : पर्यवेक्षक :

यह सूची शिक्षण तथा पुनर्शिक्षण में प्रयुक्त की जाती है। जितनी बार क्रिया को दोहराया जाए।

कौशल के तत्व/क्रियाएँ	मिनट 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10
(1) भाषा कठिन थी।	
(2) आवाज स्पष्ट थी।	
(3) बोलने में लड़खड़ाहट थी।	
(4) रुचिकर युक्तियों का प्रयोग किया गया।	
(5) पाठ गति तीव्र थी।	
(6) दृश्य-श्रव्य साधनों का प्रयोग।	
(7) शिक्षण बिन्दुओं को दोहराया गया।	
(8) अस्पष्ट एवं असम्बद्ध कथन।	
(9) अन्त:क्रिया में परिवर्तन।	

Scanned with CamScanner

व्याख्यान कौशल के लिए मूल्यांकन सूची अथवा रेटिंग स्केल

मिलान चिह्न (Tallies)	व्यवहार घटक (Component Behaviour)	रेटिंग स्केल (Rating Scale) न्यूनतम 1 2 3 अधिकतम 4 5 6 7
	(1) प्रारम्भिक कथनों को स्पष्टता से प्रयोग किया गया। (2) निष्कर्षात्मक कथन स्पष्ट थे। (3) भाषा में प्रवाह था। (4) कथनों में उपयुक्त शब्दों का प्रयोग किया गया। (5) कथनों में तारतम्य या निरंतरता थी। (6) शिक्षण में असम्बद्ध कथनों की अनुपस्थिति थी। (7) विचारों या कथनों को आपस में जोड़ने वाले शब्दों या मुहावरों का प्रयोग किया गया। (8) छात्रों के बोध के परीक्षण के लिए बीच-बीच में प्रश्न पूछे गए।	
दिनांक	सुझाव 1. ..... 2. ..... 3.	हस्ताक्षर पर्यवेक्षक

पाठ प्रस्तावना कौशल
(SKILL OF INTRODUCTION THE LESSON)

जब शिक्षक किसी पाठ योजना को छात्रों के समक्ष प्रारम्भ करता है तब वह उस पाठ का एक संक्षिप्त परिचय देता है। इसे विन्यास प्रेरणा कौशल (Set-Induction) भी कहते हैं। पाठ का प्रारम्भ जितनी सफलता के साथ अध्यापक करता है उतना ही छात्रों की रुचि, ध्यान आदि को वह आकर्षित कर सकता है। पाठ योजना को तैयार करते समय ही उद्देश्यों को लिखने के बाद यह प्रस्तावना (Introduction) लिख ली जाती है। पाठ का प्रस्तावना कौशल शिक्षक की अपनी कल्पनाशक्ति, चिन्तन प्रक्रिया तथा अनुभव पर भी आधारित होता है। इसके लिए शिक्षक ऐसी क्रियाएँ करता है जिनमें कौशल विन्यास प्रेरणा हो। इस कौशल का प्रयोग करने के लिए अध्यापक को दो तत्वों का ध्यान रखना चाहिए।

प्रथम—छात्रों का पूर्व ज्ञान—नया पाठ प्रारम्भ करने से पहले अध्यापक को यह पता लगा लेना चाहिए कि छात्र उस विषय के लिए कितना पूर्व ज्ञान रखते हैं अत: उस पूर्व ज्ञान से सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयास करना चाहिए। छात्रों को ज्ञात से अज्ञात की ओर अग्रसर करने का प्रयास करना चाहिए जिससे छात्रों में नए ज्ञान के प्रति रुचि पैदा होती है।

द्वितीय—उचित युक्तियों एवं साधनों का उपयोग—पाठ प्रस्तावना कौशल में शिक्षक छात्रों के समक्ष पूर्व ज्ञान से सम्बन्धित सरल प्रश्नों को प्रयोग करता है जिसे छात्र सरलता से

उत्तर देते हैं और उनमें आगे जानने की उत्सुकता पैदा होती है। तब अध्यापक नए पाठ के लिए उद्देश्य कथन करता है कि आज हम अमुक पाठ्यवस्तु का अध्ययन करेंगे। पाठ की प्रस्तावना को वह अनेक युक्तियों का प्रयोग करके प्रारम्भ कर सकता है।

(1) कुछ शिक्षक कहानी सुना कर पाठ का प्रारम्भ करते हैं।
(2) कुछ शिक्षक कविता का अंश सुनाते हैं।
(3) कुछ शिक्षक मॉडल, चित्र दिखाकर आरम्भ करते हैं।
(4) कुछ शिक्षक प्रश्नों की सहायता से आरम्भ करते हैं।
(5) कुछ शिक्षक प्रयोग तथा प्रदर्शन से आरम्भ करते हैं।

इस कौशल में शिक्षक कुछ विशिष्ट क्रियाओं जैसे—उदाहरण, दृष्टांत, प्रश्न, कहानी, दृश्य-श्रव्य सहायक सामग्री, प्रयोग तथा प्रदर्शन आदि का प्रयोग विषय के आधार पर उसकी आवश्यकतानुसार प्रयोग कर सकता है।

शिक्षक को निम्न कुछ क्रियाओं को इस कौशल में प्रयोग नहीं करना चाहिए जो कि बाधक होती है—

(1) जो पाठ्यवस्तु पहले-पहले पढ़ाई जा रही है उसके क्रम को भंग करके नई वस्तु नहीं पढ़ानी चाहिए।
(2) शिक्षक जो पाठ्यवस्तु पढ़ाने जा रहा है अगर उससे सम्बन्धित प्रश्न नहीं पूछता है बल्कि अप्रासंगिक प्रश्न करता है, तो इस कौशल के प्रयोग में कठिनाई उत्पन्न होती है।

विन्यास प्रेरणा (प्रस्तावना कौशल) का निरीक्षण एवं मूल्यांकन विधि
[EVALUATION METHOD AND OBSERVATION OF SET INDUCTION (INTRODUCTION SKILL)]

शिक्षण विन्यास प्रेरणा कौशल की जाँच करने के लिए दो अनुसूचियों का प्रयोग करता है।

प्रथम अनुसूची में प्रत्येक मिनट में कितनी बार इस कौशल की क्रिया की गई उसकी आवृत्ति अंकित की जाती है। इसे निरीक्षण सूची (Observation Sheet) कहते हैं।

दूसरी अनुसूची में प्रस्तावना कौशल के तत्वों सम्बन्धी गुणात्मक मूल्यांकन में सात अनुस्थितियाँ, न्यूनतम से सामान्य तथा अधिकतम तक का प्रयोग किया जाता है।

विन्यास-प्रेरण कौशल की निरीक्षण सूची
(OBSERVATION SHEET FOR SET-INDUCTION SKILL)

छात्राध्यापक का नाम : दिनांक :
कक्षा : विषय :
सत्र : शिक्षण/पुन: शिक्षण : उपविषय :
निरीक्षक : अवधि :

अवलोकन के समय प्रतिमिनट में शिक्षण क्रिया कितनी बार हुई तब टैली लगाई जाती है।

कौशल के तत्व	टैली (एक क्रिया के लिए एक मिनट) 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, 10
(1) पूर्व ज्ञान से सम्बन्धित प्रश्न	
(2) प्रश्न जिनका छात्रों ने सही उत्तर दिया	
(3) क्रम भंग प्रश्न/कथन	
(4) अप्रासंगिक प्रश्न एवं कथन	
(5) युक्तियों तथा साधनों की उपयुक्तता	

Scanned with CamScanner

विन्यास-प्रेरण कौशल के लिए मूल्यांकन सूची
(EVALUATION SHEET FOR SET-INDUCTION SKILL)

छात्राध्यापक का नाम : दिनांक :
कक्षा : विषय :
सत्र : शिक्षण/पुन: शिक्षण : उपविषय :
निरीक्षक : अवधि :

व्यवहार घटक (Component Behaviours)	अनुस्थितियाँ (Rating Scale)		
	न्यूनतम 1, 2,	सामान्य 3, 4,	अधिकतम 5, 6, 7
(1) छात्रों ने पूर्व ज्ञान का उपयोग किया।			
(2) युक्तियों/साधनों का उचित प्रयोग।			
(3) क्रम भंग के अभाव अवसर			
(4) अप्रासंगिक प्रश्न/कथन			
(5) छात्रों ने प्रश्नों का सही उत्तर दिया।			
(6) विन्यास प्रेरण प्रभावशाली रहा।			

खोजपूर्ण प्रश्न कौशल
(PROBING QUESTION SKILL)

शिक्षक जब पाठ का आरम्भ करता है तब वह पाठ के विकास के लिए प्रश्न पूछता है या पूर्वज्ञान को जाँच के लिए प्रश्न करता है। छात्रों से सही उत्तर निकलवाने के लिए शिक्षक खोजपूर्ण प्रश्नों को पूछता है। प्रश्नों को पूछकर शिक्षक पाठ्यवस्तु की ओर उनका ध्यान आकर्षित करता है, उनमें रुचि जाग्रत करता है साथ ही जिज्ञासा उत्पन्न करके उसे पूर्व ज्ञान से सम्बन्धित करता है तथा नवीन ज्ञान की ओर ले जाता है। शिक्षक इस प्रकार के प्रश्न पाठ्यवस्तु को बोधगम्य बनाने के लिए करता है। इस कौशल की यह विशेषता है कि इसमें जो प्रश्न पूछे जाते हैं छात्र जो उत्तर देते हैं उनके उत्तर के आधार पर खोजपूर्ण प्रश्न पूछे जाते हैं जिससे छात्र अपने उत्तर को और बारीकी से बता सकें तथा सही उत्तर पर पहुँच सकें।

हम कह सकते हैं कि ऐसे प्रश्न जो छात्रों को किसी पाठ्यवस्तु पर चिन्तन करने तथा गहराई तक पहुँचने में सहायता करते हैं उन्हें खोजपूर्ण प्रश्न कहा जाता है। इन्हें अनुशीलन प्रश्न भी कहते हैं।

खोजपूर्ण प्रश्न के घटक
(COMPONENTS OF PROBING QUESTIONS)

(1) संकेत देना (Prompting)
(2) विस्तृत सूचना प्राप्ति (Seeking further Information)
(3) पुन: केन्द्रीयकरण (Refocussing)
(4) पुन:प्रेषण (Re-direction)
(5) आलोचनात्मक सजगता (Critical Awareness)

जब शिक्षक प्रश्न पूछता है और छात्र से नकारात्मक (Negative) उत्तर मिलता है, (जैसे, मुझे नहीं मालूम है) तो शिक्षक संकेत देकर उसे ठीक उत्तर देने के लिए प्रेरित करता

है। जब छात्र अधूरा उत्तर देते हैं, तो शिक्षक उन उत्तरों से ही ऐसे प्रश्न पूछता है जिससे शिक्षक विस्तृत उत्तर प्राप्त कर सके। इसके लिए शिक्षक ये शब्द बोल सकता है–कुछ और बताओ, दूसरे शब्दों में कहो, और स्पष्ट करो। इसे पुन: केन्द्रीयकरण (Refocussing) कहा जाता है। अध्यापक एक ही प्रश्न को कई छात्रों से पूछता है इसे पुन: प्रेक्षण (Redirection) कहते हैं। सही उत्तर पाने पर भी शिक्षक छात्र से उत्तर की सार्थकता की व्याख्या करने को कहता है, इसे आलोचनात्मक सजगता (Critical Awareness) कहते हैं।

निरीक्षण अनुसूची और रेटिंग स्केल का प्रारूप
(PROFORMA OF OBSERVATION SCHEDULE-CUM RATING SCALE)

मिलान चिह्न (Tallies)	व्यवहार घटक (Component Behaviour)	रेटिंग स्केल (Rating Scale) न्यूनतम 1 2 3	अधिकतम 4 5 6 7
	(1) शिक्षक द्वारा संकेतात्मक प्रश्न पूछे गए।		
	(2) विस्तृत जानकारी के लिए प्रश्न पूछे गए।		
	(3) पुन:केन्द्रीयकरण के लिए प्रश्न पूछे गए।		
	(4) प्रश्नों को प्रेषित किया।		
	(5) आलोचनात्मक सजगता जाग्रत करने का प्रयास किया गया।		
	आलोचना/सुझाव		हस्ताक्षर पर्यवेक्षक

दृष्टांत व्याख्या कौशल
(SKILL OF ILLUSTRATION)

अध्यापक को अपने शिक्षण के दौरान कई बार ऐसी परिस्थितियाँ आती हैं कि कुछ प्रत्यय, तथ्यों, सिद्धान्तों तथा अमूर्त विचारों को वह अच्छे ढंग से वर्णन एवं व्याख्या करने में कठिनाई अनुभव करता है। इन परिस्थितियों में शिक्षक उदाहरणों सहित कुछ दृष्टांतों की सहायता से उन प्रत्ययों को रुचिकर तथा बोधगम्य बना सकता है।

शिक्षक इस प्रकार की स्थिति के लिए निम्न प्रकार से अपनी क्षमताओं का विकास कर सकता है।

(1) वह एक उदाहरण से अपना कार्य प्रारम्भ कर सकता है। इस उदाहरण को किसी अमूर्त विचार अथवा संप्रत्यय को स्पष्ट करने के लिए दृष्टांत के रूप में प्रयोग कर सकता है।

(2) इन उदाहरणों की सहायता से वह कुछ विशेष नियमों और सिद्धान्तों की रचना हेतु छात्रों को आवश्यक सहायता दे सकता है।

(3) दृष्टांत सरल तथा सहज होने चाहिए तथा प्रत्यय व सिद्धान्त से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित होने चाहिए।

दृष्टान्तों या उदाहरणों को प्रयुक्त करने के लिए अधोलिखित साधनों का प्रयोग किया जाता है।

(i) शाब्दिक या मौखिक रूप जैसे तुलना करना, घटना या कहानी सुनाना।

(ii) अशाब्दिक रूप जैसे वस्तुएँ, मॉडल, चित्र, चार्ट, रेखाचित्र, मानचित्र, नमूने, प्रयोग आदि का प्रदर्शन करना।

उदाहरण सम्बन्धी इस दृष्टांत कौशल की परिभाषा निम्न प्रकार से दी जा सकती है–

Scanned with CamScanner

परिभाषा (Definition)

"दृष्टांत कौशल" किसी अमूर्त विचार, संप्रत्यय को समझाने और उसका प्रयोग करने के लिए एक अध्यापक द्वारा अपनाई गई वह कला अथवा तकनीक है जिसके द्वारा से समुचित उदाहरणों के चयन करने, उनके दृष्टांत रूप में प्रयोग करने और उनके द्वारा विद्यार्थियों को वांछित निष्कर्ष और सामान्यीकरण तक पहुँचाने में पूरी-पूरी सहायता मिलती है।

दृष्टांत कौशल के घटक

(COMPONENTS OF THE ILLUSTRATION SKILL)

(1) सार्थ उदाहरणों का निर्माण (Formulating Relevant Examples)

(2) सरल दृष्टांतों का निर्माण (Formulating Simple Illustration)

(3) रोचक दृष्टांतों का निर्माण (Formulating Interesting Illustration)

(4) उदाहरण देने के लिए उचित माध्यम का प्रयोग (Using Appropriate Media for Examples)

(5) आगमन-निगमन उपागम का निर्माण (Making use of Inductive-deductive Approach)

(1) सार्थक उदाहरणों का निर्माण (Formulating Relevant Examples)—जब अध्यापक किसी प्रत्यय को अधिक स्पष्ट करने के लिए उसी से सम्बन्धित उदाहरणों का निर्माण करता है, तो वह सार्थक उदाहरण समझे जाते हैं।

(2) सरल दृष्टांतों का निर्माण (Formulating Simple Illustration)—सरल दृष्टांत से तात्पर्य यह है कि एक अध्यापक को कक्षा में पढ़ाने से पहले छात्रों के पूर्व ज्ञान तथा छात्रों की परिपक्वता स्तर का अवश्य ध्यान रखना चाहिए। इसके लिए अध्यापक द्वारा जिन दृष्टांतों को निर्मित किया गया है, अगर उसके प्रति उत्तर में छात्र पूर्ण रूप से भाग ले रहे हैं, तो मानना चाहिए कि वे दृष्टांत सही, सरल व सार्थक हैं।

(3) रोचक दृष्टांतों का निर्माण (Formulating Interesting Illustration)—ऐसे दृष्टांत जो छात्रों की जिज्ञासा और अभिरुचि को जाग्रत करें जिससे वे मनोयोग से विषय को समझ जाए। स्वाभाविक है कि दृष्टांतों/उदाहरणों का चयन इस तरह से किया जाए कि उनमें मनोरंजन का पुट हो, तो ऐसे उदाहरण अधिक सफल होंगे। छात्रों की आयु, उनकी परिपक्वता और उनके मनोवैज्ञानिक स्तर का ध्यान रखना बहुत आवश्यक है।

(4) उदाहरणों के लिए उचित माध्यमों का प्रयोग (Using of Appropriate Media for Examples)—उदाहरणों के लिए उचित माध्यमों के प्रयोग हेतु पहले पढ़ाए जाने वाले विषय की प्रकृति, छात्रों की आयु एवं परिपक्वता तथा विद्यार्थियों द्वारा अर्जित पूर्व अनुभव को ध्यान में अवश्य रखना चाहिए। उदाहरणों को शाब्दिक तथा अशाब्दिक दोनों प्रकार के विभिन्न माध्यमों जैसे कहानी, चुटकुले, मुहावरे, नमूने, मॉडल, मानचित्र तथा प्रयोग प्रदर्शन आदि के रूप में उपर्युक्त उचित माध्यमों द्वारा छात्रों के समक्ष प्रस्तुत किया जा सकता है।

(5) आगमन-निगमन उपागम का प्रयोग (Making use of Inductive-deductive Approach)—दृष्टांतों को उपयोग करने की दो विधियाँ हैं—

(1) आगमन विधि

(2) निगमन विधि

आगमन विधि में अध्यापक विभिन्न उदाहरणों को देते हुए सिद्धान्त का स्पष्टीकरण करता है और इस आधार पर नियमों (Generalization) की व्याख्या करता है।

निगमन विधि में पहले सिद्धान्त बतलाया जाता है फिर उसकी सार्थकता उदाहरणों एवं तर्कों के सहारे उसकी व्याख्या करता है। उदाहरण के लिए, दोनों विधियों आगमन व निगमन का कक्षा एवं संप्रत्यय अथवा सिद्धान्त की दृष्टि से चयन का उपयोग करना चाहिए। दोनों का साथ भी उपयोग किया जा सकता है।

इस कौशल का आवृत्ति अंकन निरीक्षण अनुसूची (1) पर किया जाता है और इसके आधार पर इसके विभिन्न घटकों का गुणात्मक मूल्यांकन अनुसूची (2) पर किया जाता है। दोनों अनुसूचियों का प्रारूप निम्न है—

दृष्टांत या उदाहरण कौशल की निरीक्षण अनुसूची

OBSERVATION SCHEDULE OF EXAMPLE OR ILLUSTRATION SKILL

छात्राध्यापक का नाम : दिनांक :

विषय : उपविषय :

कक्षा : शिक्षण/पुनः शिक्षण :

क्रमानुसार उदाहरण/दृष्टांत के सामने के कॉलम में उसके घटक गुणानुसार सही (✓) का चिह्न लगाकर अंकित करें।

दृष्टांत क्रमांक	साधारण	प्रत्यय	रोचकता प्रासंगिकता	उचित माध्यम	विधि	छात्र सहभागिता
(1)	(2)	(3)	(4)	(5)	(6)	(7)

उदाहरण या दृष्टांत कौशल की मूल्यांकन सूची

(EVALUATION LIST OF EXAMPLE OR ILLUSTRATION)

सात अनुस्थितियों में तत्वों का स्तरीकरणय किया जाता है।

कौशल तत्व	अनुस्थितियाँ		
	बिल्कुल नहीं 0, 1	सामान्य 2, 3, 4	अधिकतम 5, 6
(1) दृष्टांत सुगम व सरल थे।			
(2) दृष्टांत प्रासंगिक थे।			
(3) दृष्टांत रोचक थे।			
(4) छात्रों के उत्तरों से उनके बोध की जानकारी होती है।			
(5) दृष्टांतों में आगमन/निगमन विधि प्रयुक्त की थी।			
(6) दृष्टांतों की संख्या समुचित थी।			
(7) छात्रों द्वारा दृष्टांत दिए गए थे।			
(8) छात्रों ने प्रत्यय/सिद्धान्तों को समझ लिया था।			

उद्दीपन परिवर्तन का कौशल

(SKILL OF STIMULUS VARIATION)

उद्दीपन परिवर्तन कौशल से अभिप्राय उस शिक्षण कौशल से है। जिसके द्वारा एक अध्यापक अपने विद्यार्थियों का ध्यान कक्षा गतिविधियों की ओर आकर्षित एवं केन्द्रित करने हेतु उपयोग में लाए जाने वाले विभिन्न उद्दीपनों के प्रयोग में अपेक्षित परिवर्तन लाने में अधिक

Scanned with CamScanner

से अधिक सफल हो सकता है। इस प्रयोजन को पूरा करने के लिए वह कभी अपनी जगह से जाकर श्यामपट्ट के समीप आता है, कभी चेहरे पर हाव-भाव लाकर अपनी बात कहता है। कभी-कभी वह छात्रों को ध्यान देने या इधर देखने की कहकर कुछ समझाता है, कभी वह प्रश्न पूछता है, कभी छात्रों के प्रश्नों का उत्तर देता है। इस प्रकार इन विभिन्न उद्दीपन क्रियाओं द्वारा छात्रों के अवधान को आकर्षित कर उसे केन्द्रित किया जाता है और पाठ को प्रभावशाली बनाया जाता है। इस कौशल को उद्दीपन परिवर्तन की संज्ञा दी गई है क्योंकि उद्दीपन का परिवर्तन इसमें प्रमुख है।

उद्दीपन कौशल के तत्व हैं—(1) संचालन, (2) हाव-भाव, (3) वाक परिवर्तन, (4) केन्द्रण, (5) अन्तर क्रिया शैली परिवर्तन, (6) विराम, (7) मौखिक-दृश्य बदलाव।

संचालन—छात्र यदि किसी उद्दीपन (वस्तु) को एक ही स्थिति में अधिक देर तक देखते रहें तो उनका ध्यान उससे हट जाता है। इसी प्रकार अध्यापक भी अगर एक ही स्थिति में लगातार खड़ा होकर पढ़ाता है, तो थोड़ी देर बाद छात्र उसकी ओर ध्यान न देकर आपस में बातें करने लगते हैं या इधर-उधर अपने किसी ध्यान में खो जाते हैं। यदि अध्यापक आवश्यकतानुसार इधर-उधर हिलता-डुलता है, हाथ-पैर हिलाता है, तो छात्र का ध्यान उसकी ओर लगा रहता है। बहुत अधिक संचालन भी नहीं होना चाहिए। अत: अभ्यास एवं अनुभव से अध्यापक संचलन क्रिया में कुशल हो सकता है।

हाव-भाव एवं वाक स्वरूप परिवर्तन—अध्यापक जब पढ़ाता है अगर वह पढ़ाते हुए उस प्रसंग से सम्बन्धित हाव-भाव भी प्रदर्शित करता है, तो मौखिक विवरण प्रभावशाली हो जाता है। वाक् स्वरूप परिवर्तन में विभिन्न शब्दों पर जोर देने से उनका अर्थ गहराई लिए हो जाता है। अध्यापक की आवाज में परिवर्तन कई तरह के हो सकते हैं—ऊँची आवाज, जोर की तेज आवाज, किसी शब्द पर दबाव डालकर बोलना आदि विभिन्न स्थितियों एवं भावों को स्पष्ट करते हैं। अनुभव के द्वारा ही अध्यापक इस घटक कौशल में पारंगत हो सकता है। हाव-भाव में चेहरे की भाव-भंगिमाओं के अतिरिक्त शरीर के अन्य भागों का भी उपयोग किया जा सकता है।

केन्द्रण—इस घटक कौशल का प्रयोग उस स्थिति में किया जाता है जब अध्यापक को किसी विशेष-बिन्दु पर ध्यान केन्द्रित करवाना हो। उस बिन्दु पर ध्यान केन्द्रित किए बिना वह आगे नहीं बढ़ सकता है क्योंकि तब छात्रों के लिए समझना कठिन हो जाएगा। इस कौशल में मौखिक कथन (शाब्दिक केन्द्रण, हाव-भाव एवं संचलन, अशाब्दिक केन्द्रण) का प्रयोग किया जाता है। जब अध्यापक कहता है 'इधर ध्यान दो' या इस चित्र को देखो, तो उसका तात्पर्य छात्रों के ध्यान को इन विशिष्ट बिन्दुओं पर केन्द्रित करना है या वह किसी चित्र पर निश्चित बिन्दु पर हाथ रखकर जब कुछ बताता है या जब मानचित्र पर लकड़ी द्वारा संकेत से कुछ दिखाता है, इनके पीछे अध्यापक महत्त्वपूर्ण बिन्दुओं पर ध्यान केन्द्रित करना चाहता है।

अन्तरण-क्रिया शैली परिवर्तन—जब दो या अधिक व्यक्ति एक-दूसरे से मौलिक वार्तालाप करते हैं, तो इसे मौलिक अन्तर क्रिया की संज्ञा दी जाती है। छात्र सम्भागिता को अन्तर क्रिया परिवर्तन में प्रोत्साहन मिलता है और अध्यापक कक्षा में ऐसा वातावरण उत्पन्न करता है कि पाठ में सभी का सहयोग प्राप्त हो और अध्यापक का पाठन केवल व्याख्यान होकर ही न रह जाए।

विराम—विराम का तात्पर्य ऐसे मौन से है जो अध्यापक बोलते-बोलते रुक जाए ताकि छात्रों का ध्यान उसकी ओर आकर्षित हो। अगर कभी लम्बी पाठ्यवस्तु हो, तो अध्यापक छात्रों का ध्यान अपनी ओर करने के लिए बीच-बीच में रुककर कुछ उद्दीपनों का प्रयोग

करता है। अध्यापक यदि स्वयं ही बोलता रहे और छात्रों को कुछ भी कहने, पूछने का अवसर न दे तो शिक्षण नीरस हो जाता है। अत: अध्यापक को बीच-बीच में प्रश्न आदि करने चाहिए। इसी प्रकार मौन विराम का प्रयोग ध्यान आकर्षण हेतु किया जा सकता है।

मौखिक दृश्य बदलाव—पाठ को पढ़ाते हुए मौखिक विषय के साथ-साथ कभी अध्यापक प्रयोग दिखाता है, कभी चित्र दिखाकर या श्यामपट पर रेखाचित्र बनाकर या लिखकर समझाता है। कभी-कभी वह बोलते-बोलते मॉडल दिखाने लगता है, कभी वह चित्रों का प्रयोग भी करता है तथा उनका विवरण भी देता है। इन सब क्रियाओं को मौखिक दृश्य बदलाव कौशल घटक कहा जाता है।

उद्दीपन-परिवर्तन कौशल की निरीक्षण अनुसूची

(OBSERVATION SCHEDULE OF STIMULUS VARIATION SKILL)

छात्राध्यापक का विवरण :
शिक्षण का विवरण :
निरीक्षक का नाम :
शिक्षण/पुन: शिक्षण :

दिनांक :
विषय :
उपविषय :
अवधि :

कौशल तत्व — **आवृत्ति प्रति मिनट** 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8

(1) संचालन (Movement)
(2) हाव-भाव (Gestures)
(3) वाद् स्वरूप परिवर्तन (Change in voice)
(4) केन्द्रण (Focussing)
(5) अन्त:क्रिया शैली परिवर्तन (Change in Interaction Pattern)
(6) विराम (Pausing)
(7) मौखिक दृश्य बदलाव (Oral Visual Switching)

उद्दीपन-परिवर्तन कौशल की मूल्यांकन अनुसूची

(EVALUATION SCHEDULE OF STIMULUS VATRIATION SKILL)

छात्राध्यापक का विवरण :
विषय :
उपविषय :
शिक्षण/पुन: शिक्षण :

दिनांक :
अवधि :
निरीक्षक का नाम :

कौशल तत्व — **अनुस्थितियाँ**

बिल्कुल नहीं	सामान्य	अधिकतम
0, 1	2, 3, 4	5, 6

(1) संचालन (Movement)
(2) हाव-भाव (Gestures)
(3) वाद् स्वरूप परिवर्तन (Change in Voice)
(4) केन्द्रण (Focussing)
(5) अन्त: क्रिया शैली परिवर्तन (Change in Interaction Pattern)
(6) विराम (Pausing)
(7) मौखिक दृश्य बदलाव (Oral Visual Switching)

Scanned with CamScanner

है और यह भी दिन-प्रतिदिन ... परिवर्तन होने के कारण वाणिज्य शास्त्र के पाठ्यक्रम में भी प्रति वर्ष परिवर्तन होना चाहिए। अर्थ है कि एक बार निर्मित पाठ्यक्रम को हमेशा के लिए अंतिम नहीं मान लेना चाहिए बल्कि निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया मानना चाहिए।

10. संस्कृति का संरक्षण (Conservation of Culture) - शिक्षा के प्रचलित उद्देश्यों में से एक है समाज की संस्कृति का संरक्षण तथा एक वंश से दूसरे वंश तक हस्तांतरण करना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए वाणिज्य शास्त्र के पाठ्यक्रम में उन उपविषयों को सम्मिलित किया जाना चाहिए जो संस्कृति के संरक्षण व हस्तांतरण के साथ-साथ विकास में भी सहायक हो।

11. दूरदर्शिता (Forward Looking) - पाठ्यक्रम द्वारा व्यवसाय की भविष्य की आवश्यकताओं को महत्वपूर्ण स्थान दिया जाना चाहिए। आज का बालक कल के भविष्य का उत्तरदायी नागरिक है। उन्हें इस प्रकार की शिक्षा दी जानी चाहिए, जो उन्हें प्रगतिशील व्यक्ति के रूप में विकसित करे। पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए कि वह बालक को इस योग्य बना दे कि स्कूल छोड़ने के पश्चात स्वयं को सामाजिक परिस्थितियों के अनुसार ढाल सकें। उन्हें स्वयं को अतीत से बांध कर नहीं रखना है बल्कि जो अच्छा है, उसका संरक्षण करना है।

12. सामयिक घटनाओं का अध्ययन (Studying Current Affairs) - आज के जीवन में व्यक्ति के विकास हेतु सामयिक मामलों के अध्ययन को नकारा नहीं जा सकता। विद्यार्थियों को सामयिक घटनाओं के बुद्धिमतापूर्ण अध्ययन तथा अलोचनात्मक प्रशंसा का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए जिसके परिणामस्वरूप वे सत्य तथा अफवाह में अन्तर करना सीख जाएंगे। बालक के काली से सम्बन्धित होता है- अतीत, वर्तमान तथा भविष्य। अतीत बीत चुका है, विद्यार्थी को केवल अतीत से अनुभव प्राप्त करने चाहिए। भविष्य आने वाला है, यह वर्तमान की क्रियाओं से सम्बन्धित है इसलिए बालक प्रमुख रूप से वर्तमान से ही सम्बन्धित है। पाठ्यक्रम में जब सामयिक घटनाओं को शामिल किया जाता है तो यह ध्यान रखना चाहिए कि वे वास्तविक जीवन की परिस्थितियों से सम्बन्धित हो।

प्रश्न-2. वाणिज्य में पाठ्य पुस्तकों के विकास से आप क्या समझते हैं? विस्तारपूर्वक बताइए।
(Discuss the development of text books in commerce.)

अथवा

पाठ्य-पुस्तक किसी अध्ययन की प्रमुख शाखा के लिए एक मानक पुस्तक है इस कथन की व्याख्या कीजिए।
(Text book is a standard book for any particular branch of study. Explain this statement.)

अथवा

उच्च कक्षाओं के संदर्भ में पुस्तकों का क्या उपयोग है?
(What is the utility of reference books in higher classes.)

उत्तर - प्राचीन काल में जब मुद्रण कला का विकास नहीं हुआ था। समस्त विषयों की शिक्षा मौखिक रूप से ही दी जाती थी। मुद्रण कला के साथ-साथ ज्ञान को पुस्तकों के रूप में संगठित करने के प्रयास हुए। शिक्षा के इतिहास में एक ऐसा भी समय आया कि इन पुस्तकों का अध्ययन ही शिक्षा समझा जाता था। विकास के पथ पर हम बढ़ते ही रहे, ज्ञान विज्ञान के क्षेत्र में हमने बहुत अधिक उन्नति की और आज ऐसी स्थिति में जब हम आपसी शिक्षा को बड़े व्यवस्थित ढंग से चलाते है। आज उसके उद्देश्य पाठ्यचर्या एवं शिक्षण विधियाँ सभी कुछ निश्चित है। आज शिक्षा को कई स्तरों, शिशु, प्राथमिक, निम्न माध्यमिक, माध्यमिक एवं विश्वविद्यालयों में बाँटा गया है और सभी स्तरों के लिए भिन्न-भिन्न पाठ्यचर्या (Curriculum) निश्चित की गई है। प्रत्येक स्तर की पाठ्यचर्या के आधार पर हमने उस स्तर का पाठ्य विवरण (Syllabus) तैयार किया। भिन्न-भिन्न स्तर के लिए पुस्तकों का निर्माण हुआ है। इन पुस्तकों को हम पाठ्य पुस्तकें कहते हैं। इस प्रकार पाठ्यपुस्तकें वे पाठ्य है जो किसी स्तर के बच्चों के पाठ्यचर्या अनुसार तैयार की जाती हैं। इसमें वे तथ्य एवं सूचनाएं संगठित होती है जिनका ज्ञान उस स्तर के छात्रों को देना चाहते हैं।

सच पूछिए तो आज की पूरी शिक्षा पाठ्यपुस्तकों पर आधारित है। आज यह शिक्षा के मुख्य साधन के रूप में प्रयोग की जाती है। पाठ्यपुस्तकों के अतिरिक्त अन्य पुस्तकें भी शिक्षा के क्षेत्र में सहायक होती है। परन्तु यहां हम केवल पाठ्य पुस्तकों पर ही विचार कर रहें हैं।

पाठ्य पुस्तक की परिभाषाएँ (Definitions of Text Book)

पाठ्य पुस्तक के अर्थ को स्पष्ट करने के लिए विभिन्न शब्द कोषों में कुछ विद्वानों एवं शिक्षा शास्त्रियों ने इस विभिन्न परिभाषाओं के माध्यम से व्यक्त किया है। जो इस प्रकार हैं।

शिक्षा शब्दकोष (Dictionary of Education) के अनुसार - पाठ्यपुस्तक अनुदेशन का अभिलेख है, निश्चित विषय के अध्ययन से संबंधित क्रमबद्ध रूप से संगठित अनुदेशन के विशिष्ट स्तर पर प्रयोग के लिए प्रस्तावित और एक प्रदत्त कोर्स के लिए अध्ययन सामग्री के अधारभूत स्त्रोत के रूप में प्रयोग की जाने वाली पुस्तक है। (Text book is a manual of instruction a book dealing with a deginate subject of study systematically, intended for use at a specified level of instruction and used as a principle source of study material for a given course.)

वैबस्टर शब्द (Webster Dictionary) के अनुसार - पाठ्य पुस्तक अनुदेशन का अभिलेख है। अनुदेशन के आधार के रूप में प्रयोग किए जाने वाले विषय के सिद्धान्तों को प्रस्तुत करने वाली पुस्तक है। (A text book is a manual of instruction a book containing a presentation of the principle's of the subject used as a basic of instruction.)

आक्सफोर्ड शब्दकोष (Oxford Dictionary) के अनुसार - पुस्तक किसी विशेष विषय के अध्ययन के लिए मानक कार्य के रूप में प्रयोग की जाने वाली अध्ययन विषय में अनुदेशन का अभिलेख है। (A book used as a standard work for the study of a particular subject a manual of instruction in a subject of study.)

अमेरिकन विश्व ज्ञान कोष (Encyclopaedia America) के अनुसार - सुदृढ़ शब्दों में एक पाठ्यपुस्तक ऐसी पुस्तक है जो ज्ञान के भंडार को संगठित ढंग से और अधिगम के उद्देश्य के लिए प्रायः साधारण ढंग से प्रस्तुत करती है। पाठ्यपुस्तक अत्यंत महत्वपूर्ण शिक्षण औज़ार है क्योंकि यह केवल यही निश्चित नहीं करती की क्या पढाया जाएगा? अपितु यह भी निश्चित करती है कि इसे कैसे पढ़ाया जाएगा। (In this strict scence of the term, a text book is a book that presents a body of knowledge in a organized and usually simplyfied manner for purpose of

Scanned with CamScanner

learning. text book ... determine not only what will be taught.)

हालक्वैस्ट (Hallquest) के शब्दों में पाठ्यपुस्तक अनुदेशीय उद्देश्यों के लिए व्यवस्थित किया गया एक प्रजातंत्र चिंतन का अभिलेख है।

बैकन (Bacon) के शब्दों में पाठ्य पुस्तक किसी अध्ययन की प्रमुख शाखा के लिए एक मानक पुस्तक है। (Text book is a bookdesigned for classroom used.)

लांगे (Lange) के शब्दों में "पाठ्य पुस्तक किसी अध्ययन की प्रमुख शाखा के लिए एक मानक पुस्तक है। (Text book is a standered book for any particular branch of study.)

शैक्षिक अनुसंधान के ज्ञान कोष (Encylopaedia of Eduactional Reasearch) के अनुसार- आधुनिक एवं प्रचलित अर्थो में पाठ्य पुस्तक एक अधिगम साधन है जिसका प्रयोग विद्यालयों और महाविद्यालयों में अनुदेशन कार्यक्रम की परिपूर्ति के लिए किया जाता है सामान्य अर्थो में पाठ्य पुस्तक मुद्रित होती है यह उपभोग की वस्तु नहीं है, इसकी जिल्द मजबूत होती है, यह अनुदेशन के लिए प्रयुक्त की जाती है और इसको सीखने वालों के हाथों में सौंपा जाता है। (In the mordern scence and as commonally understood, the text book is a learning instrument usually employed in schools and collages to support a programme of instructions in ordinary uses, the text book in printed, it is non consumable, it is hard bound, it serves as avowed instructional purpose and it is placed hand in the learner.)

एक अच्छी पाठ्य पुस्तक के गुण (Qualities of a Good Text Book)

वाणिज्य शास्त्र में हमेशा से ही एक अच्छी पाठ्यपुस्तक ऐसी होनी चाहिए, जिसकी अत्यधिक उपयोगिता है, अध्यापक की मित्र है, विद्यार्थी की पथप्रदर्शक है, विद्यार्थियों की मानसिक आयु के अनुकूल है, उनकी आवश्यकताओं के अनुरूप है, इस प्रकार पाठ्यपुस्तक कुछ विशेष गुणों से युक्त होनी चाहिए। इन गुणों को दो भागों में बाँटा जा सकता है।

क) सामान्य गुण (Genral qualities)

ख) विशिष्ट गुण (Specific qualities)

सामान्य गुण, आकार, जिल्द, मुद्रण आदि से सम्बन्धित होते हैं जबकि विशिष्ट गुण भाषा, दृष्टांत, शैली आदि से सम्बन्धित होते हैं जो विषय से भिन्न होते हैं। विद्यार्थियों की रूचियाँ एवं क्षमताएँ भिन्न होती है। इसलिए पाठ्यपुस्तक के द्वारा सभी विद्यार्थियों की आवश्यकताओं की पूर्ति की जानी चाहिए। एक अच्छी वाणिज्य अध्ययन की पाठ्य पुस्तक के द्वारा निम्नलिखित आवश्यकताओं की पूर्ति की जानी चाहिए :

1. **पुस्तक का आकार (Size of the Book)** - पाठ्य पुस्तक का आकार उनकी उचित क्रियात्मकता के अनुरूप प्रत्येक की अभिवृति पर निर्भर करता है वे जो पाठ्यक्रम की तार्किक रूप रेखा या ग्राफ चाहते है वे केवल छोटे आकार की पुस्तकें पसन्द करते हैं। सामान्यतया पुस्तक का आकर न तो अत्यधिक बड़ा होना चाहिए और न छोटा, यह ऐसा हो जिससे विद्यार्थियों को इसे पढ़ने तथा बैग में स्कूल ले जाने में कठिनाई महसूस न हो। आजकल (7"×9½") की पुस्तके अधिक प्रचलन में है।

2. **विषय सामग्री की सारणी/ विषय सूची (Table of Content)** - विषय सूची सम्पूर्ण पाठ्य पुस्तक के संगठन एवं क्षेत्र का संकेत देती है। इसलिए यह तर्कपूर्ण रूपरेखा होनी चाहिए जो प्रमुख भागों तथा उसके अंतर्गत प्रमुख छोटे-छोटे उपविषयों को दर्शाती है। प्रत्येक अध्याय के सामने इसके पृष्ठ का संकेत भी दिया जाना चाहिए जिससे यह पता लगाने में आसानी हो कि वह किस पृष्ठ पर छपा है।

3. **मुख पृष्ठ (Title Page)** - पाठ्य पुस्तक का मुख पृष्ठ आकर्षक होना चाहिए। मुख पृष्ठ विशिष्ट गुणवत्ता, विचारधारा के बारे में संकेत देता हुआ होना चाहिए। इस पर पुस्तक का पूर्ण नाम होता है। इस पर लेखक का नाम, प्रकाशक का नाम, जहाँ प्रकाशित की गई है उस स्थान का नाम, प्रकाशन का वर्ष एवं कक्षा विशेष का नाम दिया जाता है।

4. **पाठ्य पुस्तक का मुद्रण (Printing of the Text Book)** - पाठ्य पुस्तक देखने में अच्छी, सुन्दर एवं आकर्षक होनी चाहिए उसका मुद्रण लुभावना होना चाहिए। यह सभी गलतियों से मुक्त होनी चाहिए। शब्दों, रेखाओं, पैराग्राफ, आदि में उपर्युक्त दूरी का प्रयोग किया जाना चाहिए। अक्षर स्पष्ट तथा अच्छे प्रकार से पढ़ने योग्य होने चाहिए। चित्र शीर्षक आदि आवश्यकतानुसार उचित आकार में होने वाले चाहिए।

5. **पाठ्य पुस्तक में प्रयुक्त कागज (Paper Used in the Text Book)** - पाठ्य पुस्तक में प्रयोग किया गया कागज अच्छे स्तर का अर्थात् पर्याप्त रूप से मोटा, स्थायी तथा नरम होना चाहिए। सामान्यता सफेद चिकना कागज अच्छा रहता है।

6. **पाठ्य पुस्तक की लेखन शैली (Style in the Text Book)** - प्रत्येक व्यक्ति इस बात से पूर्णतः सहमत है कि पाठ्य पुस्तक की लेखन पद्धति उत्तम होनी चाहिए। इसमें निम्नलिखित बातों पर ध्यान दिया जाना चाहिए।

क) वाक्य की लम्बाई स्पष्टता का संकेत देती है और छोटे वाक्य स्वयं में ही प्रश्नयुक्त होते हैं। यह बच्चों के स्तर के अनुकूल होनी चाहिए। प्राथमिक कक्षाओं के लिए छोटे वाक्यों का प्रयोग किया जाना चाहिए, परन्तु माध्यमिक स्तर पर बहुत अधिक छोटे वाक्य सही नही माने जाते, इसलिए वाक्यों की लम्बाई अधिक होनी चाहिए, परन्तु इतनी अधिक भी नहीं कि उन्हें उसका अभिप्राय ही समझ में न आए।

ख) वाक्य व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध होने चाहिए।

ग) लेखन शैली वर्णानात्मक एवं संवादात्मक होनी चाहिए।

घ) मुख्य बिन्दु निश्चित रूप से पाठ्य पुस्तक की सम्पति मानी जाती है। आकर्षक तथा वर्णानात्मक मुख्य बिन्दुओं का प्रयोग किया जाना चाहिए।

ङ) पाठ्य पुस्तक स्वयं में सम्पूर्ण होनी चाहिए। वह केवल तथ्य ही प्रदान नहीं करती अपितु अपना प्रभाव भी छोड़ती है। विद्यार्थियों में अभिवृतियों तथा भावनाओं का विकास करे, जिससे तथ्यों को महत्ता मिलती है। इस प्रकार वे अधिगमयुक्त होते हैं।

7. **पाठ्य पुस्तक में शब्दावली (Vocabulary in the Text Book)** - यह स्पष्ट है कि विद्यार्थी नए शब्द की सहायता से नए तथ्य को बहुत शीघ्र सीख सकता है। इसलिए नए शब्दों का प्रयोग पाठ्य वस्तु को समझने में सरल बना देगा। प्रत्येक पाठ के अंत में उस पाठ में प्रयुक्त विशिष्ट शब्दों,

Scanned with CamScanner

पारिभाषिक शब्दों ... को भी स्पष्ट कर दें। पाठ्य पुस्तक के द्वारा विद्यार्थियों के शब्द -ज्ञान में वृद्धि की जानी चाहिए।

8. परिशिष्ट (Appendices) - वाणिज्य अध्ययन में इतने आँकड़ों, तिथियों, घटनाओं, आदि का प्रयोग होता है कि उन्हें पाठ के साथ-साथ यदि करने में कठिनाई अनुभव होती है इसलिए इन्हें परिशिष्ट के रूप में बाद में दिया जा सकता है। जहाँ सक्षिप्त रूप से विद्यार्थी इसका अध्ययन कर पाठ के तथ्यों को आसानी से समझ सकते है।

9. सूची पत्र (Index) - पाठ्य पुस्तक के विभिन्न पाठों को लिखते समय जिन अन्य लेखकों के ग्रंथों का प्रयोग किया गया है जिनके विचारों एवं कथनों को अद्‌घृत किया गया है, उनके नाम एवं उनकी पुस्तकों की सूची सूचीपत्र में दी जाती है यदि कोई अध्यापक किसी पाठ से सम्बंन्धित विषय सामग्री का अध्ययन विस्तृत रूप में करना चाहता है तो वह उन पुस्तकों का अध्ययन कर सकता है। इसके अंतर्गत प्रमुख शब्दों की भी वर्णमाला के क्रम से सूची तैयार की जाती है।

10. विद्यार्थियों की आवश्यकताओं के अनुरूप (According to the Needs of the Students) - वाणिज्य अध्ययन की पाठ्य पुस्तक का प्रयोग अधिकतर विद्यार्थियों द्वारा ही किया जाता है क्योंकि उन्हें गृह-कार्य करने के लिए, विषय सामग्री को समझने के लिए पाठ्य पुस्तक की सहायता लेनी ही पड़ती है और उसी के आधार पर परीक्षा की तैयारी करनी होती है। इसलिए पाठ्य पुस्तक का निर्माण करते समय विद्यार्थियों की मानसिक आवश्यकताओं तथा बौद्धिक योग्यताओं को ध्यान में रखना चाहिए जिससे उन्हें विषय सामग्री को समझने में कोई कठिनाई न हो। जिस प्रकार आयु की वृद्धि के साथ-साथ विद्यार्थियों का ज्ञान- विस्तृत होता जाता है, उसी प्रकार पाठ्य पुस्तक का स्तर भी उत्तरोतर उसी के अनुसार होना चाहिए।

11. पाठ्य पुस्तक में विषय वस्तु (Subject Matter in Text Book) - वाणिज्य शास्त्र एक विस्तृत विषय है और यह व्यापार एवं इसके वातावरण से सम्बन्धित होता है इसलिए वाणिज्य शास्त्र की पाठ्य पुस्तक की पाठ्य वस्तु में निम्नलिखित विशेषताएं होनी चाहिए।

क) पाठ्य वस्तु तर्क संगत (Logical) होनी चाहिए। जिससे विद्यार्थियों में किसी प्रकार का भ्रम व अंधविश्वास उत्पन्न न हो। प्रत्येक तथ्य या घटना के पीछे कारण कार्य सार स्पष्ट होना चाहिए।

ख) विषय वस्तु में क्रमबद्धता (Systematic) का भी ध्यान रखा जाना चाहिए। विभिन्न घटनाएं काल क्रम के अनुसार रखी जानी चाहिए जिससे विद्यार्थी मानव विकास की विभिन्न अवस्थाओं को समझ सके और अतीत का वर्तमान के साथ सह सम्बन्ध स्थापित कर सकें।

ग) पाठ्य वस्तु व्यापक उद्देश्यों के अनुकूल होनी चाहिए।

घ) पाठ्य वस्तु सरल, सुबोध एवं स्पष्ट होनी चाहिए।

ड़) यह विद्यार्थियों की आवश्यकताओं एवं उनके सामाजिक और भौतिक पर्यावरण से सम्बन्धित होनी चाहिए।

12. पूर्वाग्रहों तथा पक्षपात से युक्त (Free Form Bias and Prejudices) - एक अच्छी पाठ्य पुस्तक में काल्पनिक तथा धोखे में रहने वाले सामान्यीकरणों का प्रयोग नहीं किया जाना चाहिए। इसमें लेखक को किसी प्रकार की साम्प्रदायिक, जातीय, धार्मिक या दलीय विचार धाराओं से ऊपर उठकर विषय सामग्री की निष्पक्ष एवं वस्तुनिष्ठ व्याख्या करनी चाहिए।

13. अधिगम ... (...Method of Learning) - एक गुणी पुस्तक में कवेल विषय सामग्री का ही प्रस्तुत नहीं किया जाता अपितु इसके व्यवहारिक प्रयोग के सुझाव भी दिए जाते है। इसमें मॉडल या प्रारूप के निर्माण क्षेत्रीय भ्रमण या यात्रा का संगठन चार्ट, पोस्टर आदि के निर्माण के द्वारा प्राप्त किए गए ज्ञान की व्यवहारिक उपयोगिता का सुझाव भी दिया जाना चाहिए।

14. पाठ्य पुस्तक में साहित्यिक गुण होना चाहिए (Text Book should have Literary Qualities) - वाणिज्य शास्त्र विज्ञान भी है और कला भी, इसलिए इसकी पाठ्य पुस्तक का निर्माण करते समय इस बात को ध्यान में रखा जाना चाहिए। केवल तथ्यों व घटनाओं का संकलन पाठ्य पुस्तक को नीरस बना देता है, इसलिए इनकी सरल व्याख्या भी होनी चाहिए। इस प्रकार के व्यवसायिक गुणों से सम्पन्न होनी चाहिए।

15. अच्छे दृष्टांत (Good Illustraction) - वर्तमान समय में चित्रों ग्राफ तथा रेखाचित्रों की संख्या और विभिन्नता का प्रयोग निरंतर बढ़ता जा रहा है। चित्र शिक्षा का आंतरिक भाग हो सकता है इसलिए यह सोचा जाता है कि वाणिज्य शास्त्र की पाठ्य पुस्तक में जितना स्थान उपलब्ध हो, अधिक से अधिक दृष्टांतों का प्रयोग किया जाना चाहिए। इससे विषय सामग्री रोचक आकर्षक एवं सुबोध बनती है। यदि इनका चयन सोच समझकर किया जाए, विषय सामग्री के साथ उचित स्थान प्रदान किया जाए और कुशलतापूर्वक अध्यापक के द्वारा प्रयोग किया जाए तो ये प्रभावी शिक्षण तथा अधिगम के लिए सहायक सामग्री का काम करते हैं।

16. उचित एवं पर्याप्त अभ्यास कार्य (Proper and Adequate Exercise) - सामाजिक अध्ययन की पुस्तकों के प्रत्येक अध्याय के अंत में उस अध्याय से सम्बन्धित आवश्यक प्रश्नों तथा अभ्यासार्थ व्यवहारिक क्रियाओं का समावेश किया जाना चाहिए इससे एक तो कक्षा में किए गए कार्य का मूल्यांकन सम्भव हो सकेगा। और दूसरे विद्यार्थियों में सूझबूझ, अभिवृतियों एवं व्यवहारिक कुशलताओं का विकास होगा।

17. समय-समय पर संशोधन एवं परिवर्तन (Constant Modification and Revision) - वाणिज्य शास्त्र का विषय अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित है। जिसमें निरंतर परिवर्तन और परिवर्तन होता रहता है। विश्व में विभिन्न क्षेत्रों जैसे- तकनीक, उद्योग कृषि, शिक्षा, विज्ञान आदि में निरंतर परिवर्तन के कारण जीवन तेजी से परिवर्तित हो रहा है। इसलिए पाठ्य पुस्तक में भी समय-समय संशोधन एवं परिवर्धन होना चाहिए। जिससे विद्यार्थियों को नवीनतम विषय वस्तु का ज्ञान प्राप्त हो सके। आज जैसे राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (National council of educational reasearch and tranning) द्वारा इसकी पाठ्य पुस्तकों में परिवर्तन किया जा रहा है।

अतः वाणिज्य शास्त्र की पाठ्य पुस्तक ऊपर वर्णित गुणों से युक्त होनी चाहिए। तभी वह एक अच्छी पुस्तक कहलाएगी, परन्तु यदि एक पाठ्य पुस्तक को अच्छी कहा जाता है। तो इसे स्वयं में अंतिम न मानकर केवल ज्ञान प्राप्त करने का साधन ही माना जाना चाहिए। कोई अध्यापक यदि पाठ्य पुस्तक पर अत्यधिक निर्भर करता है तो वह विद्यार्थियों के मस्तिष्क के लिए विभिन्न पुस्तकों से भिन्न विचारधाराओं को प्रस्तुत करना चाहिए और इसके लिए आवश्यकता है वाणिज्य शास्त्र में संदर्भ पुस्तकों की और ये पुस्तकालय में उपलब्ध होनी चाहिए। इन पुस्तकों की सहायता से वह विद्यार्थियों को विस्तृत

Scanned with CamScanner

ज्ञान प्रदान कर सकता है।

वाणिज्य पाठ्य पुस्तक की उपयोगिताएँ
(Use of Commerce Text Book)

पाठ्य पुस्तकें अध्यापक एवं विद्यार्थी दोनों के लिए उपयोगी है। पाठ्य पुस्तकों से सामान्य रूप से निम्नलिखित लाभ होते हैं-

1. **शिक्षा प्रक्रिया का व्यवस्थित होना (Educational Process becomes Organized)** - पाठ्य पुस्तकों की सहायता से शिक्षा की प्रक्रिया बड़े व्यवस्थित ढंग से चलती है इनसे कक्षा विशेष की पाठ्यचर्या स्पष्ट हो जाती है। तथा अध्यापक अपने वर्ष भर के कार्य की योजना बनाने में समर्थ होते है उन्हें बहकने का अवसर नहीं रहता।
2. बच्चों को यह पता रहता है कि उन्हें क्या पढना है और कितना पढना है, उनके भटकने की गुंजाइश नहीं रहती।
3. **अध्यापक को पाठ की तैयारी करने में सहायता प्रदान करना (Helps the teacher in preparing the lessons)** - पाठ्य पुस्तकें अध्यापक को पाठ की तैयारी करने एवं बच्चों को पाठ पढ़ने के लिए तैयार होने, दोनों में सहायक होती है।
4. **ज्ञान विस्फोट (Knowledge Explosion)** - आधुनिक युग ज्ञान के विस्फोट का युग है। आज के बालक को बहुत कुछ सीखना है और उसका मूल्यांकन करना है। उसने अपनें अंदर बहुत से दृष्टिकोण को अपनाना है तथा जीवन में बहुत से निर्णय लेने हैं। ये सारी क्षमताएं केवल प्रत्यक्ष अनुभव (Direct experiences) पर निर्भर रहकर प्राप्त नहीं की जा सकती। किसी ने सच ही कहा है कि आधुनिक सभ्यता न सुधरने वाली पुस्तकों की सभ्यता है इसलिए पुस्तकों का सामान्य तौर पर और पाठ्य पुस्तकों को विशेष तौर पर बड़ा महत्व है।
5. **ज्ञान को इकाईयों में बाँटने के लिए (To Devide the Knowledge into Units)** - आज के युग में हमें पूर्ण ज्ञान को इकाइयों में बांटने की बहुत आवश्यकता है। पाठ्य पुस्तक से शिक्षक को यह लाभ होता है कि उसे यह देखना तथा समझना सरल हो जाता है कि किस-किस पाठ में दिया गया ज्ञान समान है या एक दूसरे पर आधारित है। इस आधार पर शिक्षक समस्त ज्ञान को इकाइयों में बाँट सकता है तथा ऐसा करने के पश्चात् ज्ञान प्रदान कर सकता है जिसे छात्र सरलता से ग्रहण कर पाते हैं।
6. **शिक्षण में एकरूपता लाने के लिए (To Bring about Uniformity in Teaching)** - राष्ट्रीय विकास के लिए शिक्षा एकरूपता आवश्यक है। परन्तु इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता कि सभी विद्यार्थियों का परिवेश एक जैसा नहीं होता तथा उनके स्तर भी भिन्न होते हैं। यही बात अध्यापकों के बारे में भी कही जा सकती है इन्ही बातों को ध्यान में रखकर नई शिक्षा नीति ने एकरूपता पर बल दिया गया है। पाठ्य पुस्तकें ही एक ऐसा साधन है जो शिक्षा में एकरूपता ला सकती हैं।
7. **मितव्ययता (Economy)** - पाठ्य पुस्तकें कक्षा शिक्षण का प्रमुख साधन होती हैं। इनकी सहायता से एक साथ अनेक बच्चों को पढ़ाना सम्भव होता है।
8. **व्यष्टि शिक्षण (Individual Teaching)** - व्यष्टि शिक्षण में भी पाठ्य पुस्तकों का अपना महत्व होता है। ... पुस्तकों का अध्ययन करके अपने ज्ञान को स्पष्ट एवं निश्चित करते हैं अध्यापक तो केवल पथ प्रदर्शक के रूप में कार्य करते हैं।
9. **शिक्षक की पूरक (Suppliment the Teacher)** - पाठ्य पुस्तकें शिक्षक की पूरक होती है। कक्षा में जो कुछ पढ़ाया जाता है यह आवश्यक नहीं कि बच्चे उसे पूर्ण रूप से ग्रहण कर लें। उस स्थिति में पुस्तकें बच्चों की सहायता करती हैं वे घर में इन पुस्तकों का अध्ययन करके विषय का स्पष्ट ज्ञान प्राप्त करते हैं।
10. **पाठ को दोहराने के लिए (To Revise the Lesson)** - ये पुस्तकें पाठ को दोहराने एवं गृह कार्य करने में भी बच्चों की सहायता करती हैं।
11. **स्वाध्याय की आदत का निर्माण (Creates the Habbit of Self Study)** - पाठ्य पुस्तकों के अध्ययन से बच्चों में स्वाध्याय की आदत का निर्माण होता है।
12. **विद्वानों तथा शिक्षकों के विचारों को प्रदान करना (To provide view points of scholars and teachers)** - पाठ्य पुस्तकें छात्रों तथा सामान्य अध्यापकों को विद्वानों तथा उच्च कोटी के अध्यापकों के विचारों तथा अनुभवों को प्रदान करती है। वे इन अनुभवों से लाभ उठाने में समर्थ होते है।
13. **कम प्रतिभा वाले अध्यापकों की कमी को पूरा करने के लिए (To make up for the deficiency of very talented teachers)** - पाठ्य पुस्तकें अध्यापकों के पूर्ण रूप से दक्ष न होने की कमी को पूरा करती हैं। यदि अध्यापक पूरी तरह से परिपक्व (Mature) संतुलित, सुशिक्षित तथा अनुभवी है तो वह अपनी रूप रेखाओं (Out lines) को प्रयोग करके कक्षा में पढ़ा सकता है। ऐसा अध्यापक आधारभूत पाठ्य पुस्तक की आवश्यकता महसूस नहीं करता। परन्तु जैसी देश की अध्यापक शिक्षण प्रणाली की दशा हैं, ऐसे अध्यापक देश में अधिक नहीं हैं। अधिकांश अध्यापकों में ऐसा करने की समर्थता नहीं है बहुत से अध्यापकों को कई बार सृजनात्मक विचार सूझते नहीं। ऐसे अध्यापकों के लिए पाठ्य पुस्तकें अनिवार्य हैं। (Text books can be used to confirm and did the teacher who has run out of new ideas or does not have any at all)
14. **भाषण विधि की सीमाओं के कारण (Due to the limitations of lecture method)** - प्रचलित परीक्षा प्रणाली में भी पाठ्य पुस्तक के महत्व को बढ़ा दिया है। अगली कक्षा में प्रवेश करवाने के लिए परीक्षाएं वर्ष के अंत में होती हैं। भाषण विधि से अर्जित किया हुआ ज्ञान विद्यार्थियों को बहुत सीमा तक भूल जाता है। ऐसा इसलिए होता है कि भाषण पद्धति की अपनी ही कुछ सीमाएँ हैं। बहुत बढ़िया तरीके से बोले हुए शब्दों का प्रभाव विद्यार्थी आंशिक रूप से ही ग्रहण करते हैं और समय के साथ-साथ यह प्रभाव श्रोताओं के मस्तिष्क से मिट जाता है और प्रायः देखा गया है कि बहुत ध्यान से सुनने वाले श्रोता भी कुछ मुख्य सम्बन्धों को छोड़कर भाषण का सब कुछ भूल जाते है इसलिए जब परीक्षा का समय समीप आता है तो पाठ्य पुस्तक ही उनके काम आती है। किसी ने सच ही कहा है कि पाठ्य पुस्तक के बिना शिक्षा ग्रहण करना उतना ही कठिन है, जितना कि दिशा सूची के बिना समुद्र में यात्रा करना। (Without the help of a realy good text book, we will be sailing pedagogical seal without a compass)
15. **पुस्तकालयों की अच्छी स्थिति न होना (Libarary's are not in Good Shape)** - भारत एक

सकें। इसलिए प्रत्येक बच्चे का अपनी ... चाहिए।

16.अनेक तथ्य एक ही स्थान पर (Many Facts at One Place) - पाठ्य पुस्तकों में विषय विशेष से सम्बन्धित अनेक तथ्य एवं सूचनाएं एक ही स्थान पर पढ़ने को मिल जाती है इस प्रकार इनके माध्यम से बच्चे कम समय मे अधिक ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

17.मनोरंजन (Recreation) - पाठ्य पुस्तकें ज्ञान के विकास के साथ-साथ बच्चों का मनोरंजन भी करती है। बच्चें जब अनेक आश्चर्यजनक बातों को इनसे जानकारी प्राप्त करते है तो उन्हें आनन्द की अनुभूति होती है।

18.परीक्षा लेने में सहायक (Helpful in Giving Examination) - पाठ्य पुस्तकें बच्चों के ज्ञान की परीक्षा लेने भी अध्यापक की सहायता करती हैं। ये परीक्षा में पूछे जाने वाले ज्ञान की सीमा निश्चित करती है इसकी सहायता से अध्यापक प्रत्येक स्तर के प्रश्न पत्र बनाने में सफल होते।

19.कक्षा-कक्ष के अनेक दोषों को दूर करने के लिए (For removing various defect of classroom teaching) - कक्षाओं में बच्चों की संख्या अत्यधिक होना (Excessive number of student in the classroom teaching):- प्रायः देखने में आया है कि भारतीय स्कूलों की कक्षाओं में विद्यार्थियों की संख्या इतनी अधिक होती है कि वहाँ का वातावरण दूषित बन जाता है। यदि किसी कक्ष में 100 या इससे भी अधिक बच्चें हों तो अध्यापक के द्वारा दिया हुआ भाषण सुनते है और पीछे बैठे हुए अधिकांश विद्यार्थी भाषण का पूरी तरह से लाभ नहीं उठा सकते क्योंकि या तो वे अध्यापक के भाषण को सुन ही नहीं सकते या अपने आप को अनुशासनहीन क्रियाओं मे सलंग्न कर लेते हैं।

क) बोझल पाठ्यक्रम को पूरा करना (To Complete Heavey Syllabus) - विद्यालय के मुख्य अध्यापक अथवा शिक्षा अधिकारियों की ओर से अध्यापक को यह निर्देश होता है कि वे समय से पहले पाठ्यक्रम पूरा करने की ही चिंता होती है। क्योंकि इस पाठ्यक्रम को पूरा करने के लिए कुछ निश्चित कालांश होते हैं, इसलिए वह यह नहीं देखता कि वह कक्षा के समक्ष प्रभावशाली ढंग से अध्ययन करवा भी रहा है या नही उसे तो केवल एक ही बात की चिंता होती है कि चाहे वो कैसे भी पढाए, पाठ्यक्रम को पूरा कर दे। इसलिए इस प्रभाव से ही अध्यापन का उपचार पाठ्य पुस्तक ही है।

ग) अन्य अध्यापन सामग्री का अभाव (Lack of other Teaching Material) - भारत एक निर्धन देश है जहां अन्य अध्यापन सामग्री के उपलब्ध होने की बात सोची भी नही जा सकती इसलिए भी पाठ्य पुस्तक की आवश्यकता बढ़ जाती है।

20.माता पिता की निरक्षरता (Ileteracy of the Parents) - पाठ्य पुस्तक एक प्रकार से घर में निरक्षरता के विरूद्ध एक बिमा है। भारत में साक्षरता बहुत कम है। सरकार के पूरे यत्नों के बावजूद भी 40 प्रतिशत से अधिक लोग साक्षर नहीं हैं। निरक्षर माता पिता या अभिभावक घर में बच्चों की सहायता नहीं कर सकते। अध्यापक भी केवल दिन के समय ही बच्चों के पास होता है।

21.अभ्यास के लिए ... तभी पूर्ण होता है, जब उसे प्रयुक्त किया जाए तथा उसे प्रयोग करने के लिए आवश्यक है कि उसे आत्मसात (Assimilate) किया जाए। ऐसा केवल सतत् अभ्यास से ही संभव हो सकता है बड़ी कक्षाओं या श्रेणी में किया गया अध्ययन के साथ ही अध्ययन क्रम का न तो अन्त होता है और न ही होना चाहिए। ज्ञान की प्राप्ति उस समय तक व्यर्थ है, जब तक उसे याद रखकर समय-समय उसका प्रयोग न किया जाए। ऐसा तभी संभव है जब श्रेणी में की गई पढ़ाई के नोट बनाए जाए या रिकार्ड रखा जाए। किंतु सामान्य विद्यार्थी में इतनी योग्यता नहीं होती कि वह एक ही समय में अध्यापक द्वारा बताई जाने वाली बातों को सुन, समझ या नोट कर सकें, अतः बालकों के अभ्यास के लिए अध्यापक को प्रश्न व समस्याएँ आदि देनी पड़ती है। अच्छा अध्यापक सदा अपने शिक्षण कार्यक्रम को मौलिक ढंग से तैयार करता है। और सामग्री को प्रस्तुत करने का ढंग भी मौलिक होता है किंतु हर अध्यापक में न तो इतनी योग्यता होती है और न हमारी शिक्षा पद्धति उन्हें इतनी स्वतंत्रता प्रदान करती है कि वे अपनी मौलिकता को दर्शा सके। यही कारण है कि वाणिज्य जैसे विषय को पढ़ाने के लिए अच्छी पाठ्य पुस्तक की बहुत आवश्यकता है।

22.वाणिज्य एक नया विषय (Commerce is a New Subject) - वाणिज्य एक नवीन विषय है। इस विषय पर अभी पर्याप्त संख्या में अच्छी पाठ्य पुस्तकें उपलब्ध नहीं हैं। परिणामस्वरूप आरम्भिक अवस्था में था तो, भूगोल, नागरिकशास्त्र तथा इतिहास पर लिखी भिन्न-भिन्न पुस्तकें पढ़ी जा रही है। या ऐसी मोटी-मोटी पुस्तकों की सहायता ली जा रही है। जिनमें वाणिज्य भूगोल तथा नागरिकशास्त्र के विषयों को एकत्र कर दिया गया है। किंतु ये पुस्तकें व्यर्थ हैं क्योंकि ये वाणिज्य की सच्ची अवधारणा के अनुरूप नही लिखी गई हैं। इन पुस्तकों में लेखको ने यह बात भली प्रकार से समझी ही नहीं कि वाणिज्य तो एक ऐसा समग्र तथा एकीकृत रूप है, जिसका उद्देश्य विद्यार्थियों को उनके वातावरण में अर्थात् परिवार, समुदाय राज्य तथा राष्ट्र में भली प्रकार रहना सिखना है ताकि वें समाज के वर्तमान स्वरूप को समझ सकें तथा वर्तमान युग की परिवर्तनकारी शक्तियों तथा आंदोलनों की बुद्धिमता पूर्वक व्याख्या कर सकें। इस दृष्टि से देखा जाए तो आज के वाणिज्य के शिक्षक अंधकार में ही भटक रहे है। उनके पथ प्रदर्शन के लिए वाणिज्य की ऐसी पाठ्य पुस्तकों की बड़ी आवश्यकता है, जो विषयानुकूल हों। कुछ समय के लिए तो वाणिज्य के लिए ऐसी उत्तम पाठ्य पुस्तक को आधार बनाना होगा जो इस नए विषय की अवधारणा तथा उद्देश्यों को स्पष्ट कर सकें, यदि हम हृदय से चाहते हैं कि वाणिज्य का कार्यक्रम सतत् अग्रसर होता जाए तो आवश्यक है कि इस विषय की उत्तम पाठ्य पुस्तकें तैयार की जाएं और उनका अध्यापक तथा विद्यार्थियों द्वारा प्रयोग किया जाए।

पाठ्य पुस्तक से होने वाली हानियाँ (Disadvantages of Text Books)

इसमें कोई संदेह नहीं कि पाठ्य पुस्तकों से हमें उपर्युक्त लाभ होते हैं परन्तु इनके प्रयोग से कुछ हानियाँ भी होती है जो निम्नलिखित हैं -

1. अध्ययन क्षेत्र को सीमित करना (Limits the Field of Study) - निश्चित पाठ्य पुस्तकें

Scanned with CamScanner

अध्यापक एवं छात्र दोनों के अध्ययन क्षेत्र को सीमित कर देती हैं। वे
अध्ययन की आवश्यकता को ही नही समझती।

2. **रटने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करना (Encourages the Disposition of Cr** पाठ्य पुस्तकों से बच्चों को सभी आवश्यक तथ्य एवं सूचनाएँ मिल जाती है वे उन्हें प्रयत्न ही नहीं करते अपितु उन्हें रटकर परीक्षा में उत्तीर्ण होने का प्रयत्न करते है।

3. **सैद्धान्तिक ज्ञान पर बल (Emphasis on Theoretical Knowledge)** - पाठ्य प को सैद्धान्तिक ज्ञान अधिक देती हैं इनकी सहायता से शिक्षण करने पर बच्चे व्यवह वंचित रह जाते हैं।

4. **दोषपूर्ण सामग्री (Defective Material)** - पाठ्य पुस्तकें प्रायः दोषयुक्त सामग्री से पू विस्तृत अध्ययन के अभाव में छात्र इन अशुद्ध सूचनाओं को रट लेते हैं और अज्ञानी हो जाते हैं।

5. **ज्ञान स्थायी नहीं होता (Knowledge Attained is not Permanent)** - पाठ्य उपस्थिति में बच्चे 'करके सीखना' की आवश्यकता नहीं समझते। इनके माध्यम से वे जो करते हैं, वह स्थायी नही होता।

6. **अध्यापकों द्वारा पाठ्य पुस्तकों का सही उपयोग न करना (Even Teacher do not M of Text Book Properly)** - अध्यापक पाठ्य पुस्तकों का सही उपयोग नहीं करतें पाठ्य पुस्तकों का कक्षा में गठन करके अपने कर्तव्यों को नहीं समझते हैं। बहुत से अ इतना भी कष्ट नहीं करते। वे तो बच्चों को ही मौन पठन का आदेश देकर कक्षा में सो

7. **बच्चों का अध्ययन के प्रति सचेत न होना (Students do not remain Active t Studies)** - पाठ्य पुस्तकों के प्रयोग से सबसे बड़ी हानि यह होती है कि बच्चे अध्ययन सचेत नहीं होते, परीक्षा के समय ही वे इन पुस्तकों का अध्ययन करते हैं और कुछ र रटकर परीक्षा के मैदान में कूद पड़ते हैं।

वाणिज्य के शिक्षक की व्यावसायिक वृद्धि के लिए उपाय (Suggestion to Commerce Teacher for Business Growth)

1. **निरन्तर अध्ययन (Continue Study)** – शिक्षक को अपने कार्य एवं व्यवसाय के सम्बन्ध में अध्ययन करते रहना चाहिए। उसे अपने ज्ञान एवं कौशलों का सही दिशा में विकास करन निरन्तर रूप से अध्ययन करने वाला शिक्षक सदैव व्यावसायिक वृद्धि के मार्ग की ओर बढ़ है।

2. **सेवाकालीन प्रशिक्षण (Inservice Training)** – एक शिक्षक को अपनी सेवाकालीन अ दौरान भी प्रशिक्षण लेते रहना चाहिए। सेवाकालीन शिक्षकों के लिए कई परिषदों द्वारा अल प्रशिक्षण योजनाएं एवं कार्यशालाएँ आयोजित की जाती हैं। इन कार्यशालाओं के द्वारा शि विभिन्न प्रकार के कौशलों एवं विधियों का ज्ञान कराया जाता है जो उनकी व्यावसायिक सहायक होती है।

3. **शैक्षिक भ्रमण (Educational Trip)** – शैक्षिक भ्रमण के लिए शिक्षकों को सरकार द्वारा

Scanned with CamScanner

सहायता प्रदान की जाती है। इस प्रकार के भ्रमण से शिक्षकों को अन्य राज्यों एवं देशों की शिक्षा व्यवस्था को समझने में सहायता मिलती है। यह भ्रमण शिक्षकों की व्यावसायिक वृद्धि का महत्वपूर्ण साधन साबित होते हैं।

4. **अध्ययन अवकाश (Inservice)** – आजकल के समय में सरकार द्वारा शिक्षकों को उच्च स्तर अध्ययन के लिए विशेष प्रकार के अवकाश प्रदान किए जाते हैं। इनका लाभ उठा कर शिक्षक अपनी व्यावसायिक वृद्धि कर सकते हैं।

5. **पत्राचार द्वारा अध्ययन (Study by Media)** – आज पत्राचार शिक्षा का एक बहुत सरल माध्यम बन गया है। सेवाकालीन शिक्षक भी पत्राचार के द्वारा अपनी शिक्षा निरन्तर रख सकते हैं। कार्य के साथ-साथ शिक्षा प्राप्त करने से शिक्षक को व्यावसायिक रूप से लाभ प्राप्त होता है।

6. **शैक्षिक पत्रिकाओं के लिए लेखन (Writing for Educational Magzine)** – आज प्रत्येक शिक्षक के लिए शिक्षा के साथ-साथ शैक्षिक पत्रिकायें भी बहुत महत्वपूर्ण हो गई हैं। इन पत्रिकाओं के माध्यम से शिक्षक अपने शोध पत्र प्रकाशित करा सकते हैं। N.C.E.R.T तथा NUEPA इस प्रकार की पत्रिकाएँ प्रकाशित करते हैं।

7. **अनुसंधान कार्य (Research Work)** – यदि कोई शिक्षक अनुसंधान के कार्य में रूचि रखता है तो वह सेवाकालीन रहते हुए भी किसी विश्वविद्यालय से अनुसंधान कार्य कर सकता है। यह अनुसंधान कार्य उसे उसकी व्यावसायिक वृद्धि में लाभ प्रदान करेगा।

8. **विषय अध्ययन परिषद् (Case Study Councils)** – विद्यालय के शिक्षकों के लिए कुछ राज्यों में विषय शिक्षकों की अध्ययन परिषद्रों का निर्माण किया जाता है। इन परिषद्रों में वाणिज्य के शिक्षक मिलकर आपस में अपने-अपने विचारों का आदान-प्रदान कर सकते हैं। इस प्रकार की परिषद्रों से शिक्षकों को अपनी व्यावसायिक वृद्धि से सम्बन्धित समस्याओं के समाधान आसानी से प्राप्त हो जाते हैं।

Scanned with CamScanner

1. कक्षा में कम्प्यूटर (Computer in Class)
2. कक्षा वेबसाइट (Class-Website)
3. कक्षा ब्लॉग और विकी वेब (Class Blog and Wiki Web)
4. वायरलेस कक्षा माइक्रोफोन (Wireless Class Microphone)
5. स्मार्टबोर्ड्स (Smart Boards)
6. ऑनलाइन मीडिया (Oneline Media)
7. सैटेलाइट सम्प्रेषण (Sattelite Communication)

तर - पारंपरिक कक्षाओं में वर्तमान में कंप्यूटर और गैर कंप्यूटर प्रौद्योगिकी के कई प्रकार उपयोग में । इनमें शामिल हैं –

कक्षा में कम्प्यूटर (Computer in Class) - कक्षा में कंप्यूटर होना एक शिक्षक के लिए एक संपत्ति है। कक्षा में एक कंप्यूटर के साथ, शिक्षक एक नया पाठ प्रदर्शित करने, नयी सामग्री प्रस्तुत करने, नये प्रोग्राम का उपयोग समझाने और नयी वेबसाइट दिखाने में सक्षम होते हैं।

Scanned with CamScanner

2. **कक्षा वेबसाइट (Class-Website)** – अपने छात्रों के काम को प्रदर्शित करने का इससे बेहतर और क्या हो सकता है कि अपनी कक्षा के लिए डिजाइन किया हुआ एक वेब पेज बनाया जाये। एक बार एक वेब पेज बनाया लिया गया है, तो शिक्षक उस पर गृहकार्य, छात्र कार्य, प्रसिद्ध छोटे-मोटे गेम और भी बहुत कुछ पोस्ट कर सकते हैं। आजकल के समाज में, बच्चे कंप्यूटर का उपयोग जानते हैं, वे वेबसाइट खोल सकते हैं, तो उन्हें क्यों नहीं कंप्यूटर उपलब्ध करवा दिया जहां वे एक प्रकाशित लेखक बन सकें। जरा सावधानी के साथ, क्योंकि अधिकतर जिलों में स्कूल कक्षाओं में आधिकारिक वेबसाइट प्रबंधन के लिये सख्त नीतियां हैं। इसके अलावा, सभी स्कूल शिक्षक वेबपेज उपलब्ध करवाते हैं जिन्हें आसानी से स्कूल जिले की वेबसाइट के माध्यम से देखा जा सकता है।

3. **कक्षा ब्लॉग और विकी वेब (Class Blog and Wiki Web)** – 2.0 के उपकरणों के कुछ प्रकार हैं जिन्हें कक्षाओं में क्रियान्वित किया जा रहा है। ब्लॉग से छात्रों को विचार, कल्पनाओं और कार्य, की टिप्पणी और बार-बार दुहरानेवाले प्रतिविंब के लिए एक पत्रिका की तरह चल रहे संवाद को बनाए रखने की सुविधा निलती है। विकी अधिक समूह केंद्रित हैं जहां समूह के कई सदस्यों को एक एकल दस्तावेज को संपादित करने और वास्तव में सब के सहयोग से और ध्यान से संपादित अंतिम उत्पाद बनाने की सुविधा प्रदान करता है।

4. **वायरलेस कक्षा माइक्रोफोन (Wireless Class Microphone)** – कक्षाओं में एक दैनिक घटना। माइक्रोफोन की मदद से छात्र अपने शिक्षकों को स्पष्ट सुनने में सक्षम हैं। बच्चे बेहतर सीखते हैं जब वे शिक्षक को स्पष्ट रूप से सुनते हैं। शिक्षकों के लिए लाभ यह है कि वे अब दिन के अंत में अपनी आवाज नहीं खोते।

5. **स्मार्टबोर्ड्स (Smart Boards)** – एक इंटरैक्टिव सफेद बोर्ड है जो कंप्यूटर अनुप्रयोगों के लिए स्पर्श नियंत्रण प्रदान करता है। जो कुछ भी एक कंप्यूटर स्क्रीन पर किया जा सकता है उसे दिखाने से कक्षा में अनुभव में वृद्धि होती है। यह न केवल दृश्य अधिगम में सहायक है, बल्कि यह परसस्पर प्रभावी है ताकि छात्र उस पर चित्र बनां सकते हैं, लिख सकते हैं या स्मार्टबोर्ड पर छवियों में हेरफेर कर सकते हैं।

7. **ऑनलाइन मीडिया (Oneline Media)** – कक्षा पाठ के संवर्द्धन हेतु प्रदर्शित वीडियो वेबसाइट का उपयोग किया जा सकता है (जैसे यूनाइटेड स्ट्रीमिंग, टीचर ट्यूब आदि)।

8. स्थानीय स्कूल बोर्ड और कोष उपलब्धता के आधार पर अन्य बहुत से उपकरणों का उपयोग किया जाता है। इन में डिजिटल कैमरा, वीडियो कैमरा, इंटरैक्टिव व्हाइटबोर्ड उपकरण, दस्तावेज कैमरा या एलसीडी प्रोजेक्टर शामिल हो सकते हैं।

Scanned with CamScanner

Unit - IV

कक्षा–कक्ष प्रक्रियायें एवं मूल्यांकन

[Classroom Processes and Evaluation]

Scanned with CamScanner

र - समस्या समाधान विधि (Problem Solving Method)

roblem method is a general educational method rather than a specific pedagogical chnique. It is probably the method most productive of learning."

मस्या पद्धति पूर्णतया नवीन नहीं है। सुकरात ने आध्यात्मिक संवादों में इसका प्रयोग किया है। सेंट मस (St. Thomas) ने भी 'Summa Theologica' में इसका प्रयोग किया था। आधुनिक युग में चारशील शिक्षकों तथा विद्वानों ने इसे एक शैक्षिक साधन के रूप में माना। प्रमुख कैथोलिक शिक्षक र्ज जान्सन (George Johson) ने लिखा है - "मस्तिष्क को प्रशिक्षित करने का सर्वोत्तम ढंग उसके समक्ष वास्तविक समस्याओं को प्रदर्शित करना तथा उसको उनके समाधान के लिए अवसर तथा स्वतंत्रता प्रदान करना है।"

"The best way to trained the mind is to confort it with real problems and to give him the apportunity and freedom to solve it."

अर्थ (Meaning)

र्तमान समय में स्कूल का सम्प्रत्यय ऐसे स्थान से सम्बन्धित नहीं है जहाँ विद्यार्थी को केवल कक्षा में बैठाकर सैद्धान्तिक ज्ञान प्रदान किया जाए अपितु ऐसा स्थान है, जहाँ जीवन जीने का प्रशिक्षण प्रदान

Scanned with CamScanner

किया जाता है। स्कूली जीवन तथा ब्रह्म जीवन के बीच उचित ढंग से सहसम्बन्ध स्थापित किया जाता है। स्कूलों को सामाजिक जीवन और समाज से अलग नहीं समझा जाना चाहिए। अपितु यह समाज का ही एक आंतरिक भाग है। स्कूल में विद्यार्थी को सामाजिक योगदान के लिए प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए तथा जटिल जीवन की समस्याओं के सुलझाने के योग्य बनाया जाना चाहिए। स्कूल में प्राप्त किया गया ज्ञान उपयोगी व उद्देश्यपूर्ण होना चाहिए। ज्ञान की प्रकृति ऐसी होनी चाहिए कि विद्यार्थी उसे प्राप्त करने में रुचि दिखाए तथा उसे प्राप्त करने के लिए क्रियाशील रहे।

समस्या पद्धति के अर्थ को हम जेम्स एम.ली. (James M.Lee) के शब्दों में इस प्रकार स्पष्ट कर सकते हैं - "समस्या समाधान एक शिक्षण प्रणाली है। जिसके द्वारा शिक्षक तथा विद्यार्थी किसी महत्वपूर्ण शैक्षिक कठिनाई के समाधान या स्पष्टीकरण के लिए सचेत होकर पूर्ण संलग्नता के साथ प्रयास करते हैं। समस्या पद्धति विद्यार्थियों को स्वयं सीखने के लिए तत्पर बनाती है। ऐसा वे अपनी स्वयं की शक्तियों का प्रयोग करके करते हैं।"

समस्या विधि का शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में महत्वपूर्ण स्थान है। इस विधि से विद्यार्थियों में विवेचनात्मक चिंतन, सृजनात्मकता, अभिव्यक्ति, आलोचनात्मक विश्लेषण तथा तार्किक चिंतन का विकास सम्भव होता है।

परिभाषाएँ (Definitions)

समस्या विधि वह शिक्षण है जिसमें शिक्षण कार्य किसी समस्या से सम्बन्धित आयोजित व गठित किया जाए। यह ऐसी क्रियात्मक विधि है। जिसमें विद्यार्थियों के समक्ष एक समस्या प्रस्तुत की जाती है और उन्हें उस समस्या के समाधान की खोज का प्रशिक्षण दिया जाता है। स्किनर (Skinner) के अनुसार समस्या समाधान एक ऐसी रूप रेखा है जिसमें सृजनात्मक चिंतन तथा तर्क होते हैं।

("Problem solving is the framework or pattern with in which creative thinking and reasoning take place.")

गेट्स (Gates) तथा अन्य के अनुसार, "समस्या समाधान शिक्षण का एक रूप है जिसमें उचित प्रत्युत्तर की खोज की जाती है।"

("Problem sovling is a form of teaching in which the appropriate response must be covered.")

सी.वी.गुड (C.V. Good) के अनुसार, "समस्या विधि वह विधि है जिसमें अधिगम को प्रेरित करने के लिए चुनौतिपूर्ण परिस्थितियों का निर्माण किया जाता है। जिसमें समाधान की आवश्यकता होती है। यह एक विशिष्ट प्रक्रिया है जिसके द्वारा छोटी-छोटी सम्बन्धित समस्याओं के मिश्रित समाधान से एक बड़ी समस्या सुलझाई जाती है।"

रिस्क (Risk) के अनुसार, "समस्या समाधान किसी कठिनाई या जटिलता का एक पूर्ण संतोषजनक हल प्राप्त करने के उद्देश्य से किया गया नियोजित कार्य है। इसमें मात्र तथ्यों का संग्रह करना या किसी अधिकृत विद्वान के विचारों की तर्क रहित स्वीकृति निहित नहीं है वरना यह विचारशील चिंतन की विधि है।"

("The problem method is a planed attack upon a difficulty or perplexity for the purpose of finding a satisfactory solution. This involves the process of reflecting thinking not merely the cumulation of facts or the blind acceptance of ideas which

...one in authority given us.")

इस प्रकार समस्या उस परिस्थिति को कहा जाता है जिसके लिए मानव के पास पहले से तैयार ...समाधान नहीं होता। इस प्रकार की परिस्थितियों में मनुष्य को समस्या का समाधान ढूंढने के लिए ...करना पड़ता है। इस विधि में पाठ्यक्रम इस प्रकार संगठित किया जाता है कि विद्यार्थी के समक्ष ...वास्तविक समस्या उत्पन्न हो जाए। वाणिज्य शिक्षण में समाज से सम्बन्धित विभिन्न समस्याएं ...र्थियों के समक्ष प्रस्तुत की जा सकती है। अब प्रश्न यह उठता है कि किस प्रकार की समस्याएं ...त की जाएं।

...स्या समाधान की विभिन्न विशेषताएं
...Main Characteristics of Problem Solving)

...स्या समाधान के आवश्यक तत्व निम्नलिखित हैं -

1. **समस्या के प्रति अपनत्व की भावना (Sence of Belonging Towards the Problem)** - एक बढ़िया समस्या की मुख्य विशेषता यह है कि छात्र उस समस्या की मुख्य विशेषता यह है कि छात्र उस समस्या को अपनी समस्या समझे। ऐसा होने पर ही उनके मन में समस्या का समाधान ढूंढने की रुचि और समस्या के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न होगी। यदि कोई समस्या छात्रों की किसी तत्कालीन (Immediate) समस्या का समाधान करती है तो ऐसी समस्या के प्रति उनके मन में अपनत्व की भावना जागृत होगी।
2. **समस्या चिंतन को उभारने वाली हो (A problem must stimulate the thinking power of the students)** - कई बार अध्यापक कक्षा कक्ष में छात्रों के सामने ऐसी समस्याएँ प्रस्तुत कर देते हैं जो उनकी आयु और योग्यताओं से बहुत ऊपर है। इस प्रकार की समस्याओं में छात्र कभी रुचि नहीं दिखाते।
3. **समस्या छात्रों की समझ में आ जानी चाहिए (The Problem Must be Intelligible to the Students)** - समस्या छात्रों की समझ में आ जानी चाहिए नहीं तो वे समस्या के समाधान के प्रति अग्रसर नहीं होंगे। ठीक तो यही रहेगा कि कार्य आरम्भ से कुछ पहले समस्या से सम्बन्धित बिन्दुओं पर चर्चा कर लेनी चाहिए।
4. **उपयुक्त सामग्री का चयन (Selection of Appropriate Content Material)** - समस्या के समाधान के लिए उपयुक्त सामग्री का चयन करना बड़ी आवश्यकता है। आयु योग्यता तथा अनुभव के आधार पर उनको पुस्तकों तथा पत्रिकाओं आदि को पढ़ने का सुझाव देना चाहिए। परन्तु छोटी कक्षाओं में सामग्री का निश्चयात्मक विवरण देना होगा। अध्यापक को अपने छात्र को दिखावा करने के लिए बहुत अधिक सामग्री का अध्ययन करने के लिए नही कहना चाहिए। क्योंकि एक तो सामग्री की बहुलता छात्रों का समय नष्ट करेगी दूसरे उब कर वे योजना के प्रति रूचि ही खो बैठेंगे।
5. **क्रियात्मक तथा उपयोगी ज्ञान (Practical and Useful Knowledge)** - समस्या ऐसी हो जिनसे विद्यार्थियों को क्रियाओं तथा उपयोगी ज्ञान प्राप्त है।
6. **शैक्षणिक उपयोगिता (Educational Value)** - समस्या के शैक्षिक उपयोग भी होने चाहिए।
7. **समस्या का स्पष्ट रूप से वर्णन (Problem must be stated in Clear and Definate terms)** - अध्यापक को समस्या का वर्णन स्पष्ट रूप से करना चाहिए इससे वे एक तो इधर-

Scanned with CamScanner

किया जाता है। स्कूली जीवन तथा ब्रह्म जीवन के बीच उचित ढंग से सहसम्बन्ध स्थापित किया जाता है। स्कूलों को सामाजिक जीवन और समाज से अलग नहीं समझा जाना चाहिए। अपितु यह समाज का ही एक आंतरिक भाग है। स्कूल में विद्यार्थी को सामाजिक योगदान के लिए प्रशिक्षण प्रदान किया जाना चाहिए तथा जटिल जीवन की समस्याओं के सुलझाने के योग्य बनाया जाना चाहिए। स्कूल में प्राप्त किया गया ज्ञान उपयोगी व उद्देश्यपूर्ण होना चाहिए। ज्ञान की प्रकृति ऐसी होनी चाहिए कि विद्यार्थी उसे प्राप्त करने में रूचि दिखाए तथा उसे प्राप्त करने के लिए क्रियाशील रहे।

समस्या पद्धति के अर्थ को हम जेम्स एम.ली. (James M.Lee) के शब्दों में इस प्रकार स्पष्ट कर सकते हैं - "समस्या समाधान एक शिक्षण प्रणाली है। जिसके द्वारा शिक्षक तथा विद्यार्थी किसी महत्वपूर्ण शैक्षिक कठिनाई के समाधान या स्पष्टीकरण के लिए सचेत होकर पूर्ण संलग्नता के साथ प्रयास करते हैं। समस्या पद्धति विद्यार्थियों को स्वयं सीखने के लिए तत्पर बनाती है। ऐसा वे अपनी स्वयं की शक्तियों का प्रयोग करके करते हैं।"

समस्या विधि का शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में महत्वपूर्ण स्थान है। इस विधि से विद्यार्थियों में विवेचनात्मक चिंतन, सृजनात्मकता, अभिव्यक्ति, आलोचनात्मक विश्लेषण तथा तार्किक चिंतन का विकास सम्भव होता है।

परिभाषाएँ (Definitions)

समस्या विधि वह शिक्षण है जिसमें शिक्षण कार्य किसी समस्या से सम्बन्धित आयोजित व गठित किया जाए। यह ऐसी क्रियात्मक विधि है। जिसमें विद्यार्थियों के समक्ष एक समस्या प्रस्तुत की जाती है और उन्हें उस समस्या के समाधान की खोज का प्रशिक्षण दिया जाता है। स्किनर (Skinner) के अनुसार समस्या समाधान एक ऐसी रूप रेखा है जिसमें सृजनात्मक चिंतन तथा तर्क होते हैं।

("Problem solving is the framework or pattern with in which creative thinking and reasoning take place.")

गेट्स (Gates) तथा अन्य के अनुसार, "समस्या समाधान शिक्षण का एक रूप है जिसमें उचित प्रत्युत्तर की खोज की जाती है।"

("Problem sovling is a form of teaching in which the appropriate response must be covered.")

सी.वी.गुड (C.V. Good) के अनुसार, "समस्या विधि वह विधि है जिसमें अधिगम को प्रेरित करने के लिए चुनौतिपूर्ण परिस्थितियों का निर्माण किया जाता है। जिसमें समाधान की आवश्यकता होती है। यह एक विशिष्ट प्रक्रिया है जिसके द्वारा छोटी-छोटी सम्बन्धित समस्याओं के मिश्रित समाधान से एक बड़ी समस्या सुलझाई जाती है।"

रिस्क (Risk) के अनुसार, "समस्या समाधान किसी कठिनाई या जटिलता का एक पूर्ण संतोषजनक हल प्राप्त करने के उद्देश्य से किया गया नियोजित कार्य है। इसमें मात्र तथ्यों का संग्रह करना या किसी अधिकृत विद्वान के विचारों की तर्क रहित स्वीकृति निहित नहीं हे वरना यह विचारशील चिंतन की विधि है।"

("The problem method is a planed attack upon a difficulty or perplexity for the purpose of finding a satisfactory solution. This involves the process of reflecting thinking not merely the cumulation of facts or the ... of ideas which

... one in authority given us.")

इस प्रकार समस्या उस परिस्थिति को कहा जाता है जिसके लिए मानव के पास पहले से तैयार ... समाधान नहीं होता। इस प्रकार की परिस्थितियों में मनुष्य को समस्या का समाधान ढूंढने के लिए ... करना पड़ता है। इस विधि में पाठ्यक्रम इस प्रकार संगठित किया जाता है कि विद्यार्थी के समक्ष ... वास्तविक समस्या उत्पन्न हो जाए। वाणिज्य शिक्षण में समाज से सम्बन्धित विभिन्न समस्याएं ... विद्यार्थियों के समक्ष प्रस्तुत की जा सकती है। अब प्रश्न यह उठता है कि किस प्रकार की समस्याएं प्रस्तुत की जाएं।

समस्या समाधान की विभिन्न विशेषताएं

Main Characteristics of Problem Solving)

समस्या समाधान के आवश्यक तत्व निम्नलिखित हैं -

1. **समस्या के प्रति अपनत्व की भावना (Sence of Belonging Towards the Problem) -** एक बढ़िया समस्या की मुख्य विशेषता यह है कि छात्र उस समस्या की मुख्य विशेषता यह है कि छात्र उस समस्या को अपनी समस्या समझे। ऐसा होने पर ही उनके मन में समस्या का समाधान ढूंढने की रूचि और समस्या के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न होगी। यदि कोई समस्या छात्रों की किसी तत्तकलीन (Immediate) समस्या का समाधान करती है तो ऐसी समस्या के प्रति उनके मन में अपनत्व की भावना जागृत होगी।
2. **समस्या चिंतन को उभारने वाली हो (A problem must stimulate the thinking power of the students) -** कई बार अध्यापक कक्षा कक्ष में छात्रों के सामने ऐसी समस्याएँ प्रस्तुत कर देते हैं जो उनकी आयु और योग्यताओं से बहुत ऊपर है। इस प्रकार की समस्याओं में छात्र कभी रूचि नहीं दिखाते।
3. **समस्या छात्रों की समझ में आ जानी चाहिए (The Problem Must be Intelligible to the Students) -** समस्या छात्रों की समझ में आ जानी चाहिए नहीं तो वे समस्या के समाधान के प्रति अग्रसर नहीं होंगे। ठीक तो यही रहेगा कि कार्य आरम्भ से कुछ पहले समस्या से सम्बन्धित बिन्दुओं पर चर्चा कर लेनी चाहिए।
4. **उपयुक्त सामग्री का चयन (Selection of Appropriate Content Material) -** समस्या के समाधान के लिए उपयुक्त सामग्री का चयन करना बड़ी आवश्यकता है। आयु योग्यता तथा अनुभ... के आधार पर उनको पुस्तकों तथा पत्रिकाओं आदि को पढ़ने का सुझाव देना चाहिए। परन्तु छोटे... कक्षाओं में सामग्री का निश्चयात्मक विवरण देना होगा। अध्यापक को अपने छात्र को दिखावा कर... के लिए बहुत अधिक सामग्री का अध्ययन करने के लिए नही कहना चाहिए। क्योंकि एक तो साम... की बहुलता छात्रों का समय नष्ट करेगी दूसरे उब कर वे योजना के प्रति रूचि ही खो बैठेंगे
5. **क्रियात्मक तथा उपयोगी ज्ञान (Practical and Useful Knowledge) -** समस्या ऐसी ... जिनसे विद्यार्थियों को क्रियाओं तथा उपयोगी ज्ञान प्राप्त है।
6. **शैक्षणिक उपयोगिता (Educational Value) -** समस्या के शैक्षिक उपयोग भी होने चाहिए।
7. **समस्या का स्पष्ट रूप से वर्णन (Problem must be stated in Clear and Define... terms) -** अध्यापक को समस्या का वर्णन स्पष्ट रूप से करना चाहिए इससे वे एक तो इ...

Scanned with CamScanner

उधर नहीं भटकेंगे। दूसरा उन्हें समस्या का समाधान ढूँढने में सुगमता रहेगी।

8. **समाधान लेखाबद्ध कर लिया जाना चाहिए (The Solution of the Problem must be Put in Writing)** - समस्या के समाधान को लेखबद्ध कर लिया जाना उचित है। सभी छात्र अपना अपना लिखित समाधान सबको पढ़ कर सुनाए। उस पर वाद-विवाद करे। तथा तब विचार विमर्श का निर्णय ले।

वाणिज्य में समस्या समाधान विधि की प्रक्रिया (Process of Problem Solving Method)

वाणिज्य में समस्या समाधान विधि की प्रक्रिया को हम निम्नलिखित प्रकार से समझ सकते हैं -

1. **प्रस्तुतिकरण (Presentation)** - सबसे पहले अध्यापक छात्रों के सामने समस्या सरल व स्पष्ट भाषा में प्रस्तुत करता है। ताकि विद्यार्थियों की उस समस्या के सम्बन्ध में रूचि बन पाए। जैसे - भारत में निर्धनता की समस्या।

2. **समस्या का परिभाषीकरण (Define the Problem)** - इस सोपान के अंतर्गत समस्या को उचित ढंग से परिभाषित किया जाता है जैसे उपरोक्त समस्या के अनुसार भारत में निर्धनता रेखा क्या है?

3. **समस्या का स्वरूप (Picture of Problem)** - इस सोपान के अंतर्गत सम्बन्धित समस्या के आंकड़ों के आधार पर स्वरूप की जानकारी ली जाती है जैसे - उपरोक्त समस्या के अंतर्गत हम प्रति व्यक्ति आय, प्रति व्यक्ति उपभोग आदि के आधार पर निर्धनता रेखा के नीचे रहने वाले व्यक्तियों के बारे में जानकारी लेते हैं।

4. **समस्या के कारण (Causes of Problem)** - इस सोपान में वर्तमान में समस्याओं कारणों का पता लगाया जाता है। भारत के निर्धनता के कारणों में प्रतिव्यक्ति आय का कम होना, अधिक जनसंख्या, अशिक्षा, कीमतों में वृद्धि व बेरोज़गारी आदि बिन्दुओं को निर्धनता के कारणों के रूप में उभारा जा सकता है।

5. **समस्या समाधान हेतु वैकल्पिक हल (Alternative Solution for Problem Solving)** - इस सोपान में छात्रों से समस्या के समाधान हेतु उपायों को आमंत्रित किया जाता है। उपरोक्त समस्या के सम्बन्ध में कई उपाय सुझाए जा सकते हैं। जैसे जनसंख्या नियंत्रण, तेजी से आर्थिक विकास शिक्षा के प्रबंध व रोज़गार के अधिक अवसर उपलब्ध करवाना चाहिए।

6. **वैकल्पिक हलों की जांच (Testing of Alternative Solution)** - इस सोपान के अंतर्गत समस्या समाधान के विकल्पों की जांच करके सही विकल्प पर (✓) का निशान लगा दिया जाता है। उपरोक्त समस्या के संदर्भ में छात्रों को शिक्षक द्वारा सहायता प्रदान को जाती है।

7. **लेखा तैयार करना (Prepare Entries)** - इस सोपान के अंतर्गत प्रत्येक छात्र द्वारा समस्या के प्रति प्रस्तुतिकरण से समाधान प्राप्ति तक का लेखा बना लिया जाता है ताकि उनके द्वारा प्राप्त किया ज्ञान स्थायी रहे तथा विद्यार्थी इसका अपने व्यवहारिक जीवन में उचित प्रयोग कर सके।

समस्या समाधान विधि के गुण (Merits of Problem-Solving Methods)

1. **लक्ष्य केन्द्रित विधि (Goal Oriented Method)** - समस्या विधि में विद्यार्थी को एक समस्या

प्रदान की जाती है। तथा वह स्वाध्ययन, पूर्वज्ञान, अनुभव तथा शिक्षक के पथ प्रदर्शन में उसका समाधान ढूँढता है अतः यह एक लक्ष्य केन्द्रित विधि है।

2. **जीवन की समस्याओं को सुलझाने में सहायक (Helpful in Solving the Problems in Life)** - मानव अस्तित्व के लिए जीवन की समस्याओं को सुलझाना आवश्यक है समस्या विधि के अंतर्गत विद्यार्थी जीवन में आने वाली समस्याओं का समाधान करने के लिए चिंतन, निर्णय लेने, मूल्यांकन करने तुलना करने उत्तम का चयन करने योग्य बन जाता है। इससे विद्यार्थी में रूचि व उत्सुकता जागृत होती है कि इसका समाधान कैसे किया जाए।

3. **विभिन्न गुणों का विकास (Development of Various Qualities)** - समस्या विधि के अंतर्गत समाधान ढूँढने के लिए विद्यार्थी स्वयं ही प्रयत्न करता है। अतः उसमें स्वतः ही ऐसे गुणों का विकास हो जाता है जो आगे चलकर उसके जीवन में उपयोगी सिद्ध होते हैं। इस प्रकार के प्रमुख गुण हैं - धैर्य, उत्तरदायित्व की भावना, व्यवहारिकता, व्यापक मानसिकता, गंभीरता, दूरदर्शिता आदि।

4. **स्वाध्याय की आदत का निर्माण (Formulation of Habits of Self-Study)** - समस्या विधि स्वाध्याय की आदत का निर्माण करने में महत्वपूर्ण योगदान देती है। इस विधि के अंतर्गत विद्यार्थी को स्वयं ही समस्या का समाधान ढूँढना पड़ता है। और उसके लिए वह स्वाध्याय करता है। जो धीरे-धीरे आदत के रूप में परिवर्तित हो जाता है और वाणिज्य विषय के लिए इस आदत का विकास होना आवश्यक है।

5. **वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास (Development of Scientific Attitude)** - इस विधि के अंतर्गत प्राप्त किया गया ज्ञान पुस्तकीय ज्ञान पर आधारित नहीं होता। विद्यार्थी समस्या का समाधान क्रमबद्ध ढँग से प्राप्त करते हैं और धीरे-धीरे उनके वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित हो जाता है।

6. **शिक्षक व शिक्षार्थी में निकट सम्पर्क (Close Conted between Student and Teacher)** - शिक्षण अधिगम की प्रभावशीलता शिक्षक व शिक्षार्थी के बीच सम्बन्धों पर निर्भर करती है। इस विधि में विद्यार्थी निःसंकोच अपनी संकाएं अध्यापक के समक्ष रख सकते हैं। तथा अध्यापक उनकी शंकाओं को समझकर उन्हें उचित विकास मार्ग की ओर अग्रसर कर सकता है।

7. **तर्कसंगत निर्णय लेने में सहायक (Helpful Intaking Logical Discussions)** - समस्या विधि से विद्यार्थी यह समझ जाते हैं कि प्रत्येक समस्या का समाधान तर्कसंगत निर्णय में निहित होता है और तर्कसंगत निर्णय के लिए समस्या के हर पहलू का क्रमबद्ध रूप से विश्लेषण करना आवश्यक होता है।

8. **विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करने में सहायक (Helpful in Stimulating Pupils)** - जब विद्यार्थियों के समक्ष चुनौतिपूर्ण परिस्थितियों के साथ समस्याएं प्रस्तुत की जाती है तो उनमें प्राकृतिक ढंग से उनके समाधान ढूँढने के लिए प्रेरणा विकसित हो जाती है और वह हर सम्भव प्रयत्न करने के लिए प्रेरित हो जाते हैं कि उस समस्या का समाधान ढूँढा जाए।

समस्या विधि की हानियाँ एवम् सीमाएँ (Demerits and Limitation of Problem Method)

समस्या समाधान एक उपयोगी विधि है परन्तु इतनी उपयोगिताओं के बावजूद भी इसकी कुछ अपनी

Scanned with CamScanner

हानियाँ व सीमाएं भी हैं। जो निम्नलिखित हैं -

1. **अनुभवी अध्यापकों की कमी (Lack of Experienced Teachers)** - वाणिज्य में समस्या विधि के प्रयोग के लिए एक योग्य अनुभवी व कुशल अध्यापक की आवश्यकता होती है जो सावधानीपूर्वक समस्या का चयन कर सके तथा आवश्यकतानुसार विद्यार्थियों का उपयुक्त पथ प्रदर्शन कर सके। परन्तु वास्तव में ऐसे कुशल व अनुभवी अध्यापकों की कमी पाई जाती है।
2. **संतोषजनक परिणामों का अभाव (Lack of Satisfactory Results)** - समस्या विधि से प्राय: संतोषजनक परिणाम प्राप्त नहीं हो पाते इसका कारण यह है कि विद्यार्थी का मस्तिष्क इतना विकसित नहीं हुआ होता और न ही उन्हें इतना अनुभव प्राप्त होता है कि वे समस्या का समाधान स्वप्रयत्नों से प्राप्त कर सके। उसमें कई त्रुटियाँ रह जाती है। कभी-कभी उसे लगने लगता है कि वह व्यर्थ है। समय नष्ट कर रहा है और वह निराश हो जाता है।
3. **समस्या का चयन एक कठिन कार्य (Problem Selection is a Difficult Task)** - वाणिज्य शिक्षण में समस्या विधि के प्रयोग की सबसे बड़ी सीमा यही है कि समस्याओं का चयन करना बहुत ही कठिन कार्य है और प्रत्येक बालक व शिक्षक में इतनी योग्यता व कुशलता नहीं होती है कि वह सही समस्या का चयन कर सके।
4. **अधिक समय का उपयोग (Use of Much Time)** - समस्या विधि द्वारा शिक्षण को आयोजित व समन्वित करने में बहुत समय लगता है। सबसे पहले तो विधि को तैयारी में अध्यापक को अत्यधिक समय लगता है और इसके बाद कक्षा में प्रत्येक विद्यार्थी की सक्रिय संलग्नता प्राप्त करने के लिए काफ़ी समय की आवश्यकता पड़ती है। अत्यधिक समय लगने के कारण पाठ्यक्रम को निश्चित समय पर समाप्त करना असम्भव हो जाता है।
5. **वांछित सामग्री की व्यवस्था करना कठिन (Difficult to Arrange Desired Material)** - समस्या विधि की उपयोगिता तभी सम्भव है जब प्रस्तुत समस्या के समाधान के लिए वांछित सामग्री उपलब्ध है। परन्तु वाणिज्य का क्षेत्र इतना विस्तृत है कि वांछित सामग्री की व्यवस्था करना कभी-कभी अत्यंत कठिन हो जाता है।
6. **निर्मित समस्या तथा वास्तविक जीवन में अन्तर (Difference between Created Problem and Real Life)** - प्राय: कक्षा में निर्मित समस्याओं तथा वास्तविक जीवन की समस्याओं में अंतर पाया जाता है। इस कारण विद्यार्थी व्यवहारिक ज्ञान प्राप्त करने में असफल व असमर्थ रह जाते हैं।
7. **नीरसता की सम्भावना (Possibility of Monotony)** - इस विधि का अगर अत्यधिक प्रयोग किया जाए तो समस्या की समाधान प्रक्रिया कई दिनों तक चलती रहती है तथा अधिगम में नीरसता आ जाती है और शिक्षण अधिगम प्रक्रिया अरूचिकर हो जाती है।
8. **क्रियाओं की उपेक्षा (Neglect Activities)** - समस्या विधि समाधान के बौद्धिक पक्ष पर अधिक बल दिया जाता है। समस्या समाधान प्रक्रिया में विद्यार्थी चिंतन, विचार विमर्श, विश्लेषण तथा संक्षलेषण करते हुए निष्कर्ष पर पहुँचते हैं और यह सब बौद्धिक क्रियाएं हैं। इस कारण सामूहिक क्रियाओं की उपेक्षा हो जाती है जो व्यक्तित्व के संतुलित विकास में बाधक सिद्ध हो सकती है।

अत: समस्या विधि उपयुक्त होने के बाद भी अत्यंत उपयोगी है। इन सीमाओं को दूर किया

Scanned with CamScanner

कता है। वांछित सामग्री की व्यवस्था की जा सकती है। अध्यापक शिक्षण कौशलों का प्रयोग करते
स विधि को अत्यंत रूचिपूर्ण व क्रियापूर्ण बना सकता है इसलिए अध्यापक को चाहिए कि वह कुछ
षयों के लिए इस विधि का अवश्य प्रयोग करें।

ज्य में समस्या के उदाहरण

ंडारण कीमतों को स्थिरता में सहायक।

समन्वय प्रबंधन की आवश्यकता।

ारत में सार्वजनिक उद्योगों की आवश्यकता।

वित्त व्यवसाय का जीवनदायी है।

Scanned with CamScanner

Describe in detail the Personalised System of Instruction (

उत्तर - उद्गम एवं विकास (Origin and Growth)

वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली को प्रकाश में लाने का श्रेय प्रोफेसर फ्रेड एस.केलर (Fred S. Ke
जाता है। जिन्होंने जे.जी.शेरमन (J.G.Sherman) जैसे सहयोगियों के साथ मिलकर मार्च 19
नई अनुदेशन प्रणाली को जन्म देने का निर्णय लिया और इसे कोलम्बिआ विश्वविद्यालय में
विषय में शुरू किये गये कार्यक्रम के अनुदेशन के प्रयोग में लाने की पहल की। प्रोफेसर केलर
में ही वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली को केलर प्लान (Keller Plan) का भी नाम दे दिया जा

अब हम अगर इसके उद्गम के स्त्रोतों की तलाश करें तो हमें यह जानकारी उ
सकती है कि वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली के प्रतिपादक 1950 में हारवर्ड विश्वविद्यालय के प्रो
एफ स्किनर द्वारा विकसित अभिक्रमित अनुदेशन (Programmed Instruction) नाम

Scanned with CamScanner

प्रचलित अनुदेशन प्रणाली से काफी अधिक प्रभावित थे। वे वैयक्तिक अनुदेशन में प्रयुक्त इस प्रणाली स्वरूप तथा कार्यक्षेत्र में कुछ विस्तार कर उसे एक ऐसा रूप देना चाहते थे कि उसे उच्चतर कक्षाओं उच्चकोटि के अधिगम हेतु भलीभांति प्रयोग में लाया जा सके। दूसरे शब्दों में एक अधिक उन्नत प की वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली की उन्हें तलाश थी और इसके लिये वह एक ऐसी प्रणाली चाहते जो निम्न विशेषताओं से युक्त हो।

. प्रचलित अभिक्रमित अनुदेशन प्रणाली की तुलना में इसमें अधिगमकर्त्ता के सामने विषय सामग्री कुछ अधिक बड़े पदों (Frame) में प्रस्तुत की जा सके।

. शिक्षक-अधिगम परिस्थितियों को देखते हुए यह अधिक लचीलापन और अनुकूलन क्षमता का प्रदर्शन कर सके।

. शिक्षक अधिगम प्रक्रिया में इसके माध्यम से अधिक अपनापन तथा सामाजिकता लाई जा सके।

. शिक्षक की भूमिका को केवल सूचना प्रदान करने वाले स्त्रोत के रूप में न समझा जाए बल्कि सभी विद्यार्थियों के लिए अधिगम प्रक्रियाओं के प्रबन्धक तथा सुविधा प्रदान कर्त्ता (Manager and facilitator) के रूप में जाना जाये।

इन सब आवश्यकताओं को ध्यान रखकर केलर और उसके सहयोगी विभिन्न प्रकार के प्रयोगों तथा अनुसंधान कार्य में रत हो गये और परिणामस्वरूप वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली नामक एक नवीन अनुदेशन प्रणाली को उन्हीं के प्रयत्नों से जन्म मिला।

अर्थ एवं परिभाषा

(Meaning and Definition)

वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली जैसा कि इसके नाम से विदित होता है एक ऐसी अनुदेशन प्रणाली के रूप में जानी जा सकती है जिसमें विशुद्ध व्यक्तिगत या वैयक्तिक दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए अनुदेशन का नियोजन तथा क्रियान्वयन किया जाता हो। इस प्रणाली में जो व्यक्ति अनुदेशन ग्रहण करता है उसी की केन्द्रिय भूमिका रहती है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में जो कुछ होता है उसमें उसी का बोलबाला रहता है। किसी भी विद्यार्थी या अधिगम कर्त्ता विशेष की आवश्यकताओं, रूचिओं तथा योग्यताओं के परिप्रेक्ष्य में ही उनके अनुदेशन का नियोजन और क्रियान्वयन किया जाता है। वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली की इस अवधारणा से और अच्छी तरह परिचित होने के लिये यहां हम इस सम्बंध में कुछ विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं को उद्धृत करना चाहेंगे।

ग्रीन - "वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली को यह नाम इसलिये दिया गया है क्योंकि इसमें सभी विद्यार्थियों को किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा व्यक्तिगत स्तर पर आमने सामने होकर अनुदेशन प्रदान किया जाता है चाहे कक्षा में विद्यार्थियों की संख्या 100 ही क्यों न हो। यह जैसी कि अधिकांश महाविद्यालयों के कोर्सों की जरूरत होती है, विद्यार्थियों को विषय सम्बंधी ज्ञान तथा कौशलों के समुचित अर्जन में विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध होती है। इस प्रणाली को उपयोग में लाने वाला अध्यापक अपने विद्यार्थियों से विशेष सामग्री को अच्छी तरह अधिगम करने की अपेक्षा करता है और उनमें स्पर्धा को बढ़ावा न देते हुए उनको उनके काम के हिसाब से अधिक से अधिक अच्छे ग्रेड देने को तैयार रहता है। इस लक्ष्य की पूर्ति मानव पूंजी, स्थान और उपकरणों की सामान्य सीमा के अन्तर्गत की जा सके इस उत्तरदायित्व को भी वह सहर्ष स्वीकार करता है।"

Scanned with CamScanner

नेपर - "वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली मूल ... स्वामित्व अधि... का प्रतिनिधित्व करती है जिसमे सभी विद्यार्थी विशेष रूप से संरचित पाठ्यक्रम इकाइयों पर स्वतन्त्र रूप से कार्य करते है। प्रत्येक इकाई हेतु उद्देश्य निर्धारित रहते हैं तथा क्या पढ़ना है और किस प्रकार से समस्यायें हल करनी है इसके लिये उचित निर्देश प्रदान किये जाते हैं। जब कोई विद्यार्थी यह अनुभव करता हैं कि उसने विषय वस्तु पर स्वामित्व अर्जित कर लिया है तो फिर इसे इकाई से सम्बन्धित ... परीक्षण से गुजरना पड़ता है। इस परीक्षण में पास हो जाने पर ही उसे आगे की इकाई पर कार्य करने दिया जाता है। इन इकाई परीक्षणों के अंकन का कार्य प्रोक्टर या विद्यार्थी पर्यवेक्षक के द्वारा तत्काल ही किया जाता रहता है।"

इन दोनों परिभाषाओं का मनन करने के पश्चात वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली की प्रकृति और विशेषताओं के सम्बंध में निम्न निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं।

1. वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली में विद्यार्थी विशेष को उसकी आवश्यकताओं, योग्यताओं और रुचियों को ध्यान में रखते हुये व्यक्तिगत रूप से अनुदेशन प्राप्त कराया जाता है।
2. इसमें सभी अधिगमकर्त्ताओं को अपने अपने ढंग से अपनी अपनी गति से अधिगम प्राप्त करने की पूरी स्वतन्त्रता रहती है।
3. इसमें विषय सामग्री को अच्छी तरह कदाचित अपेक्षाकृत कुछ बड़ी इकाइयों में विभक्त किया जाता है तथा प्रत्येक विद्यार्थी को इनसे सम्बंधित अनुदेशन प्राप्त करने के लिये उचित निर्देशन तथा सहायक सामग्री आदि की पूरी व्यवस्था की जाती है। सभी विद्यार्थी अच्छी तरह प्रशिक्षित एवं ... प्रोक्टरो यानी विद्यार्थी पर्यवेक्षकों की निगरानी तथा निर्देशन में अपना अपना कार्य करते रहते।
4. सभी विद्यार्थियों को विषय सामग्री के अधिगम में पूर्ण स्वामित्व अर्जित करना होता है परन्तु ... एक विद्यार्थी की उपलब्धि या निष्पति की दूसरे से तुलना नहीं की जाती। जब एक विद्यार्थी ... एक इकाई की विषय वस्तु में अधिगम में स्वामित्व अर्जित कर लेता है तो उसे इकाई परीक्षण से ... होता है। और उसमें उत्तीर्ण होने के बाद ही उसे दूसरी इकाई पर कार्य करने की अनुमति मिलती है। परन्तु ऐसा करने में उसे अपने साथी विद्यार्थियों को इन्तजार नहीं करना पड़ता।
5. इस प्रणाली से अनुदेशन ग्रहण करने में सारी जिम्मेदारी एक तरह से विद्यार्थी पर ही रहती है इसलिये विद्यार्थी में इस प्रकार की जिम्मेदारी उठाने से सम्बन्धित परिपक्वता आना इस प्रणाली की सफलता हेतु काफी जरूरी होता है। यही कारण है कि विद्यालय स्तर की अपेक्षा महाविद्यालय स्तर के शिक्षण अधिगम हेतु इसे काम में लाना ज्यादा ठीक रहता है।
6. वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली सामान्य कक्षा व्यवस्था या संसाधनों के अन्तर्गत ही काम में लाई जा सकती है। अधिक पर्यवेक्षकों या निर्देशकों की मांग (जो कि व्यक्तिगत रूप से अलग-अलग रूप से अनुदेशन तथा पर्यवेक्षण हेतु आवश्यक होती है।) योग्य विद्यार्थियों की प्रशिक्षित कर उन्हें इस प्रकार का उत्तरदायित्व सौंप देने से पूरी की जा सकती है। इस प्रकार के प्रोक्टर उन्हें ही बनाया जाता है जो विषय-विशेष में स्वामित्व अर्जित कर चुके होते हैं।

इस प्रकार निष्कर्ष रूप में अब यह कहा जा सकता है कि वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली से तात्पर्य अनुदेशन की उस प्रणाली से है जिसके अन्तर्गत किसी एक अध्यापक द्वारा कुछ योग्य, ... एवं प्रशिक्षित विद्यार्थियों (जिन्हें प्रोक्टर कहा जाता है) के सहयोग से सभी विद्यार्थियों को व्यक्तिगत रूप से

पर इस प्रकार का वैयक्तिक अनुदेशन प्रदान किया जा सके जिसके माध्यम से वे सभी अपनी अपनी अधिगम गति से आगे बढ़ते हुये विषय सामग्री के अधिगम में ठीक प्रकार स्वामित्व अर्जित करने में सफल हो सकें।

वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली के उद्देश्य
(Objective of Personalized System of Instruction)

वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली के उद्देश्य को संक्षेप में निम्न प्रकार लिपि बद्ध किया जा सकता है।

1. शिक्षण और विद्यार्थियों के बीच अच्छे व्यक्तिगत एवं सामाजिक सम्बन्धों की स्थापना करने में सहायता करना।
2. अलग-अलग आमने सामने होकर सभी विद्यार्थियों पर व्यक्तिगत रूप से भली भाँति ध्यान देना।
3. स्वगति से आगे बढ़ते हुये सभी विद्यार्थियों को विषयवस्तु के अधिगम में स्वामित्व अर्जित करने में सहायता करना।
4. विद्यार्थियों की अधिकाधिक तथा तत्काल प्रतिपुष्टि उपलब्ध कराने का प्रबन्ध करना।
5. मात्र व्याख्यान विधि पर आश्रित रहने के बजाय विद्यार्थियों को सूचना प्राप्ति हेतु बहु माध्यम उपागम (Multimedia approach) की उपलब्धि का प्रबन्ध करना।
6. शिक्षक की भूमिका को मात्र सूचना प्रदान करने वाले व्यक्ति से विद्यार्थियों के अधिगम के प्रबन्ध कर्त्ता तथा सुविधा प्रदान कर्त्ता के रूप में बदलना।
7. शिक्षक को अनुदेशन कार्यक्रम तथा कार्यप्रणाली में सार्थक संशोधन करने हेतु उचित पृष्ठपोषण प्रदान करना।

वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली के आधारभूत तत्व तथा विशेषताएं
(Fundamental Elements and Characteristics of PSI)

केलर प्लान या वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली को उसके निम्न आधारभूत तत्वों तथा विशेषताओं से युक्त पाया जाता है।

1. **व्यक्तिगतत या वैयक्तिकता की उपस्थिति (Presence of Personal element) :-** वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली में अनुदेशन को अधिक से अधिक वैयक्तिकता तथा व्यक्तिगतता प्रदान करने की कोशिश की जाती है। एक एक विद्यार्थी को एक एक अनुदेशक (प्रोक्टरों की मदद से यह अच्छी तरह से संभव हो जाता है।) के निर्देशन तथा पर्यवेक्षण में अनुदेशन उपलब्ध कराना इस अनुदेशन प्रणाली में ही संभव हो पाता है। दूसरी परम्परागम अनुदेशन प्रणालियों की तुलना में इस तरह इस प्रणाली में शिक्षक और विद्यार्थियों के बीच पारस्परिक व्यक्तिगत तथा सामाजिक सम्बन्धों को अच्छी तरह स्थापित करने में पूरा-पूरा ध्यान दिया जाता है।
2. **स्वामित्व अधिगम (Mastery Learning) -** चाहे किसी भी विद्यार्थी का निष्पत्ति स्तर कक्षा में कैसा भी क्यों न हो यहां यह पूरा ध्यान रखा जाता है कि सभी विद्यार्थी दूसरों से स्पर्धा करते हुये विषय विशेष के अधिगम में स्वामित्व अर्जित करें। किसी एक इकाई पर स्वामित्व अर्जित होने पर ही विद्यार्थी को दूसरी इकाई पर कार्य करने की अनुमति दी जाती है।
3. **स्वगति से आगे बढ़ना (Self pacing) -** यह प्रणाली सभी विद्यार्थियों को अपनी-अपनी योग्यता

Scanned with CamScanner

रुचि, सामर्थ तथा पूर्व अर्जित अधिगमों के आधार पर अपनी गति से प्रस्तुत विषय सामग्री पर स्वामित्व अर्जित करने के सिद्धान्त का अनुसरण करती है। जो ऐसा कर लेता है वह आगे की इकाइयों की विषय सामग्री के अधिगम पथ पर आगे बढ़ जाता है। किसी को भी अधिगम हेतु अपने दूसरे साथियों का इन्तजार नहीं करना पड़ता।

4. **लिखित कार्य पर आवश्यक बल (Necessary emphasis on written work) -** वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली में परम्परागत अनुदेशन प्रणालियों की तुलना में लिखित कार्य पर बहुत बल दिया जाता है। विद्यार्थियों के सामने जो भी विषय वस्तु अधिगम हेतु रखी जाती है वह लिखित रूप में ही होती है। उन्हें आवश्यक निर्देश भी लिखित रूप में दिये जाते हैं। अध्ययन सामग्री तथा स्व-अध्ययन निर्देशिका भी उन्हें लिखित रूप में ही उपलब्ध रहती है। उन्हें अपने स्वामित्व अधिगम अर्जन के परीक्षण हेतु इकाई परीक्षण भी लिखित रूप में उपलब्ध होते हैं। जिनके उत्तर भी उन्हें लिखित रूप में ही देने होते हैं। इस तरह इस प्रणाली में मौखिक की अपेक्षा लिखित कार्य पर ही सब तरह से ज्यादा से ज्यादा जोर दिया जाता है।

5. **व्याख्यान या मौखिक संप्रेषण का कम से कम प्रयोग (Limiting the use of lecture or oral communication) :-** वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली में ऐसे सभी प्रयत्न किये जाते हैं कि व्याख्यान या मौखिक संप्रेषण का अनुदेशन में कम से कम प्रयोग हो। व्याख्यान, प्रदर्शन, मौखिक संप्रेषण का उपयोग तभी किया जाता है जबकि इसके द्वारा एक सफल अनुदेशन, पथप्रदर्शन तथा अभिप्रेरणा प्रदान करने वाले स्त्रोत की भूमिका निभाने का अवसर मिले मात्र सूचना प्रदान करने का नहीं। इसके अतिरिक्त यहाँ बहु माध्यम उपागम का अधिक से अधिक उपयोग करने हेतु प्रोत्साहित किया जाता है और परिणाम स्वरूप विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार के सूचना या ज्ञान स्त्रोतों -दृश्य, श्रव्य सामग्री तथा उपकरणों का प्रयोग करने की सुविधा इस प्रणाली में मिलती है और उनकी मौखिक स्त्रोतों पर आश्रितता समाप्त सी ही हो जाती है।

6. **उचित पुनर्बलन का प्रावधान (Provision of appropriate reinforce-ment) -** वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली में सभी विद्यार्थियों को उनके अधिगम अर्जन में अधिक से अधिक और तत्काल पुनर्बलन प्रदान करने की भरपूर चेष्टा की जाती है। जैसे ही कोई विद्यार्थी किसी इकाई विशेष में स्वामित्व अधिगम अर्जित करता है और इकाई परीक्षण से गुजरता है तो इस परीक्षण का अंकन तुरन्त ही छात्र पर्यवेक्षकों के द्वारा कर दिया जाता है और इस प्रकार की तत्काल प्रतिपुष्टि से उन्हें अपने अधिगम पथ पर आगे बढ़ने हेतु पर्याप्त पुनर्बलन प्राप्त होता रहता है।

7. **प्रोक्टरों या छात्र पर्यवेक्षकों का उपयोग (Use of Procters) –** वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली की सबसे बड़ी विशेषता व्यक्तिगत ध्यान देने, विद्यार्थियों के अधिगम कार्य का पर्यवेक्षण करने, परीक्षा लेने, सही समय पर आवश्यक परामर्श एवं निर्देशन देने के लिये सभी समय, सभी विद्यार्थियों के समक्ष अलग-अलग रूप से उपस्थित रहने वाले छात्र पर्यवेक्षकों (Proctors) में निहित रहती है। जो विद्यार्थी किसी विषय विशेष पर अच्छी तरह स्वामित्व अर्जित कर लेते हैं ऐसे योग्य, तथा सामर्थवान विद्यार्थियों को अपेक्षित प्रशिक्षण देकर छात्र पर्यवेक्षक या मार्गदशक की भूमिका निभाने के लिये तैयार करना इस प्रणाली की बहुत ही विशिष्ट विशेषता है। इसके उपयोग से ही वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली को अपने उद्देश्य पूर्ति में ...

8. **अपव्यय एवं अवरोधन की समस्या हल करना (Reducing the problem of wastage and stagnation) -** वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली के पीछे यह अवधारणा कार्य करती है कि अनुदेशन के माध्यम से सभी छात्रों की निष्पति तथा उपलब्धि को स्वामित्व स्तर तक पहुँचाया जाए चाहे इसके लिये व्यक्तिगत स्तर पर कितना ही समय तथा शक्ति अधिगम कर्ता को लगानी पड़े और इस तरह आंशिक ज्ञान प्राप्त करते रहने अथवा असफल हो जाने पर दुबारा उसी कक्षा में पढ़ाई करने तथा बार-बार परीक्षा देते रहने में एक परम्परागत अनुदेशन प्रणाली में समय, साधनों और शक्ति का व्यर्थ में ही जो अपव्यय और अवरोधन होता है उससे बचा जा सके। वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली में यह सब कुछ संभव हो जाता है क्योंकि यहाँ किसी भी विद्यार्थी को अपने प्रयासों से स्वामित्व स्तर तक पहुँचने के बाद आगे अपनी गति से अधिगम करने का अवसर बराबर मिलता रहता है। उसे किसी अपने साथी की सफलता तथा असफलता के परिणामस्वरूप व्यर्थ में ही इंतजार कर अपना समय बर्बाद नहीं करना पड़ता और न असफल हो जाने पर पूरे साल की बर्बादी का शिकार होना पड़ता है। इस तरह अनावश्यक अपव्यय एवं अवरोधन की समस्या से मुक्ति दिलाने में वैयक्तिक अनुदेशन प्रभावी का काफी महत्वपूर्ण सहयोग रहता है।

9. **अध्यापक की भूमिका (Role of the teacher) -** वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली परम्परागत अनुदेशन तकनीकों की तुलना में अध्यापक से बिल्कुल एक नई भूमिका की अपेक्षा करती है। यहाँ अध्यापक मात्र उपदेशक, प्रवक्ता या सूचना प्रेषक नहीं रह सकता और न उसकी भूमिका समूह शिक्षक की होती है यहाँ उसे व्यक्तिगत तौर पर सभी विद्यार्थियों की वैयक्तिकता का ध्यान रखकर अलग अलग रूप में अनुदेशन व्यवस्था करनी होती है। उसे विद्यार्थियों को वे सभी शिक्षण अधिगम परिस्थितियां, साधन तथा सुविधायें प्रदान करनी होती है। जो उनमें वैयक्तिक रूप से अपनी अपनी गति से विषय वस्तु पर स्वामित्व स्थापित करने में मदद करें। अतः अध्यापक को यहाँ काफी कुछ हटकर एक सफल निर्देशक, मार्गदर्शक, प्रबन्ध कर्ता तथा सुविधायें प्रदान कर्ता (Facilitator) की भूमिकायें निभानी पड़ती है। तथा विद्यार्थियों से व्यक्तिगत एवं सामाजिक रूप से सहयोग करके उनको अभिप्रेरित करते हुये अपने अपने ढंग से अधिगम पथ पर चलते रहने में पूरा पूरा साथ निभाना पड़ता है। इस तरह वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली में शिक्षक की भूमिका और उसके उत्तरदायित्वों का क्षेत्र दोनों ही काफी बदले और महत्वपूर्ण नजर आते हैं।

वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली की कार्य प्रणाली

प्रश्न उठता है कि कक्षा शिक्षण परिस्थितियों में वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली को कैसे काम में लाये जाता है? इस कार्य हेतु सामान्यतया निम्न प्रकार आगे बढ़ना ठीक रहता है।

1. सबसे पहले विषय विशेष के सिलेबस में दी गई विषयवस्तु या प्रकरणों को उचित इकाइयों में विभक्त कर लेना चाहिये। अभिक्रमित अनुदेशन के पदों या फ्रेमों इकाइयों का आकार और क्षेत्र कुल अधिक व्यापक रहे। इस बात की ओर पूरा ध्यान रहना चाहिये।
2. इकाई विशेष के अधिगम से सम्बन्धित उद्देश्यों को अब पूरी तरह निश्चित रूप में व्यावहारिक शब्दावली में व्यक्त कर विद्यार्थियों के सामने रखा जाना चाहिये। उन्हें अधिगम अर्जन सहायता प्रदान करने हेतु जो भी शिक्षण अधिगम परिस्थितियों, अध्ययन सामग्री, सहायक सामग्री एवं उपकरण, ... में किया जाना चाहिये। संक्षेप में जो

Scanned with CamScanner

कुछ विद्यार्थियों को करना है और कैसे करना है, इसकी रूप रेखा उनके सामने लिखित सामग्री व निर्देशों द्वारा स्पष्ट रूप में रखी जानी चाहिये।

3. सभी विद्यार्थियों को अब इकाई विशेष की अध्ययन सामग्री प्रदान कर अधिगम पथ पर आगे बढ़ने के लिये कहा जाना चाहिये। अध्ययन मार्गदर्शिका (Study Guides) यहाँ अब उनकी उचित सहायता कर सकती है। विद्यार्थियों को पूरी स्वतंत्रता होती है कि अपनी योग्यता, क्षमता, रुचि और अधिगम गति से अपनी अपनी तरह से अध्ययन कार्य में लगे रहें। वे इकाई से सम्बन्धित अध्ययन कार्य विद्यालय, प्रयोगशाला, पुस्तकालय अथवा अपने घर पर कही भी जारी रख सकते हैं। अपने अध्ययन और क्रियाकलापों के माध्यम से इकाई की विषय वस्तु से सम्बन्धित जो प्रश्न व समस्यायें हल करने के लिये दी जाती हैं उनको लिखित रूप में अच्छी तरह उतर देते रहते हैं ताकि विषयवस्तु से सम्बन्धित ज्ञान, कौशल और उनके उपयोगों से वे पूरी तरह परिचित रहें। आवश्यकता पड़ने पर उन्हें अपने अध्यापक तथा साथी प्रोक्टरों से सहायता या मार्गदर्शन प्राप्त करते रहने की पूरी स्वतन्त्रता रहती हैं।

4. सभी विद्यार्थियों को अपनी अपनी अधिगम गति से अधिगम पथ पर स्वयं आगे बढ़ते रहना होता है। इकाई के रूप में जो विषय वस्तु उनके सामने रखी जाती है। उसके अधिगम में उन्हें स्वामित्व स्तर (जिसे अधिगम प्रक्रिया प्रारम्भ करने से पहले ही अध्यापक और विद्यार्थी दोनों मिलकर तय कर लेते हैं) पर पहुँचना होता है। जब भी कोई विद्यार्थी यह अनुभव करता है कि उसने स्वामित्व अर्जित कर लिया है तब वह अध्यापक या प्रोक्टर से प्रार्थना करता है कि उसका मूल्यांकन कर लिया जाये। इकाई परीक्षण से अब उसकी परीक्षा ली जाती है और अगर वह इस परीक्षण से स्वामित्व स्तर तक पहुँचने वाले के रूप में सफल घोषित कर दिया जाता है तो आगे की इकाई अधिगम हेतु मिल जाती है। असफल रहने पर उसे पुनः उसी इकाई का अध्ययन कर अपेक्षित स्वामित्व स्तर अर्जित करने के लिये कह दिया जाता है।

5. जो विद्यार्थी पूरे कोर्स की अध्ययन इकाइयों में स्वामित्व स्तर अर्जित कर लेते हैं, उन्हें प्रोक्टर के रूप में अध्यापक की सहायता करने के लिये विशेष रूप से प्रशिक्षण प्रदान करने के प्रयत्न किये जाते हैं। इन प्रोक्टरों का यह उत्तरदायित्व होता है कि वे अपने साथी छात्रों को इकाई विशेष से संबन्धित विषय सामग्री के अधिगम अर्जन में स्वामित्व स्तर तक पहुँचने में पूरी पूरी मदद करें। प्रोक्टरों की सहायता से सभी विद्यार्थियों को अलग-अलग आमने सामने व्यक्तिगत रूप में अवलोकन करने, निर्देशित करने, समय समय पर आवश्यक सहायता पहुँचाने, इकाई परीक्षणों द्वारा परीक्षा लेने, उनकी सफलता असफलता से परिचित करने, जल्दी-जल्दी तत्काल प्रतिपुष्टि प्रदान करते अधिगम प्रदान करने, अधिगम में उनकी रुचि तथा अभिप्रेरणा बनाये रखने आदि सभी कार्य (जिनकी व्यक्तिगत रूप से जिम्मेदारी अध्यापक की होती है।) बहुत ही अच्छी तरह से संपन्न किये जा सकते हैं। इसलिये प्रोक्टरों के चयन और उनके उचित प्रशिक्षण पर वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली की सफलता काफी सीमा तक निर्भर रहती है।

6. जब एक विद्यार्थी कोर्स की सभी इकाइयों से सम्बन्धित विषयवस्तु के अधिगम में स्वामित्व स्तर अर्जित कर लेता हैं (अर्थात् सभी इकाई परीक्षणों से उतीर्ण घोषित कर दिया जाता हैं) तब उसे अंत में एक ऐसी परीक्षा भी देनी होती है जिससे पूरे कोर्स की विषयवस्तु से सम्बन्धित स्वामित्व स्तर

के अर्जन का समूचा मूल्यांकन किया जा सकता है। इसी के परिणामों के आधार पर उसे ग्रेड प्रदान करने के प्रयत्न किये जाते हैं। ग्रेड प्रदान करने के इस कार्य की दूसरे विद्यार्थियों को मिलने वाले ग्रेडों या उनकी उपलब्धियों निष्पतियों से कोई सम्बन्ध नहीं होता। इस तरह इस प्रणाली में सापेक्षित (Relative) मूल्यांकन नहीं किया जाता और न ग्रेड या उपलब्धि आदि के लिये विद्यार्थियों में किसी प्रकार की प्रतिस्पर्धा या होड़ की किसी रूप में बढ़ावा दिया जाता है। इस प्रणाली में लिये गये परीक्षण या ग्रेडिंग का उद्देश्य बालकों को स्वयं अपने अधिगम स्तर में उत्तरोतर बृद्धि करते रहना ही होता है।

वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली की उपयोगिता एवं प्रभावशीलता (Advantages and Effectiveness of PSI)

वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली की कक्षा शिक्षण परिस्थितियों में उपयोगिता और प्रभावशीलता की जांच हेतु विविध प्रकार के प्रयोग एवं अनुसंधान कार्य हुये हैं जिनके आधार पर हम इस प्रणाली की उपयोगिता एवं प्रभावशीलता को निम्न प्रकार अभिव्यक्त कर सकते हैं।

1. इस प्रणाली के उपयोग द्वारा विद्यार्थिशें को स्वगति (Pace) से अधिगम पथ पर आगे बढ़ाने में सहायता मिलती है।
2. पूर्व निर्धारित निष्पति और स्वामित्व अधिगम स्तर पर सभी विद्यार्थियों को पहुँचाने के कार्य में यह प्रणाली विशेष रूप से सहयोगी सिद्ध होती है।
3. परम्परागत अनुदेशन प्रणालियों या शिक्षण विधियों जैसे व्याख्यान तथा प्रदर्शन आदि की तुलना में यह प्रणाली अनुदेशन कार्य में काफी प्रभावशाली सिद्ध होती है।
4. वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली वैसे तो सभी विषयों के शिक्षण में उपयोगी रहती है परन्तु विशेष रूप से उस विषय वस्तु के शिक्षण में यह बहुत अधिक प्रभावशाली सिद्ध हो सकती है जिसमें विद्यार्थियों से बहुविध चिंतन (divergent thinking) की अपेक्षा एक विध चिंतन (convergent thinking) की आशा की जाती है। इसी तरह छोटी कक्षाओं के शिक्षण की तुलना में यह बड़ी कक्षाओं या महाविद्यालयों में शिक्षण प्रदान करने में अच्छी तरह काम आ सकती है।
5. वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली विद्यार्थियों को अर्जित अधिगम की धारण क्षमता (Retention) और उसे उपयोग में लाने सम्बन्धी दक्षता का प्रदर्शन करने में उपयोगी सिद्ध हो सकती है। यहाँ छात्र जो भी सीखते हैं वे स्वयं के प्रयत्नों से सीखते हैं इसलिए उनका यह अधिगम अर्जन बोध और चिंतन स्तर पर ही सम्पन्न होता है मात्र स्मृति स्तर पर नहीं। यही कारण है कि इस प्रणाली से किया हुआ अधिगम न तो जल्दी विस्मृति के गर्भ में आता है और न ही विद्यार्थियों के लिए अनुपयोगी और निरर्थक बनता है।
6. वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली विद्यार्थियों में अच्छी अध्ययन आदतों को विकसित करने में सहयोगी सिद्ध होती है। सभी विद्यार्थियों को स्वयं अपने प्रयत्नों से ही स्वामित्व स्तर अर्जित करना होता है इसलिए पारम्परिक प्रतिस्पर्धा की अनुपस्थिति रहने के बावजूद भी वे अपने अध्ययन के प्रति काफी सचेत, जागरूक एवं अनुशासित रहते है।
7. यह प्रणाली छात्रों में अधिगम और शिक्षा के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित करने में भी काफी उपयोगी सिद्ध होती है। विद्यार्थी अधिगम पथ पर आगे बढ़ते हुए उचित प्रतिपुष्टि एवं पुनर्बलन प्राप्त

Scanned with CamScanner

विरोध और डर को दूर नहीं किया जा सकता।

4. वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली को अपनी कक्षाकक्ष परिस्थितियों एवं उपलब्ध संसाधनों के परिप्रेक्ष्य में बहुत सारी व्यावहारिक समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है। इस प्रकार की कुछ समस्याएं एवं अड़चनें निम्न प्रकार की हो सकती हैं -

हमारी कक्षाओं में काफी भीड़भाड़ रहती है। कक्षा में छात्रों की अधिक संख्या होने से उन्हें वैयक्तिक रूप से उस प्रकार का ध्यान और सहायता प्रदान नहीं की जा सकती है जैसा कि इस प्रणाली में अपेक्षा रहती है।

इसके प्रयोग हेतु जिस प्रकार की उपयुक्त शिक्षण सामग्री, अध्ययन मार्गदर्शिका, इकाई परीक्षण आदि की जरूरत होती है उनकी समुचित उपलब्धि के अभाव में इसे ठीक प्रकार काम में लाना संभव नहीं हो पाता है।

शिक्षकों के ऊपर पहले से ही जरूरत से अधिक शिक्षण भार रहता है। अतः उन्हें इस प्रणाली के लिए अपेक्षित व्यक्तिगत ध्यान देने और व्यक्तिगत स्तर पर छात्रों की सहायता करने का समय नहीं मिल पाता है।

यह प्रणाली बहुमाध्य साधनों तथा उपकरणों जैसे आडियो टेप, वीडियो फिल्म चित्रात्मक शिक्षण अधिगम साधन, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, कार्यशाला आदि की मांग करती है। आर्थिक कठिनाइयों से घिरे रहने के कारण इन सभी का जुटाया जाना हमारे विद्यालयों में संभव नहीं हो पाता और फलस्वरूप इस प्रणाली के प्रयोग में अड़चने खड़ी हो जाती है।

इस प्रणाली के उपयोग के लिये बड़े-बड़े कक्षा कक्षों, हॉल कमरों तथा अधिक स्थान की जरूरत पड़ती है ताकि विद्यार्थियों को अलग - अलग रूप में वैयक्तिक अनुदेशन प्राप्त करने की सुविधायें प्रदान की जा सके। इसी तरह वैयक्तिक अध्ययन एवं क्रियाकलापों हेतु विद्यार्थियों को अधिक संसाधनों एवं उपकरणों आदि की भी जरूरत पड़ती है जिसे धनाभाव के कारण पूरा करना संभव नहीं हो पाता।

5. वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली की सफलता बहुत कुछ छात्र निरीक्षकों या प्रोक्टरों द्वारा प्रदत्त सेवाओं पर निर्भर करती है। जिनकी कार्यक्षमता, विश्वसनीयता और कार्यनिष्ठा सदैव संदिग्ध ही रहती है। एक तो वे स्वयं छात्र ही होते हैं जिनकी सत्ता या निर्देशन को उनके साथी स्वीकार नहीं कर पाते। दूसरे से स्वयं भी इसे अपनी शक्ति और समय का अपव्यय समझ कर अपने उत्तरदायित्वों से न्याय नहीं कर पाते। वे यही सोचते रहते है। कि दूसरे को स्वामित्व स्तर पहुँचाने में मैं क्यों परेशान रहूँ। इस तरह की नकारात्मक सोच के रहते हुए प्रोक्टरों से कुछ अधिक आशा करना व्यर्थ ही होता है और इसी के फलस्वरूप इस प्रणाली को ठीक तरह अपनाने में भी दिक्कत आती है।

6. सबसे अंतिम परन्तु सबसे बड़ी परेशानी इस प्रणाली के उपयोग करने में इस बात को लेकर है कि यहाँ सभी विद्यार्थियों से उनके अधिगम प्रयत्नों को लेकर बहुत अधिक आशा की जाती है। सब कुछ उन्हें अपने प्रयत्नों से ही करना होता है। यद्यपि उन्हें अधिगम पथ पर आगे बढ़ाने के लिए सभी सुविधाएं जुटाई जाती हैं परन्तु आगे बढ़ने की पूरी जिम्मेदारी उन्हीं के कंधों पर होती है। ऐसे उन्मुक्त वातावरण में उनके अधिगम पथ से विचलित होने की संभावना बहुत अधिक बढ़ जाती है। वे अपनी स्वतंत्रता का नाजायज फायदा उठाकर अपने समय और शक्ति की बरबादी कर सकते

Scanned with CamScanner

हैं। दूसरे इस प्रणाली में अन्य विद्यार्थियों के साथ उनकी उपलब्धि अथवा निष्पत्ति के सम्बन्ध में पारम्परिक तुलना नहीं की जा सकती है। इस प्रकार की प्रतिस्पर्धा की अनुपस्थिति में उनमें कुछ सुस्ती और ढील आ जाती है और वे एक एक इकाई से सम्बन्धित विषयवस्तु के स्वामित्व में अधिक समय गंवा देती हैं।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि वैयक्तिक अनुदेशन प्रणाली को एक शिक्षण या अनुदेशन प्रणाली के रूप में अपनाने में काफी बाधाओं और समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है परन्तु यदि ध्यान से देखा जाए तो इनमें से बहुत सी बाधाएं और अड़चनें केवल मात्र इस बात को लेकर हैं कि प्रत्येक नवाचार का उसकी प्रारम्भिक अवस्था में अवश्य ही विरोध होता है या उसके उपयोग सम्बन्धी कठिनाइयों को बढ़ा चढ़ाकर पेश किया जाता है। यही बात इस प्रणाली को अपने देश की अन्य परिस्थितियों में लागू करने को लेकर है। यह बात तो निर्विवाद रूप से सत्य है कि वास्तविक वैयक्तिक अनुदेशन प्रदान कर विद्यार्थियों को किसी विषय विशेष में स्वामित्व अर्जित करने में जितनी सहायता इस प्रणाली से मिल सकती है वह किसी अन्य प्रणाली से नहीं। यह उपलब्धि कोई कम नहीं है और इसकी प्राप्ति हेतु अगर शिक्षकों को कुछ अधिक परिश्रम करना पड़े तो उन्हें अपने विद्यार्थियों के उज्ज्वल भविष्य हेतु इसे दिल से स्वीकार कर आगे बढ़ने के प्रयत्न करने चाहिऐ।

Scanned with CamScanner

3. ई-लर्नि ... कक्षा-कक्ष

(E-school or Virtual Quasrooms)

उत्तर - आपने कई शब्द सुने होगें ई-बेकिंग, ई-लर्निंग, ई-टिकटिंग आदि। जब कोई कार्य कम्प्यूटर और इंटरनेट की सहायता से कही भी बैठ कर पूरा किया जा सके तो उसे "ई" से प्रदर्शित करते हैं। जैसे यदि आप अपने बैंक एकाउन्ट को घर बैठ कर इंटरनेट के जरिए एक्सेस करते हो तो इसे ई-बैकिंग कहेंगे।

ई-लर्निंग या अवास्तविक कक्षा-कक्ष से अभिप्राय ऐसे कक्षा-कक्षों से है जिनमें आधुनिक कम्प्यूटर तथा संप्रेषण तकनीकी युक्त संसाधनों जैसे इंटरनेट, ई-मेल, ऑनलाइन चैटिंग, विडियो कानफ्रेसिंग आदि का प्रयोग करके नियमित कक्षाओं की परम्परागत शैक्षिक, मूल्यांकन तथा प्रशासनिक गतिविधियों का आंशिक या पूर्ण रूप से स्थान लेने का प्रयत्न किया जाता है।

ई-लर्निंग की सहायता से स्कूल के पाठ्यक्रमों तथा कक्षा-कक्ष गतिविधियों को स्वयं विद्यार्थियों के पास उनके घर तक पहुँचाने का कार्य किया जाता है। इनकी कार्यशैली से संबंधित मुख्य बातों का उल्लेख निम्न प्रकार हैं -

1. ई-लर्निंग व्यवस्था में विषय विशेषज्ञों और अनुभवी अध्यापकों के द्वारा विद्यालय पाठ्यक्रम के किसी प्रकरण पर अनुदेशन सामग्री तैयार करा कर उसे सैटेलाइट आधारित टैलीक्राफ्रेसिंग द्वारा प्रसारित कराया जा सकता है।
2. इस प्रकार की व्यवस्था में विशेषज्ञों तथा अनुभवी अध्यापकों द्वारा विकसित अध्ययन सामग्री बेबसाइट पर डालकर विद्यार्थियों तक पहुंचायी जा सकती है।
3. अध्ययन सामग्री की सी.डी. या डी.वी.डी. बनाकर उन्हें विद्यार्थियों को बांटा जा सकता है। विद्यार्थियों को अध्ययन सामग्री के साथ पूरक सामग्री अवश्य ही प्रदान की जाती है ताकि विद्यार्थियों का स्व-अधिगम कार्य भी सुचारू रूप से चलता रहे।
5. इस कार्य हेतु बेबसाइट पर समयानुसार आवश्यक सामग्री तथा संदेश डाले जा सकते है।

ई-लर्निंग या अवास्तविक कक्षा-कक्ष व्यवस्था के लाभ

ई-लर्निंग प्रणाली निम्न प्रकार से उपयोगी सिद्ध हो सकती है -

1. इस प्रणाली में विद्यार्थी अपनी-अपनी जगह बैठे हुऐ या कार्य करते हुए अपनी सुविधानुसार किसी भी समय अध्ययन कर सकते हैं।

Scanned with CamScanner

2. यह विद्यार्थियों को अधिगम अनुभव प्रदान करने के कार्य में बेहद लचीली सिद्ध हो सकती है।
3. इस प्रणाली में अनुभव ग्रहण करने संबंधी सुविधाएं हर समय सप्ताह में सातो दिन उपलब्ध
है।
4. इस प्रणाली के माध्यम से विद्यार्थियों को शिक्षण अधिगम के कार्य में विविध प्रकार की
तकनीकी सामग्री और माध्यमों के उपयोग का अनुभव भी है।
5. नवीनतम तकनीकी के प्रयोग से शिक्षण अधिगम कार्य अधिक रूचिकर तथा प्रेरणादायक बन
है।

ई-लर्निंग या अवास्तविक कक्षा-कक्ष व्यवस्था की कमियाँ

ई-लर्निंग प्रणाली की हानियाँ निम्न प्रकार से हैं -

1. यह व्यवस्था काफी लचीली है और इसके ज्यादा लचीचेपन से विद्यार्थियों का गुमराह होना संभ
2. इस प्रकार की व्यवस्था में उपयोग की गई सामग्री की गुणवत्ता में काफी संदिग्धता रहती है।
3. इस व्यवस्था के माध्यम से विद्यार्थी को कक्षा शिक्षण जैसे अनुभवों के अवसर सुलभ कराए ज
हैं परन्तु इसमें ऐसी कोई व्यवस्था नहीं हो सकती जिसमें वास्तविक कक्षा शिक्षण के जीवन
अतःक्रिया तथा संबंधों की गूढ़ता व सामाजिकता पाई जाए।
4. विद्यालय शिक्षा का प्रमुख उद्देश्य विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का सर्वगुण विकास होता
अवास्तविक कक्षा-कक्ष प्रणाली में ऐसी कोई क्रिया नहीं होती।

Scanned with CamScanner

17

वाणिज्य-शिक्षण में मूल्यांकन
(EVALUATION IN COMMERCE TEACHING)

- वाणिज्य शिक्षण में मूल्यांकन उपागम का प्रयोग
  (Application of evaluation approach in the teaching of commerce)
- वस्तुनिष्ठ परीक्षण का निर्माण
  (Construction of objective test)

मूल्यांकन-अर्थ एवं परिभाषा
(EVALUATION-MEANING AND DEFINITION)

मूल्यांकन का प्रत्यय (Concept of Evaluation)—मूल्यांकन का शाब्दिक अर्थ मूल्य का अंकन करना है। मापन प्रक्रिया के अन्तर्गत जहाँ किसी वस्तु के गुणों अथवा विशेषताओं को आंकिक स्वरूप प्रदान किया जाता है वहीं मूल्यांकन में इसके विपरीत वस्तु का मूल्य निर्धारित किया जाता है। अर्थात् मूल्यांकन के अन्तर्गत उस व्यक्ति अथवा वस्तु के गुणों अथवा विशेषताओं की वांछनीयता (Desirability) पर दृष्टिपात किया जाता है। किसी गुण व विशेषता की कितनी मात्रा व्यक्ति में उपलब्ध है, इस प्रश्न का उत्तर हमें मापन से प्राप्त होता है। जबकि उस व्यक्ति में उपस्थित गुण अथवा विशेषता की मात्रा किसी उद्देश्य की दृष्टि से कितनी संतोषप्रद (How Desirable) है, इस प्रश्न का उत्तर मूल्यांकन से निर्धारित होता है। अत: स्पष्ट है कि मापन की तुलना में मूल्यांकन अधिक व्यापक है।

साधारणत: शिक्षा के क्षेत्र में मूल्यांकन से अभिप्राय छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि के सन्दर्भ में लगाया जाता है। मूल्यांकन के अन्तर्गत छात्रों के व्यवहार के गुणात्मक व मात्रात्मक वर्णन के साथ-साथ उचित व वांछित व्यवहार के मूल्य भी निर्धारित रहते हैं। अर्थात् मूल्यांकन के अन्तर्गत छात्र के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का विकास किस सीमा तक हुआ है यह जानने का प्रयास किया जाता है।

इसके अतिरिक्त मूल्यांकन के द्वारा शिक्षक अपने शिक्षण कार्य, शिक्षण विधियों, पाठ्यक्रम आदि की सफलता के विषय में भी जानकारी प्राप्त करता है। अत: स्पष्ट है कि मूल्यांकन प्रक्रिया एकांगी न होकर विभिन्न कार्यों की शृंखला है जिसमें विभिन्न क्षेत्र व कार्य सम्मिलित रहते हैं।

मूल्यांकन की परिभाषाएँ

माइकेलिस—"मूल्यांकन उद्देश्यों की प्राप्ति की सीमा का निर्धारण करने वाली प्रक्रिया है।इसमें निर्देश के परिणामों को जाँचने के लिए शिक्षक, बालकों, प्रधानाचार्य तथा विद्यालय के अन्य कर्मचारियों द्वारा प्रयोग की जाने वाली समस्त प्रक्रियाएँ सम्मिलित हैं।"

Scanned with CamScanner

Evaluation is the process of determining the extent to which objectives have been achieved. It includes all the procedures used by the teacher, children, principal and other school personnel to appraise outcomes of instruction. —*Michaelis*

जेम्स एम. ली. के अनुसार—"मूल्यांकन विद्यालय, कक्षा तथा स्वयं के द्वारा निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के सम्बन्ध में प्रगति की जाँच है। मूल्यांकन का मुख्य प्रयोजन छात्रों की सीखने की प्रक्रिया को अग्रसर एवं निर्देशित करना है। इस प्रकार मूल्यांकन एक नकारात्मक प्रक्रिया न होकर सकारात्मक प्रक्रिया है।"

Evaluation is the appraisal of pupil's progress in attaining the educational goals set by the school, the class and himself. The chief purpose of evaluation is to guide and farther the student's learning. Evaluation is thus a positive rather than a negative process.

—*James M. Lee*

रेमर्स एवं गेज के अनुसार, "मूल्यांकन के अन्दर व्यक्ति या समाज अथवा दोनों की दृष्टि में जो उत्तम है अथवा वाँछनीय है, उसको मानकर चला जाता है।"

Evaluation assumes a purpose or an idea of what is 'good' or 'desirable' from the standpoint of the individual or society or both.

—*H.H. Remmers & M.L. Gage*

डांडेकर के अनुसार, "मूल्यांकन हमें यह बताता है कि बालक ने किस सीमा तक किन उद्देश्यों को प्राप्त किया है।"

Evaluation may be defined as a systematic process of determining the extent to which educational objectives are achieved by pupils.

—*Dandekar*

टॉरगेर्सन तथा एडम्स के अनुसार, "मूल्यांकन का अर्थ है किसी वस्तु या प्रक्रिया का मूल्य निश्चित करना। इस प्रकार, शैक्षिक मूल्यांकन से तात्पर्य है शिक्षण प्रक्रिया तथा सीखने की क्रियाओं से उत्पन्न अनुभवों की उपयोगिता के बारे में निर्णय देना।"

To evaluate is to ascertain the value of some process or thing. Thus educational evaluation is the passing of judgement on the degree of worthwhileness of some teaching process or learning experience.

—*T.L. Torgerson & G.S. Adams*

क्विलेन तथा हन्ना के अनुसार, "विद्यालय द्वारा हुए बालक के व्यवहार परिवर्तन के विषय में साक्षियों के संकलन तथा उनकी व्याख्या करने की प्रक्रिया ही मूल्यांकन है।"

Evaluation is the process of gathering and interpreting evidences on changes in the behaviour of the students as they progress through school.

—*Quillen and Hanna*

क्लाजमेयर एवं गुडविन के अनुसार, "शिक्षा में मूल्यांकन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा यह निर्णय किया जाता है कि किसी चीज की मापित सीमा और परिणाम किसी मापदण्ड में स्वीकार्य अथवा वाँछनीय हैं अथवा नहीं।"

Evaluation in education is the process of judging whether the quantity or extent of something measure is acceptable or desirable in terms of some criterion.

—*Clasmeyr and Goodwin*

कोठारी कमीशन के अनुसार, "अब यह माना जाने लगा है कि मूल्यांकन एक अनवरत प्रक्रिया है, यह सम्पूर्ण शिक्षा प्रणाली का एक अभिन्न अंग है और यह शिक्षण लक्ष्यों से घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है।"

It is now agreed that evaluation is a continuous process, forms an integral part of the total system of education and is closely related to educational objectives.

—*Kothari Commission*

मैकलीन के अनुसार, "मूल्यांकन शब्द को, 'मैं इसे पसन्द करता हूँ' अथवा 'मैं इसे ना पसन्द करता हूँ' इन्हीं दो अर्थों में प्रयुक्त किया जाने लगा है, यह किसी भी व्यक्ति के द्वारा किन्हीं कार्यक्रमों, क्रियाओं, प्रक्रियाओं के दौरान प्राप्त अनुभवों के प्रतिक्रिया स्वरूप एक संवेगात्मक उद्‌गार है।"

The term evaluation has come to mean, 'I like it' or 'I dislike it', expression of emotional reaction to programmes, activities, processes whatever one has experienced or is experiencing. —*Mc Cleen*

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसन्धान एवं प्रशिक्षण परिषद (NCERT) द्वारा दी गई परिभाषा के अनुसार, "मूल्यांकन एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा यह ज्ञात किया जाता है कि उद्देश्य किस सीमा तक प्राप्त किये गये हैं, कक्षा में दिये गये अधिगम अनुभव कहाँ तक प्रभावशाली सिद्ध हुए हैं और कहाँ तक शिक्षा के उद्देश्य पूर्ण किये गये हैं।"

Evaluation is the process of determining the extent to which an objective is being attained, the effectiveness of the learning experiences provided in the class room and how well the goals of education have been accomplished. —*NCERT*

वेस्ले—"मूल्यांकन एक समावेशित धारणा है जो इच्छित परिमाणों के गुण, महत्व, प्रभावशीलता का निर्णय करने के लिए समस्त प्रकार के प्रयासों एवं साधनों की ओर संकेत करता है। यह वस्तुगत प्रमाण तथा आत्मगत निरीक्षण का मिश्रण है। यह सम्पूर्ण एवं अन्तिम अनुमान हैं। यह नीतियों के रूप में परिवर्तनों एवं भावी कार्यक्रम के लिए महत्वपूर्ण एवं आवश्यक पथ-प्रदर्शक है।"

Evaluation is the inclusion concept, it indicates all kinds of means to ascertain the quality, value and effectiveness of desired outcomes. It is a compound of objective evidences and subjective observations. It is the total and final estimate. It is valuable and indispensable guide to the modification of policies and to further action. —*Wesley*

मुफात—"मूल्यांकन निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है और यह छात्रों की औपचारिक शैक्षिक उपलब्धि की उपेक्षा करता है। यह व्यक्ति के विकास में अधिक रुचि रखता है। यह व्यक्ति के विकास को उसकी भावनाओं, विचारों तथा क्रियाओं से सम्बन्धित वांछित व्यवहार परिवर्तनों के रूप में व्यक्त करता है।"

Evaluation is a continuous process and is concerned with more than the formal academic achievement of students. It is interested in the development of the individual in terms of desirable behavioural changes related to his feelings, thinking and actions. —*Moffat*

Scanned with CamScanner

विभिन्न विचारकों द्वारा दी गयी परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि मूल्यांकन एक (निरन्तर चलने वाली) प्रक्रिया है। इससे ज्ञात किया जाता है कि छात्रों ने कितना ज्ञान क्रिया है अर्थात् छात्रों ने कौशल, अभिवृत्ति तथा अभिरुचि की दृष्टि से कितनी प्रगति की दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि छात्रों के व्यवहार में क्या और कितना परिवर्तन आये सीखने की प्रक्रिया में छात्रों के व्यवहार में जिन परिवर्तनों को लाने के हम इच्छुक होते हैं शैक्षिक उद्देश्यों अथवा अनुदेशन उद्देश्यों (Educational objectives or Instructional objectives) के नाम से पुकारा जाता है। इन शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विद्यालय विभिन्न अधिगम क्रियाओं का आयोजन किया जाता है। ये अधिगम क्रियाएँ निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति में किस सीमा तक सफल रही यह देखना मूल्यांकन प्रक्रिया का कार्य है।

इस प्रकार मूल्यांकन प्रक्रिया के तीन प्रमुख अंग हैं–

(1) शिक्षण उद्देश्य (Educational objectives)

(2) अधिगम क्रियाएँ (Learning activities)

(3) व्यवहार परिवर्तन (Behavioural changes)

मूल्यांकन प्रक्रिया के इन तीन अंगों को एक त्रिभुज के रूप में निम्न ढंग से प्रस्तुत किया जा सकता है–

मूल्यांकन के ये तीनों अंग परस्पर एक-दूसरे से सम्बन्धित रहते हैं। शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए विद्यालय में अधिगम क्रियाएँ आयोजित की जाती हैं जिससे छात्रों के व्यवहार में परिवर्तन होते हैं। छात्रों के व्यवहार में आये परिवर्तन तथा निर्धारित किये गये वांछित परिवर्तनों की तुलना करके मूल्यांकन किया जाता है।

मापन एवं मूल्यांकन में अन्तर
(DIFFERENCE BETWEEN MEASUREMENT AND EVALUATION)

प्राय: 'मूल्यांकन' को 'मापन' से भ्रमित (Confused) किया जाता है, जबकि ये दोनों एक-दूसरे से पर्याप्त भिन्न होते हैं। एक प्रकार से मापन किसी वस्तु का अंकात्मक (quantitative) रूप है जबकि मूल्यांकन मापन के साथ-साथ उस वस्तु का परिमाणात्मक (Qualitative) चित्र भी प्रस्तुत करता है। संक्षेप में, मापन अंकात्मक है तथा मूल्यांकन परिमाणात्मक। अथवा, ये कह सकते हैं कि मापन से हमें यह पता चलता है कि कोई वस्तु कितनी है (How much) ? जबकि मूल्यांकन हमें बताता है कि कोई वस्तु कितनी अच्छी है (How good) ? इसके अतिरिक्त मूल्यांकन में इस बात पर अधिक ध्यान दिया जाता है कि विशिष्ट उद्देश्यों की पूर्ति किस सीमा तक हुई है जबकि मापन में हमारा तात्पर्य केवल इस बात से रहता है कि हमने कितने विशिष्ट उद्देश्य प्राप्त करने की कोशिश की है। अत: मूल्यांकन के मापन अपूर्ण है अत: कहा सकता है कि–"Measurement refers to

observations that can be expressed quantitatively and answers the question 'How much' ? Evaluation goes beyond the statement of how much to concern itself with the question 'What value' ?"

मापन एवं मूल्यांकन में जो अन्तर हैं, उन्हें नीचे तुलना द्वारा और स्पष्ट किया गया है–

मापन (Measurement)	मूल्यांकन (Evaluation)
(1) मापन का क्षेत्र सीमित होता है। मापन में व्यक्तित्व के कुछ ही आयामों की परीक्षा सम्भव होती है।	(1) मूल्यांकन का क्षेत्र व्यापक होता है। इसमें छात्र के सम्पूर्ण व्यक्तित्व की परीक्षा की जाती है।
(2) मापन के द्वारा तुलनात्मक अध्ययन सम्भव नहीं।	(2) मूल्यांकन के द्वारा तुलनात्मक अध्ययन किया जा सकता है।
(3) मापन एक साधन (Means) है, अपने आप में साध्य (end) नहीं।	(3) मूल्यांकन अपने आप में एक साध्य है।
(4) मापन किसी छात्र के सम्बन्ध में स्पष्ट धारणा व्यक्त नहीं करता।	(4) मूल्यांकन के आधार पर किसी छात्र के विषय में स्पष्ट धारणा बनाई जा सकती है।
(5) मापन का कार्य साक्ष्यों (evidences) का एकत्रीकरण (collection) करना होता है।	(5) मूल्यांकन का कार्य साक्ष्यों के विश्लेषण से निष्कर्ष (appraisement of evidences) निकालना है।
(6) मापन में अधिक श्रम एवं समय की आवश्यकता नहीं होती।	(6) मूल्यांकन में अधिक श्रम एवं समय की आवश्यकता पड़ती है।
(7) मापन पाठ्य-वस्तु (content) केन्द्रित होता है।	(7) मूल्यांकन उद्देश्य (Objective) केन्द्रित होता है।
(8) मापन उन निरीक्षणों की ओर संकेत करता है जो अंकात्मक रूप में प्रदर्शित किये जाते हैं।	(8) मूल्यांकन के अन्तर्गत अंकात्मक एवं गुणात्मक दोनों ही प्रकार के निरीक्षणों को स्थान दिया जाता है।
(9) मापन शिक्षा का एक आवश्यक अंग नहीं भी हो सकता है।	(9) मूल्यांकन शिक्षा का एक समग्र अंग है।
(10) मापन में एक स्थिति का ज्ञान होता है। यह सम्पूर्ण वातावरण से पृथक् रहता है।	(10) मूल्यांकन सम्पूर्ण वातावरण के सन्दर्भ में स्थिति का ज्ञान कराता है।
(11) मापन में वस्तु कितनी है ? (How much) का उत्तर दिया जाता है। जैसे–रेखा ने वाणिज्य में 56 अंक प्राप्त किये हैं, यह मापन है।	(11) मूल्यांकन में वस्तु का क्या मूल्य है ? (What value) का उत्तर दिया जाता है। जैस–रेखा ने वाणिज्य में 56% अंक लेकर कक्षा में द्वितीय स्थान प्राप्त किया है, यह मूल्यांकन है।
(12) मापन किसी भी समय किया जा सकता है।	(12) मूल्यांकन एक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है।
(13) मापन के आधार पर भविष्यवाणी सार्थकता के साथ नहीं की जा सकती।	(13) मूल्यांकन में भविष्यवाणी सार्थकता के साथ की जा सकती है।

Scanned with CamScanner

राइटस्टोन (Wrightstone) ने मापन एवं मूल्यांकन में अन्तर स्पष्ट करते हुए लिखा है कि "मापन में विषय-वस्तु के केवल एक ही पहलू पर ध्यान दिया जाता है जबकि मूल्यांकन सम्पूर्ण वातावरण के सन्दर्भ में स्थिति का ज्ञान कराता है, उदाहरणार्थ—किसी बालक की गणित में परीक्षा लेने से मात्र हम उसकी गणितीय योग्यता के बारे में ही जानकारी प्राप्त कर सकते हैं इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं। उसकी रुचियों, क्षमताओं एवं योग्यताओं के बारे में गणित की यह परीक्षा कोई संकेत नहीं करती।"

"The emphasis in Measurement is upon single aspect of subject—matter achievement or specific skills and abilities but……the emphasis in Evaluation is upon broad personality changes and major objectives of an education programme. These include not only subject matter achievement but also attitudes, interests, ideals ways of thinking, work—habits and personal, social adaptability e.g., by testing a child in Mathematics we may measure his mathematical ability and nothing else. We may not have any idea about the interest, abilities etc, of the child in Maths by administering this single test.

In brief, we can say that Measurement is quantitative while Evaluation is qualitative".

मूल्यांकन की मान्यताएँ
(ASSUMPTIONS OF EVALUATION)

मूल्यांकन प्रक्रिया की कुछ प्रमुख मान्यताएँ इस प्रकार हैं—

(1) शिक्षा का एक मात्र कार्य बालक के व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन लाना होता है। इस दृष्टि से मूल्यांकन का ध्येय हमें स्पष्ट होना चाहिए।

(2) मूल्यांकन उद्देश्यों के निर्धारण के पश्चात् उन्हें प्राप्त करने के लिए उपयुक्त मूल्यांकन उपकरण (Tool) का चयन करना चाहिए।

(3) एक ही उपकरण के माध्यम से किसी भी व्यक्ति का पूर्ण मूल्यांकन सम्भव नहीं है। इस प्रकार, मूल्यांकन प्रक्रिया वह सीमा निर्धारित करती है जहाँ तक शैक्षिक उद्देश्य प्राप्त किये जा सकते हैं।

(4) मानव व्यवहार अत्यन्त जटिल है। अत: इसके मूल्यांकन हेतु व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों (Dimensions) का मापन करना अत्यन्त आवश्यक है।

(5) मूल्यांकनकर्त्ता को मूल्यांकन विधा की प्रत्येक प्रविधि एवं विभिन्न उपकरणों का भली-भाँति ज्ञान होना चाहिए।

(6) मूल्यांकन अपने आप में एक अन्त (end) नहीं है वरन् दूसरी चीजों की प्राप्ति में एक साधन (means) के रूप में प्रयुक्त किया जाना चाहिए।

(7) मूल्यांकन अत्यन्त सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए। साथ ही, यथासम्भव दोषों (errors) के जाल से बचना चाहिए।

(8) मापन एवं मूल्यांकन दोनों ही छात्र के सीखने को प्रभावित करते हैं।

वाणिज्य शिक्षण में मूल्यांकन का महत्व
(IMPORTANCE OF EVALUATION IN COMMERCE TEACHING)

वाणिज्य में मूल्यांकन के महत्व को अग्रलिखित बिन्दुओं से स्पष्ट किया जा सकता है।

(1) मूल्यांकन वाणिज्य शिक्षण के उद्देश्यों को स्पष्ट करता है।

(2) मूल्यांकन द्वारा छात्रों को अपनी प्रगति का ज्ञान होता है।

(3) मूल्यांकन द्वारा अध्यापक, प्रशासक, शिक्षा शास्त्री, छात्र तथा अभिभावक वाणिज्य शिक्षण के उद्देश्यों की प्राप्ति की सीमा को जान सकते हैं।

(4) मूल्यांकन कक्षा शिक्षण में सुधार लाता है जिसमें अध्यापक अपनी वाणिज्यिक शिक्षण विधियों एवं प्रविधियों में नवीनता लाने का प्रयास करता है जिससे वह अपने शिक्षण को अधिक सुसंगठित कर लेता है।

(5) मूल्यांकन छात्रों को अध्ययन के लिए प्रोत्साहित करता है।

(6) मूल्यांकन के आधार पर छात्रों को शैक्षिक व व्यवसायिक निर्देशन भी दिया जा सकता है।

(7) छात्रों की रुचियों, अभिरुचियों, कुशलताओं, योग्यताओं, दृष्टिकोणों एवं व्यवहारों को मूल्यांकन द्वारा मूल्यांकित करने का प्रयास किया जा सकता है।

(8) मूल्यांकन शिक्षक व छात्रों को अपने-अपने क्षेत्र में पृष्ठपोषण प्रदान करता है।

(9) मूल्यांकन के आधार पर वाणिज्य के पाठ्यक्रम, शिक्षण विधियों, सहायक सामग्री आदि में आवश्यक सुधार किया जा सकता है।

अत: स्पष्ट है कि वाणिज्य शिक्षण में सुधार एवं गुणवत्ता लाने के लिए मूल्यांकन अत्यन्त सहायक होता है।

वाणिज्य शिक्षण में मूल्यांकन के उद्देश्य
(PURPOSE OF EVALUATION IN COMMERCE)

वाणिज्य शिक्षण की प्रक्रिया में मूल्यांकन के निम्न प्रमुख उद्देश्य हैं—

(1) मूल्यांकन का प्रमुख उद्देश्य वाणिज्यिक क्षेत्रों के अनुसार छात्रों का वर्गीकरण करना है।

(2) मूल्यांकन के द्वारा छात्रों को उचित शैक्षिक एवं व्यावसायिक मार्ग निर्देशन प्रदान किया जाता है।

(3) मूल्यांकन के द्वारा वाणिज्य के पाठ्यक्रम में उचित संशोधन किया जा सकता है।

(4) वाणिज्य में मूल्यांकन का प्रयोग छात्रों में अधिगम (Learning) की मात्रा ज्ञात करने में भी किया जाता है।

(5) वाणिज्य में मूल्यांकन के द्वारा शिक्षकों की कुशलता एवं सफलता का मापन किया जाता है।

(6) मूल्यांकन के द्वारा व्यवसायिक क्षेत्र में छात्रों की दुर्बलताओं एवं योग्यताओं की जानकारी प्राप्त करने में सहायता मिलती है।

(7) मूल्यांकन वाणिज्य शिक्षण विधियों की उपयुक्तता की भी जाँच करता है।

(8) मूल्यांकन का प्रयोग वाणिज्य शिक्षण के अनुदेशन (Instruction) की प्रभावशीलता ज्ञात करने एवं उसके अनुरूप अपनी क्रियाओं (activities) का नियोजन (Planning) करने में किया जाता है।

(9) वाणिज्य में मूल्यांकन का एक उद्देश्य छात्रों को अपनी समस्याएँ समझने एवं उनकी प्रगति के सम्बन्ध में जानकारी प्रदान करना भी है।

(10) वाणिज्य में मूल्यांकन का एक उद्देश्य इस बात की जानकारी प्रदान करना है कि छात्रों की विभिन्न व्यक्तिगत, आर्थिक एवं सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति किस प्रकार की जा सकती है।

Scanned with CamScanner

वाणिज्य शिक्षण में मूल्यांकन प्रक्रिया के सोपान
(STEPS OF EVALUATION PROCESS IN TEACHING OF COMMERCE)

किसी अच्छे मूल्यांकन कार्यक्रम के लिए यह आवश्यक है कि वह छात्रों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों का ठीक ढंग से मूल्यांकन कर सके। वाणिज्य विषय के शिक्षण के अनेक उद्देश्य होते हैं तथा इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार की अधिगम क्रियाएँ छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत की जाती हैं। मूल्यांकन एक सतत् प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया में तीन सोपान कार्यरत रहते हैं। इन सोपानों के अन्तर्गत छात्रों के व्यवहार परिवर्तन का मूल्यांकन तथा पृष्ठपोषण का कार्य आता है।

मूल्यांकन प्रक्रिया के मुख्य तीन सोपान हैं—

(1) वाणिज्य शिक्षण उद्देश्यों का निर्धारण एवं परिभाषीकरण।
(Formulation and definition of educational objectives)

(2) वाणिज्य में अधिगम अनुभव की योजना बनाना।
(Creating appropriate learning experiences in Commerce)

(3) वाणिज्य में व्यवहार परिवर्तनों के आधार पर मूल्यांकन करना।
(Evaluating on the basis of behavioural changes in commerce)

इनकी स्पष्टता व सरलता के लिए इनको कुछ उप-सोपानों (sub-steps) में बाँटा जा सकता है—

(1) वाणिज्य शिक्षण उद्देश्यों का निर्धारण एवं परिभाषीकरण (Formulating of Commerce Teaching Objectives)

(i) वाणिज्य के सामान्य उद्देश्यों का निर्धारण करना।
(Formulating of general objectives of commerce)

(ii) वाणिज्य के विशिष्ट उद्देश्यों का निर्धारण एवं परिभाषीकरण करना।
(Formulating of specific objectives of commerce)

(i) वाणिज्य के सामान्य उद्देश्यों का निर्धारण—शिक्षा एक उद्देश्यपूर्ण प्रक्रिया है। वाणिज्य शिक्षण उद्देश्यों को परिभाषित करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि हमें बालक के अन्दर किस प्रकार का व्यवहार परिवर्तन लाना है। वाणिज्य शिक्षण के सामान्य उद्देश्य वास्तव में ऐसे व्यापक तथा अन्तिम लक्ष्य हैं जिनकी प्राप्ति किसी अध्यापक का एक सामान्य तथा दूरगामी लक्ष्य होता है। इनकी प्राप्ति के लिए एक लम्बा समय तथा सम्पूर्ण शिक्षा प्रक्रिया का योगदान आवश्यक होता है। जैसे—छात्रों का शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, आर्थिक, व्यवसायिक तथा संवेगात्मक विकास करना आदि। अत: वाणिज्य शिक्षा के सामान्य उद्देश्य व्यापक, (Broad), परोक्ष (Indirect) तथा औपचारिक (formal) होते हैं। इन्हें लम्बी अवधि में ही प्राप्त किया जा सकता है।

(ii) वाणिज्य के विशिष्ट उद्देश्यों का निर्धारण—सामान्य उद्देश्यों के निर्धारण के उपरान्त वाणिज्य के विशिष्ट उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। दैनिक शिक्षण कार्य करते समय अध्यापक के मस्तिष्क में सदैव ही कुछ तात्कालिक विशिष्ट उद्देश्य (Immediately Achievable objectives) होते हैं जिनकी प्राप्ति कक्षा शिक्षण के दौरान ही सम्भव है। ये विशिष्ट उद्देश्य प्राय: छात्रों में होने वाले सम्भावित व्यवहार परिवर्तन के रूप में लिखे जाते हैं। सामान्य उद्देश्यों की अपेक्षा विशिष्ट उद्देश्य कुछ संकीर्ण (Narrow) होते हैं। ये व्यवहारिकता पर आधारित होते हैं तथा अल्प अवधि में इनको प्राप्त किया जा सकता है।

(2) वाणिज्य में अधिगम अनुभवों की योजना बनाना (Creating Appropriate Learning Experiences in Commerce)

(i) वाणिज्य के शिक्षण बिन्दुओं का चयन करना।
(Selection of teaching Points in commerce)

(ii) वाणिज्य में उपयुक्त अधिगम क्रियाएँ आयोजित करना।
(Organize appropriate teaching Activities in Commerce)

(i) वाणिज्य में शिक्षण बिन्दु (Teaching Points)—शिक्षण उद्देश्यों के निर्धारण के उपरान्त वाणिज्य के शिक्षण बिन्दुओं को निर्धारित किया जाता है जिनके द्वारा वाणिज्य के विशिष्ट उद्देश्यों की प्राप्ति की जा सकती है। पाठ्यवस्तु के किसी प्रकरण के छोटे-छोटे भाग ही शिक्षण बिन्दु कहलाते हैं। इन शिक्षण बिन्दुओं के द्वारा अध्यापक अपने अध्यापन को सरल, रुचिकर व सम्पूर्ण बना सकता है। इन्हीं के आधार पर अध्यापक शिक्षण योजना (Teaching Plan) तैयार करता है।

(ii) वाणिज्य की अधिगम क्रियाएँ (Learning Activities)—शिक्षण उद्देश्यों तथा शिक्षण बिन्दुओं को निर्धारित करने के उपरान्त अध्यापक वाणिज्य की अधिगम क्रियाओं का आयोजन करता है। अधिगम क्रियाएँ अनेक प्रकार से छात्रों के सम्मुख प्रस्तुत की जा सकती हैं। जैसे—कक्षा शिक्षण, पुस्तकालय, पाठ्यपुस्तक, प्रयोगशाला, भ्रमण, कम्प्यूटर, रेडियो, टेलीविजन आदि जनसंचार साधनों की सहायता से छात्रों के व्यवहार में वांछित परिवर्तन लाये जा सकते हैं।

(3) वाणिज्य में व्यवहार परिवर्तनों के आधार पर मूल्यांकन (Evaluating on the basis of behavioural changes in commerce)

(i) छात्रों के व्यवहार परिवर्तन को ज्ञात करना।
(ii) अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन की तुलना आये व्यवहार परिवर्तन से
(iii) परिणामों को पृष्ठपोषण के रूप में व्यक्त करना।

(i) व्यवहार परिवर्तन—छात्रों के सम्मुख अधिगम क्रियाओं को प्रस्तुत करने के उपरान्त छात्रों के व्यवहार में होने वाले परिवर्तनों को ज्ञात किया जाता है। इन व्यवहार परिवर्तनों को जानने के लिए अध्यापक विभिन्न तकनीकी साधनों का प्रयोग कर सकता है। जैसे—बुद्धिपरीक्षण, व्यक्तित्व परीक्षण, अभिवृत्ति, अभिरुचि परीक्षण, उपलब्धि परीक्षण, साक्षात्कार, अवलोकन, प्रयोगात्मक परीक्षण, संचयी अभिलेख आदि।

(ii) अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन की तुलना आये व्यवहार परिवर्तन से—छात्रों में आये व्यवहार परिवर्तन की तुलना अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन से की जाती है। यदि यह परिवर्तन उसी रूप में लगभग हुए हैं तो माना जाता है कि अध्यापक अपने शिक्षण में सफल रहा है। नवीन राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में माध्यमिक शिक्षा के स्तरों पर वाणिज्य के अधिगम के न्यूनतम स्तरों को निर्धारित किया है।

(iii) वाणिज्य शिक्षण द्वारा आये परिणामों को पृष्ठपोषण के रूप में व्यक्त करना—मूल्यांकन प्रक्रिया का अन्तिम पद परिणामों को पृष्ठपोषण (feed back) के रूप में प्रयोग करना है। वाणिज्य शिक्षण में पृष्ठपोषण से अध्यापक व छात्रों को अपनी स्थिति का पता चल जाता है। जिसके परिणाम के आधार पर अध्यापक अपने शिक्षण में सुधार करता है। वह अपने उद्देश्यों को नये सिरे से निर्धारित करता है। शिक्षण बिन्दुओं का चयन करता है अधिगम क्रियाएँ आयोजित करता है। यह प्रक्रिया तब तक चलती रहती है जब तक कि अध्यापक अपने स्थापित किये वाणिज्य के उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं कर लेता है।

Scanned with CamScanner

वर्तमान में वाणिज्यिक क्षेत्र में मूल्यांकन की भूमिका

(Present Role of Evaluation in Commerce Area)

वर्तमान में वाणिज्यिक क्षेत्र में मूल्यांकन की भूमिका कुछ विभिन्न क्षेत्रों में स्पष्ट की गयी है–

(1) वाणिज्य की परीक्षा में सुधार हेतु मूल्यांकन की भूमिका
(Role of Evaluation in improving the examination system in Commerce)

(2) वाणिज्य के पाठ्यक्रम में सुधार हेतु मूल्यांकन की भूमिका
(Role of Evaluation in improving the examination curriculum of Commerce)

(3) शिक्षण प्रक्रिया में सुधार हेतु मूल्यांकन की भूमिका
(Role of Evaluation in improving the examination system in Commerce)

(1) परीक्षा सुधार हेतु मूल्यांकन की भूमिका (Role of Evaluation in improving the examination system)—वाणिज्य शिक्षण का एकमात्र उद्देश्य बालक के व्यवहार में व्यावसायिक वांछित परिवर्तन लाना है। परीक्षा के माध्यम से यह सुनिश्चित किया जाता है कि बालकों में अपेक्षित व्यवहार परिवर्तन हुए भी हैं अथवा नहीं। यदि हुए हैं तो कितनी सीमा तक हुए हैं। इस प्रकार मापन का उद्देश्य विद्यार्थियों के अर्जित ज्ञान का मूल्यांकन करना ही नहीं है बल्कि इसका लक्ष्य परीक्षा प्रणाली में सुधार करना भी है।

वाणिज्य की परीक्षा लेने से पूर्व परीक्षा के क्षेत्र को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए। छात्रों में कौन-कौन से व्यावहारिक परिवर्तन किये जा चुके हैं जो उनकी प्रगति के सूचक हैं। वर्तमान में छात्रों के पूर्ण व्यावसायिक विकास को ध्यान में रखते हुए, उनकी रुचियों, अभिरुचियों, क्षमताओं, आवश्यकताओं के आधार पर परीक्षा प्रणाली में परिवर्तन किये जा रहे हैं जो कि छात्र के अर्जित किये हुए ज्ञान का लिखित मूल्यांकन ही नहीं बल्कि छात्र में हुए व्यवहार परिवर्तन का सर्वांगीण रूप से मूल्यांकन कर सके। इसी आधार पर परीक्षा प्रणाली में निरन्तर सुधार व प्रयोग किये जा रहे हैं।

(2) वाणिज्य के पाठ्यक्रम में सुधार हेतु मूल्यांकन की भूमिका (Role of Evaluation in improving curriculum of commerce)—मूल्यांकन का महत्त्व वाणिज्य के पाठ्यक्रम के विकास एवं सुधार की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि व्यावहारिक ज्ञान का मापन पूर्णतः वस्तुनिष्ठता के साथ नहीं किया जा सकता है, फिर भी, मूल्यांकन को पाठ्यक्रम के विकास के लिए एक महत्त्वपूर्ण उपकरण (Important tool) मानते हैं। इस सन्दर्भ में मूल्यांकन के दो कार्य हो सकते हैं।

(1) शिक्षण प्रक्रिया में सुधार (Improvement in the teaching process)
(2) छात्र अधिगम में सुधार (Improvement in student's learning)

मूल्यांकन प्रक्रिया के माध्यम से, छात्रों की रुचियों (Interest) छात्रों की उपलब्धि (Achievements), छात्रों का स्तर (level) अभिरुचि (aptitude), कौशल (skill) अधिगम का स्तर (level of learning) आदि से सम्बन्धित सूचनाएँ एकत्रित करके अभिभावकों, अधिकारियों आदि के समन्वय से वाणिज्य के पाठ्यक्रम सुधार हेतु एक विस्तृत भूमिका तैयार की जा सकती है। वाणिज्य के पाठ्यक्रम के निर्माण में छात्रों की मानसिक आयु या स्तर (Mental level) अथवा आयु वर्ग (Age Group) का अवश्य ध्यान रखा जाना चाहिए

के व्यावहारिक परिवर्तन जो उनसे अपेक्षित हैं उनकी प्राप्ति हो सकेगी। डेविस (Davis) के अनुसार छात्र के व्यवहार में जो प्रभावी परिवर्तन किये जा सकते हैं, निम्न हैं–

(1) मूल्यांकन प्रक्रिया के द्वारा छात्रों की व्यावसायिक तथा अन्य क्षमता का मापन करके यह पता लगाना कि निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हुई है अथवा नहीं।
(2) यह पता लगाना कि कौन-सा विशिष्ट उद्देश्य प्राप्त कर सके हैं और कौन-सा नहीं।
(3) शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति को प्राथमिकता क्रम देना।
(4) सर्वोत्तम शिक्षण विधि का चयन करना।
(5) वाणिज्य के पाठ्यक्रम की उपयुक्तता की जाँच करना तथा सहायक सामग्री के महत्त्व को भी समझना।

यह प्रक्रिया छात्र एवं अध्यापक दोनों की दृष्टि से ही सुविधाजनक होगी।

(3) वाणिज्य शिक्षण की प्रक्रिया में सुधार हेतु मूल्यांकन की भूमिका (Role of Evaluation in improving Teaching Process of Commerce)—मूल्यांकन प्रक्रिया के माध्यम से जहाँ अध्यापक एक ओर अपने शिक्षण का मूल्यांकन करता है वहीं दूसरी ओर वह छात्रों की उपलब्धि का भी मापन करता है। मूल्यांकन प्रक्रिया के द्वारा एक वाणिज्य का शिक्षक अपनी शिक्षण सामग्री को मूल्यांकित कर सकता है अर्थात् वह शिक्षण सामग्री को छात्रों के समक्ष प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत कर सकता है। अतः अध्यापक वाणिज्य शिक्षण को प्रभावशाली बनाने के लिए शिक्षण प्रतिमानों (Teaching Models), शिक्षण युक्तियों (Teaching strategies), शिक्षण प्रविधियों (Teaching Techniques) का उचित प्रकार से प्रयोग कर सकता है।

वाणिज्य शिक्षण की प्रक्रिया में सुधार हेतु छात्र, अध्यापक, प्रशासन, अभिभावकों, शिक्षण सामग्री, वातावरण आदि का सहयोग आवश्यक है क्योंकि शिक्षण सामग्री कितनी भी प्रभावशाली क्यों न हो अगर वह छात्रों की आयु, रुचि व स्तर के अनुसार नहीं है तो अध्यापक का परिश्रम व्यर्थ हो सकता है। अतः उपर्युक्त बातों को ध्यान में रखते हुए छात्रों को सीखने के लिए प्रेरित (Motivate) किया जाना चाहिए।

अध्यापक छात्रों की उपलब्धि का मापन करने के लिए वाणिज्य परीक्षा प्रणाली में पुरानी पद्धति से हटकर नयी विभिन्न आयामों से युक्त वस्तुनिष्ठ तथा व्यावहारिक पद्धति को अपना सकता है। जिससे छात्रों की विषयगत उपलब्धि ही नहीं बल्कि छात्रों के व्यावसायिक तथा अन्य क्षेत्रों का भी मूल्यांकन हो सके। इसके लिए अध्यापक संरचनात्मक मूल्यांकन (formative Evaluation) द्वारा छात्रों में हुए व्यवहार परिवर्तन को मूल्यांकित कर सकता है।

संरचनात्मक मूल्यांकन (Formative Evaluation)—संरचनात्मक मूल्यांकन में किसी निर्माणाधीन कार्यक्रम, योजना, प्रक्रिया या सामग्री को अन्तिम रूप देने से पूर्व उसके प्रारम्भिक प्रारूप (Preliminary Draft) का मूल्यांकन किया जाता है। जिससे उसकी संरचनात्मक कमियों को दूर किया जा सके। संरचनात्मक मूल्यांकन का उद्देश्य छात्र द्वारा अर्जित उपलब्धि का आंकलन करके उसमें आवश्यक सुधार करना है। जिससे छात्रों व अध्यापकों को पृष्ठपोषण (Feed Back) प्राप्त होता है। इससे अध्यापक तथा छात्र अपने शैक्षिक प्रयासों को और भी अधिक व्यवस्थित करने के लिए प्रेरित हो सकते हैं। जिससे छात्र अधिक परिश्रम से अध्ययन करने का प्रयास कर सकेंगे जबकि अध्यापकगण अपनी शिक्षण विधियों में सुधार की सम्भावनाएँ खोज सकेंगे।

योगात्मक मूल्यांकन (Summative Evaluation)—योगात्मक मूल्यांकन से अभिप्राय किसी पूर्वनिर्मित (already developed) शैक्षिक कार्यक्रम, योजना या सामग्री की समग्र वांछनीयता (total desirability) को ज्ञात करने की प्रक्रिया से है। योगात्मक मूल्यांकन पहले से स्वीकृत कार्यक्रमों, योजनाओं या सामग्री के भविष्य में यथावत जारी रखने अथवा अनेक

परीक्षणों के प्रकार
(TYPES OF TESTS)

परीक्षणों की सहायता से छात्रों की विभिन्न योग्यताओं तथा गुणों का मापन किया जाता है। शैक्षिक संदर्भ में परीक्षणों के द्वारा ज्ञानात्मक व्यवहार के मापन को अधिक महत्व दिया जाता है। कक्षाध्यापक परीक्षणों का प्रयोग करके समय-समय पर छात्रों की शैक्षिक प्रगति का मापन करता रहता है। शैक्षिक सत्र के अन्त में परीक्षाओं के द्वारा छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि का मापन किया जाता है, जिसके आधार पर उन्हें कक्षा उन्नति दी जाती है। परीक्षण दो प्रकार के होते हैं–

(1) निबन्धात्मक परीक्षण (Essay type Test)

(2) वस्तुनिष्ठ परीक्षण (Objective type Test)

निबन्धात्मक परीक्षण (Essay Type Test)—निबन्धात्मक परीक्षण प्राचीन काल से ही अत्यन्त प्रचलित हैं। इतिहास के अवलोकन से ज्ञात होता है कि 2000 बी. सी. पूर्व भी चीन में निबन्धात्मक प्रश्नों का प्रचलन था। वर्तमान शताब्दी के प्रारम्भ होने तक ये लिखित परीक्षाएँ लेने का एकमात्र ढंग था। इसलिए इस प्रकार के परीक्षणों को परम्परागत परीक्षण भी कहते हैं। निबन्धात्मक परीक्षण अत्यन्त सुविधाजनक होते हैं। प्रश्न निर्माता निबन्धात्मक प्रश्नों को अत्यन्त सरलता व शीघ्रता से तैयार कर लेते हैं। निबन्धात्मक प्रश्नों में से छात्रों से एक विस्तृत (Explicit) उत्तर प्रस्तुत करने की अपेक्षा की जाती है तथा किसी मानक उत्तर से तुलना किये बिना ही परीक्षक छात्रों के द्वारा दिये गये उत्तरों का अंकन कर लेता है। निबन्धात्मक परीक्षण का अंकन करते समय परीक्षक के लिए यह अत्यन्त सरल होता है कि वह प्राप्तांकों के सामान्य स्तर (General level) तथा वितरण की प्रकृति (Nature of Distribution) को नियंत्रित कर सके। किसी उत्तर पर परीक्षक कितने अंक देता है, यह काफी हद तक उसका व्यक्तिगत निर्णय होता है। निबन्धात्मक परीक्षण का कठिनाई स्तर कुछ भी क्यों न हो, परीक्षक अपने प्राप्तांकों को इस तरह से व्यवस्थित कर सकता है कि उसके द्वारा पूर्व निर्धारित प्रतिशत के छात्र, न्यूनतम उत्तीर्ण अंक प्राप्त कर सकें।

निबन्धात्मक प्रश्नों के पक्ष में जो तर्क दिया जाता है, उनमें सबसे प्रमुख तर्क यह है कि निबन्धात्मक परीक्षण छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि का सर्वोत्तम ढंग से मापन करते हैं। छात्रों को पहले से तैयार उत्तर नहीं देना होता है, बल्कि उन्हें उत्तर देने के लिए अपने विषय का अच्छा ज्ञान व बोध होना चाहिए, जिससे वे विभिन्न तथ्यों तथा सिद्धान्तों को एक-दूसरे से सम्बन्धित कर सकें तथा इन विचारों की लिखित अभिव्यक्ति करने में सफल हो सकें। इसके अतिरिक्त निबन्धात्मक परीक्षणों पर छात्रों के द्वारा दिये गये उत्तर उनकी विचार प्रक्रियाओं (Thought Process) की प्रकृति तथा गुणवत्ता का ज्ञान भी प्रदान करते हैं। आलोचनात्मक चिंतन, सृजनशीलता, अभिव्यक्ति क्षमता, ज्ञान का तार्किक संश्लेषण, मूल्यांकन क्षमता आदि योग्यताओं का मापन निबन्धात्मक परीक्षण के द्वारा ही किया जाना सम्भव है।

Scanned with CamScanner

निबन्धात्मक प्रश्नों के प्रकार (Types of Essay Type Questions)—अपेक्षित उत्तर की प्रकृति के आधार पर निबन्धात्मक प्रश्न भी कई प्रकार के हो सकते हैं। यही कारण है कि निबन्धात्मक परीक्षण में अनेक प्रकार के प्रश्नों को सम्मिलित किया जा सकता है। कुछ प्रमुख प्रकार के निबन्धात्मक प्रश्न निम्नवत् होते हैं—

वर्णनात्मक प्रश्न (Descriptive Questions)—इस प्रकार के प्रश्नों में छात्रों से किसी घटना, वस्तु, प्रक्रिया, सिद्धान्त, परिभाषा, सूत्र आदि का वर्णन करने के लिए कहा जाता है। ये सर्वाधिक सरल प्रकार के निबन्धात्मक प्रश्न होते हैं।

व्याख्यात्मक प्रश्न (Explanatory Questions)—इस प्रकार के प्रश्नों में छात्रों से किसी सम्बन्ध या कारण व प्रभाव (Cause and Effect) की तार्किक व्याख्या करने के लिए कहा जाता है। छात्र तर्क देकर अपने पक्ष को स्पष्ट करते हैं।

विवेचनात्मक प्रश्न (Discussion Questions)—इस प्रकार के प्रश्नों में किसी विवादी (Issue) के पक्ष तथा विपक्ष में तर्क देते हुए किसी एक निष्कर्ष पर पहुँचा जाता है। छात्र पक्ष और विपक्ष दोनों पर विचार प्रस्तुत करने के उपरान्त पक्ष या विपक्ष का समर्थन करते हैं।

उदाहरणार्थ प्रश्न (Illustrative Questions)—इस प्रकार के प्रश्नों में छात्रों से अपेक्षा की जाती है कि वे उदाहरणों तथा दृष्टांतों की सहायता से अपनी बात को स्पष्ट करें।

तुलनात्मक प्रश्न (Comparative Questions)—इस प्रकार के प्रश्नों में छात्रों को किन्हीं दो वस्तुओं, विचारों, सिद्धान्तों आदि में समानता व असमानता तथा गुण व दोषों के आधार पर तुलना करनी होती है।

आलोचनात्मक प्रश्न (Critical Questions)– इस प्रकार के प्रश्नों में छात्रों को किसी विचार या पक्ष की आलोचना करनी होती है, जिससे उसकी शुद्धता, पर्याप्तता, सत्यता, दृढ़ता आदि का मूल्यांकन हो सके।

विश्लेषणात्मक प्रश्न (Analytical Questions)—इस प्रकार के प्रश्नों में छात्रों को किसी तथ्य के विभिन्न पक्षों को स्पष्ट करते हुए उनका वर्णन एवं परस्पर सम्बन्ध को स्पष्ट करना होता है।

निबन्धात्मक परीक्षणों की सीमाएँ (Limitations of Essay Type Tests)—निःसंदेह निबन्धात्मक परीक्षणों का अपना एक अलग शैक्षिक महत्व है। परन्तु इसके बावजूद इनमें कुछ ऐसी कमियाँ पायी जाती हैं, जिनकी वजह से मापन व मूल्यांकन के क्षेत्र में इनके उपयोग की प्रायः आलोचना की जाती है। निबन्धात्मक परीक्षणों की मुख्य सीमाएँ निम्नांकित हैं–

(1) निबन्धात्मक परीक्षणों में सम्पूर्ण पाठ्यक्रम तथा शिक्षण उद्देश्यों से अपेक्षाकृत कम संख्या में प्रश्नों का चयन किया जाता है, जिससे विस्तृत पाठ्यक्रम तथा शिक्षण उद्देश्यों का उचित प्रतिनिधित्व नहीं हो पाता है जिससे छात्रों के द्वारा चयनित अध्ययन (Select Study) तथा रटन्त स्मरण (Memorization) पर बल दिया जाता है।

(2) निबन्धात्मक परीक्षणों में न केवल परीक्षार्थी को उत्तर देने में बल्कि परीक्षक को भी अंक देने में अत्यधिक छूट रहती है।

(3) निबन्धात्मक परीक्षण के उत्तर में छात्रों को तथा उनका अंकन करने में परीक्षकों को अधिक समय की आवश्यकता होती है।

(4) निबन्धात्मक परीक्षण के अंकन में त्रुटि होने की संभावना अधिक रहती है। परीक्षक प्रश्नों के उत्तरों की अपने ढंग से व्याख्या कर सकता है।

(5) निबन्धात्मक प्रश्नों की विश्वसनीयता तथा वैधता अपेक्षाकृत कम होती है। न केवल परीक्षण में सम्मिलित किये गये प्रश्नों के निर्धारण में बल्कि छात्रों के द्वारा प्राप्त किये जाने वाले अंकों के निर्धारण में भी संयोग (Chance) तथा भाग्य (Luck) का महत्वपूर्ण स्थान रहता है।

(6) निबन्धात्मक परीक्षणों की प्रकृति के चयनात्मक होने तथा भाग्य से प्रभावित होने शिक्षा प्रणाली को बोझिल बना दिया है।

(7) निबन्धात्मक परीक्षणों का अंकन हेलो प्रभाव (Halo Effect) से प्रभावित हो जाता है। हेलो प्रभाव से तात्पर्य छात्र की अन्य विशेषताओं या सामान्य धारणा के कारण उसके प्राप्तांकों का प्रभावित हो जाना है। अध्यापक छात्रों के बारे में जो धारणा रखते हैं, उनके अनुसार ही उन्हें अंक प्रदान करने की प्रवृत्ति रखते हैं।

(8) निबन्धात्मक परीक्षणों का अंकन करते समय पहले प्रश्नों के उत्तरों की गुणवत्ता बाद के प्रश्नों के अंकन को बुरी तरह से प्रभावित कर सकती है। इसे कैरी ओवर प्रभाव (Carryover Effect) कहते हैं।

निबन्धात्मक परीक्षणों के उपयोग (Use of Essay Type Test)—यद्यपि निबन्धात्मक परीक्षण में अनेक कमियाँ हैं, फिर भी मापन में इनका अपना एक विशेष महत्व है। निबन्धात्मक परीक्षणों की मुख्य आलोचना इनके अविश्वसनीय (Unreliable) तथा अवैध (Invalid) होने के कारण की जाती है, परन्तु यदि सावधानीपूर्वक निबन्धात्मक परीक्षणों का प्रयोग किया जाये तो ये शैक्षिक उपलब्धि का सफलतापूर्वक मापन कर सकते हैं। निम्न परिस्थितियों में निबन्धात्मक परीक्षणों का प्रभावशाली ढंग से उपयोग किया जा सकता है–

(1) जब परीक्षण किये जाने वाले समूह में अपेक्षाकृत कम छात्र हों तथा परीक्षण का पुनः कोई उपयोग न करना हो।

(2) जब शिक्षक छात्रों की लिखित-भाषाभिव्यक्ति को पूर्णरूपेण विकसित करने एवं उसका मापन करने का इच्छुक हो।

(3) जब अध्यापक शैक्षिक उपलब्धि के साथ-साथ उनकी अभिवृत्ति को जानने का इच्छुक हो।

(4) जब अध्यापक छात्रों के द्वारा प्रश्नों पर दिये उत्तरों के अंकन की दृष्टि से स्वयं को सक्षम एवं विश्वसनीय समझता हो।

(5) जब प्रश्नपत्र तैयार करने के लिए उपलब्ध समय कम हो, जबकि उत्तरों का अंकन करने के लिए अधिक समय उपलब्ध हो।

(6) जब छात्रों की उच्च मानसिक योग्यताओं जैसे सृजनात्मकता, विश्लेषण, संश्लेषण, मूल्यांकन, अभिव्यक्ति आदि का मापन करना हो।

निबन्धात्मक प्रश्नों को अत्यन्त सावधानीपूर्वक तैयार करना चाहिए। निबन्धात्मक प्रश्नों को तैयार करते समय निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए–

(1) ऐसे प्रश्न पूछे जाने चाहिए जो छात्रों को अपना सर्वोत्तम ज्ञान प्रदर्शित करने के अवसर दें अर्थात् प्रश्न नई समस्याओं या परिस्थितियों पर आधारित हो न कि कक्षा में अध्यापन के समय बनाई गई थियोरिटी परिस्थितियों पर ही आधारित हों।

(2) ऐसे प्रश्न पूछे जाने चाहिए जिनके उत्तर पर एक मत होना सम्भव हो अर्थात् विशेषज्ञ किसी एक उत्तर को अन्य उत्तरों से श्रेष्ठ बताने में एकमत हो सकें।

(3) प्रश्न परीक्षार्थी की दृष्टि से होने चाहिए, अर्थात् प्रश्न की भाषा ऐसी होनी चाहिए कि परीक्षार्थी स्पष्ट ढंग से समझ सकें कि उनसे किस प्रकार से उत्तर की अपेक्षा की जा रही है।

(4) ऐसे प्रश्न जिनका संक्षिप्त उत्तर दिया जा सके, को वरीयता देनी चाहिए अर्थात् सम्पूर्ण परीक्षण में अधिक संख्या में प्रश्नों को रखना चाहिए।

Scanned with CamScanner

(5) प्रश्नों में आन्तरिक चयन की छूट यथासम्भव नहीं देनी चाहिए।

(6) प्रश्नों की गुणवत्ता जानने के लिए परीक्षक को प्रश्न का आदर्श उत्तर तैयार करना चाहिए।

वस्तुनिष्ठ परीक्षण
(OBJECTIVE TYPE TEST)

वस्तुनिष्ठ परीक्षण का प्रयोग बीसवीं शताब्दी में आरम्भ हुआ, इसलिए इन्हें नवीन प्रकार की परीक्षा भी कहा जाता है। ये परीक्षण तकनीकी दृष्टि से निबन्धात्मक परीक्षण की अपेक्षा अधिक विश्वसनीय व वैध होते हैं। वस्तुनिष्ठ प्रश्नों में प्रत्येक प्रश्न का एक निश्चित सही उत्तर होता है तथा परीक्षार्थी से उसी उत्तर की अपेक्षा की जाती है। अत: किसी वस्तुनिष्ठ प्रश्न पर किसी छात्र द्वारा दिया गया उत्तर या तो सही होगा अथवा गलत होगा। सही होने पर छात्र को पूर्ण अंक प्राप्त होंगे जबकि गलत होने पर कोई अंक प्राप्त नहीं होगा। प्रश्नों के उत्तर की इस प्रवृत्ति की वजह से वस्तुनिष्ठ परीक्षणों का अंकन करते समय परीक्षक को किसी प्रकार की स्वतंत्रता अथवा व्यक्तिगत निर्णय लेने की छूट नहीं होती है, चाहे कोई भी व्यक्ति अंकन करे, किसी छात्र द्वारा प्राप्त अंक वही रहेंगे। प्रश्नों के उत्तर की प्रकृति के आधार पर वस्तुनिष्ठ प्रश्न अनेक प्रकार के हो सकते हैं। वस्तुनिष्ठ परीक्षणों का प्रशासन तथा अंकन कम समय, शीघ्रता एवं पूर्ण यथार्थता से किया जा सकता है। कम्प्यूटरों के प्रयोग से परीक्षणों का अंकन अत्यन्त शीघ्रता एवं पूर्ण यथार्थता से किया जाता हैं। परीक्षणों की विषयनिष्ठता से मुक्त होने के कारण कभी-कभी वस्तुनिष्ठ परीक्षणों को वरीयता दी जाती है।

वस्तुनिष्ठ परीक्षण के लाभ (Advantage of Objective Type Test)—

जैसी कि चर्चा की जा चुकी है, वस्तुनिष्ठ परीक्षण एक नवीन प्रकार के परीक्षण हैं। शैक्षिक मापन व मूल्यांकन के क्षेत्र में इनका प्रयोग दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के लाभ निम्नवत् हैं—

(1) वस्तुनिष्ठ परीक्षणों की संख्या अधिक होती है, जिनके कारण इनमें सम्पूर्ण पाठ्यवस्तु तथा शिक्षण उद्देश्यों का उचित प्रतिनिधित्व सम्भव होता है।

(2) वस्तुनिष्ठ परीक्षणों में प्रश्न स्पष्ट होते हैं, जिससे परीक्षार्थी को उत्तर देने में, परीक्षक को अंकन करने में सुगमता होती है।

(3) वस्तुनिष्ठ परीक्षणों का अंकन सरलता, शीघ्रता तथा त्रुटि रहित ढंग से सम्भव होता है।

(4) वस्तुनिष्ठ परीक्षण निबन्धात्मक परीक्षणों की तुलना में अधिक विश्वसनीय (Reliable) तथा वैध (Valid) होते हैं।

(5) वस्तुनिष्ठ परीक्षणों में सम्मिलित प्रश्नों की रचना भली-भाँति ढंग से करने पर इनकी सहायता से उच्च मानसिक योग्यताओं का मापन भी किया जा सकता है।

वस्तुनिष्ठ परीक्षणों के प्रकार (Types of Objective Type Test)

वस्तुनिष्ठ परीक्षण में प्रश्नों को दो रूपों में रखा जा सकता है—

(1) प्रत्यास्मरण प्रश्न (Recall Type Question)

(2) अभिज्ञान प्रश्न (Recognition Type Question)

(1) प्रत्यास्मरण प्रश्न (Recall Type Question)—इस प्रकार के प्रश्नों के द्वारा छात्रों की स्मरण शक्ति की जाँच की जाती है। इन प्रश्नों को पुन: दो उपभागों में विभाजित किया जा सकता है—

प्रश्नों के प्रकार
(Types of Questions)

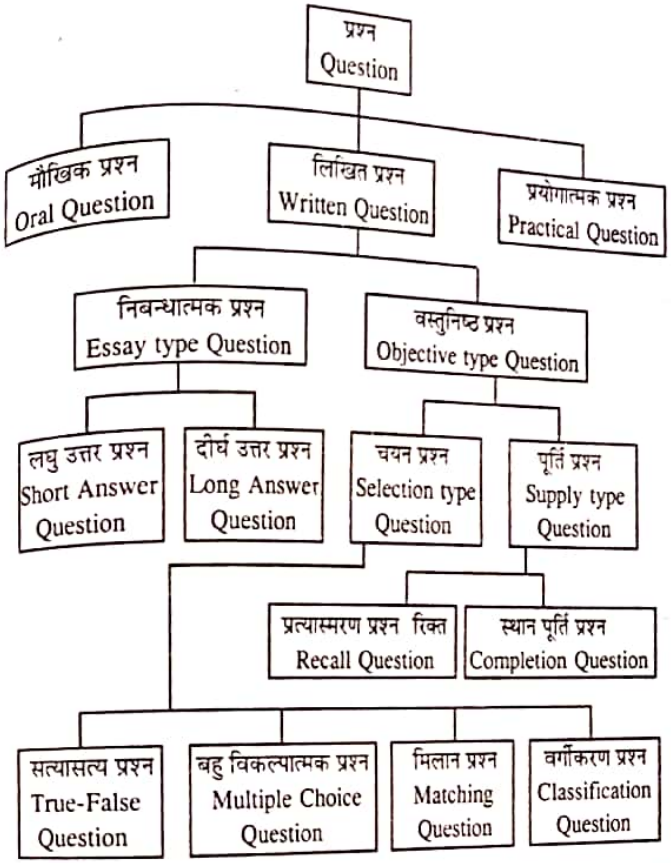

(A) साधारण प्रत्यास्मरण प्रश्न (Simple Recall Type Question)—ये वे प्रश्न हैं जिनका उत्तर छात्र स्मरण शक्ति के आधार पर देते हैं। उदाहरण के लिए—

निर्देश—निम्नांकित प्रश्नों के उत्तर उनके सम्मुख कोष्ठक में अंकित कीजिए—

(1) वाणिज्य का जन्मदाता किसे कहा जाता है ? ( )

(2) दोहरा लेखा प्रणाली की शुरूआत किसने की ? ( )

(3) आयात-निर्यात बैंक कहाँ स्थित है ? ( )

(4) व्यक्तिगत खाते का क्या नियम है ? ( )

(5) पुस्तपालन का प्रारम्भ कहाँ हुआ ? ( )

(6) रोकड़ बही का कहाँ प्रयोग होता है ? ( )

(B) रिक्त स्थान पूर्ति प्रश्न (Completion Type Question)—इस प्रकार के प्रश्न रिक्त स्थान युक्त वाक्य अथवा अधूरे वाक्यों के रूप में दिए जाते हैं और छात्रों को इन रिक्त स्थानों की उपयुक्त शब्दों द्वारा पूर्ति करनी होती है। उदाहरण के लिए—

Scanned with CamScanner

निर्देश—निम्नलिखित वाक्यों में रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए—

(1) पुस्तपालन का प्रारम्भ सर्वप्रथम.....में हुआ। (1494/1594/1696)
(2) पुस्तपालन.....के लेखे किए जाते हैं। (वित्तीय स्वभाव/सभी प्रकार)
(3) खाते.....प्रकार के होते हैं। (तीन/दो/चार)
(4) हानियों को.....किया जाता है। (धनी/ऋणी)
(5) जर्नल में.....खाते होते हैं। (पाँच/चार)

(2) अभिज्ञान प्रश्न (Recognition Type Question)—वे प्रश्न जिनके द्वारा छात्रों की पहचानने की शक्ति को जाँचा जाता है, उन्हें अभिज्ञान प्रश्न कहा जाता है। इन प्रश्नों को ही चार उपभेदों में विभाजित किया जा सकता है।

निर्देश—निम्नलिखित कथनों को पढ़कर सही कथन के आगे 'सत्य' और गलत कथन के आगे 'असत्य' शब्द लिखिए।

(1) दोहरा लेखा प्रणाली में प्रत्येक धनी का ऋणी होता है। ( )
(2) दोहरा लेखा प्रणाली वैज्ञानिक है। ( )
(3) क्या पुस्तपालन के आविष्कारक लूका पेसियोली थे ? ( )
(4) भारतीय बही खाता प्रणाली में लेखा किस स्याही से अधिकतर किया जाता है ? (काली/नीली)
(5) रोकड़ बही का बायाँ पक्ष क्या कहलाता है ? (जमा/नाम)
(6) नकद बिक्री किस पुस्तक में लिखी जाती है ? (नाम नकल बही/रोकड़ बही)

(ii) बहु विकल्पीय प्रश्न (Multiple Choice Question)—इसमें एक प्रश्न अथवा एक कथन के उत्तर के रूप में कई विकल्प दिये रहते हैं। इनमें से छात्रों को सही अथवा सबसे उपयुक्त उत्तर को ढूँढ़ना पड़ता है। इन्हें बहु विकल्पात्मक प्रश्नों के नाम से जाना जाता है। उदाहरण के लिए—

(1) फ्रेंमिंग मशीनें किस काम आती हैं ?
(a) टिकट छापने के (b) टाइप के
(c) नकल उतारने के (d) डाक तोलने के।

(2) जर्नल में रोकड़ देने वाले को किया जाता है—
(a) धनी (b) ऋणी
(c) दोनों ही (d) इनमें से कोई नहीं।

(3) मशीनरी खाता है—
(a) व्यक्तिगत खाता (b) वास्तविक खाता
(c) नाममात्र का खाता (d) इनमें से कोई नहीं।

(4) पार्षद सीमा नियम कम्पनी का प्रपत्र है—
(a) अनिवार्य (b) एच्छिक
(c) दोनों (d) इनमें से कोई नहीं।

(iii) मिलान प्रश्न (Matching Type Question)—इन प्रश्नों में छात्रों को दो सूचियों के विषय की समानता या सम्बन्ध अथवा तुलना करने के लिए कहा जाता है। इसके अतिरिक्त इसमें पूर्ण तथ्यों को दो भागों में विभाजित करके भी रखा जा सकता है और उनको छात्रों द्वारा पूर्ण करवाया जा सकता है। ऐसे कथन बिना किसी क्रम के दिए जाते हैं। उदाहरण के लिए—

निर्देश—भाग 'अ' में दी गयी वस्तुओं का सम्बन्ध भाग 'ब' में दिये गये तथ्यों से शुद्धता पूर्वक करिये—

भाग अ	भाग ब
एक्जिम बैंक	व्यक्तिगत खाता
कैलकुलेटर	डालर
पुस्तपालन	1 April 1982
राम का खाता	पास्कल
अमरीका	लूका पेसियोली

Question 2—निर्देश—भाग 'अ' और 'ब' में से उपयुक्त शब्दों का मिलान कर भाग 'अ' के समक्ष रिक्त कोष्टक में लिखिए—

भाग अ		भाग ब
बांग्लादेश	( )	रुपया
नेपाल	( )	टका
इटली	( )	पौण्ड
इंग्लैण्ड	( )	लीरा
अमेरिका	( )	रूबल
रूस	( )	डालर

(iv) वर्गीकरण प्रश्न (Classification Type Question)—इस प्रकार के प्रश्नों को तुलनात्मक प्रश्न भी कहा जाता है। इन प्रश्नों के अन्तर्गत कुछ ऐसे शब्दों के समूह को छात्रों के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है जिनमें से एक शब्द बेमेल असंगत होता है। छात्रों से उसी शब्द को छाँटने के लिए कहा जाता है। उदाहरण के लिए—

निर्देश—नीचे प्रत्येक पंक्ति में चार शब्द दिए गये हैं। प्रत्येक पंक्ति के शब्दों में एक शब्द ऐसा है जो अन्य शब्दों की श्रेणी में नहीं आता है। प्रत्येक पंक्ति में से ऐसे शब्द को छाँटकर रिक्त कोष्टक में लिखिए— उत्तर

(1) पार्षद सीमानियम, पार्षद अन्तर्नियम, प्रविवरण, रोकड़ बही। ( )
(2) व्यक्तिगत खाता, पुस्तपालन, वास्तविक खाता। ( )
(3) श्रम, पूँजी, बचत, संगठन। ( )
(4) बांग्लादेश, अमरीका, भारत, नेपाल। ( )
(5) बैंक, बीमा, परिवहन, भण्डारण, निर्माण। ( )

वस्तुनिष्ठ परीक्षण की निर्माण विधि
(CONSTRUCTION OF OBJECTIVE TESTS)

स्टेनले तथा रॉस के अनुसार परीक्षा के निर्माण में चार सोपानों का अनुसरण किया जाता है—

प्रथम सोपान-नियोजन (Planning)

(1) उद्देश्यों का निर्धारण करना।
(2) उद्देश्यों को व्यावहारिक रूप में लिखना।
(3) पाठ्यवस्तु का विश्लेषण करना।
(4) प्रश्नों के रूप का निर्धारण करना तथा कुल प्रश्नों की संख्या का निर्धारण करना।
(5) विशिष्टीकरण तालिका (Table of Specification) को बनाना जो द्वितीय सोपान के लिए निर्देशन दे सके।
(6) परीक्षा आकृति, प्रशासन का समय, मुद्रण आदि के सम्बन्ध में निर्णय लेना।

Scanned with CamScanner

द्वितीय सोपान पदों की रचना करना (Preparing Test Items)

(1) पदों की रचना करने में विशिष्टीकरण तालिका का अनुसरण किया जाता है।

(2) दो प्रकार के पदों की रचना की जाती है।

(अ) प्रत्यास्मरण रूप (Recall type) :

(1) सामान्य प्रत्यास्मरण (Simple recall)

(2) रिक्त स्थान की पूर्ति (Completion type)

(ब) अभिज्ञान रूप (Recognition type) :

(1) एकान्तर अनुक्रिया रूप (Alternative response) अथवा सत्य/असत्य रूप (True-False type)।

(2) बहु-निर्वाचन रूप (Multiple choice type)।

(3) समानता रूप (Matching type)।

(4) वर्गीकरण रूप (Classification type)।

(5) सादृश-अनुभव रूप (Analogy type)।

(3) प्रत्येक प्रकार के प्रश्नों का अध्ययन निम्न पक्षों में किया जाता है–

(i) रूप का अर्थ एवं परिभाषा।

(ii) अनुमान से सही करने के अवसर।

(iii) उपयोगिता तथा सीमाएँ।

(iv) सावधानियाँ।

(4) नियम तथा सुझाव जिनको पदों के निर्माण में ध्यान में रखना चाहिए।

तृतीय सोपान-परीक्षा की जाँच करना (Try out the Test)

(1) परीक्षा की पूर्व-जाँच करना (Pre-try out) यह छोटे समूह पर की जाती है।

(2) परीक्षा की सही जाँच करना (Proper Try out)

(i) पद-विश्लेषण (Item Analysis)

(ii) पद-विश्वसनीयता तथा वैधता की गणना करना।

(iii) पदों के चयन के लिए मानदण्डों को निर्धारित करना।

(iv) परीक्षा का अन्तिम रूप तैयार करना।

(3) परीक्षा की अन्तिम जाँच के लिए बड़े समूह पर प्रयोग करना।

चतुर्थ सोपान-मूल्यांकन (Evaluation)

(1) विशाल समूह पर परीक्षा का प्रशासन करना।

(2) अंकन करना और प्राप्त प्रदत्तों की व्यवस्था करना।

(3) विश्वसनीय गुणक की गणना करना।

(4) वैधता गुणक की गणना करना।

(5) मानक स्तरों (Norms) का विकास करना।

(6) अनुसूची (Manual) तैयार करना।

अधिगम-उद्देश्य के मूल्यांकन में मानदण्ड-परीक्षा प्रयुक्त की जाती है। इसकी प्रमुख विशेषता यह है कि यह उद्देश्य-केन्द्रित होती है। मानदण्ड-परीक्षा विश्वसनीय तथा वैध होनी चाहिए, परन्तु यह आवश्यक नहीं कि उसे प्रामाणिक बनाया जाये। एक उत्तम मानदण्ड-परीक्षा के निर्माण में उपर्युक्त चारों सोपानों का अनुसरण किया जाता है। इसमें अधिगम के उद्देश्यों, कार्य-विश्लेषण तथा अधिगम-स्वरूपों को विशेष महत्व दिया जाता है। वस्तुनिष्ठ परीक्षा का रूप ही साधारणत: मानदण्ड-परीक्षाओं में प्रयुक्त किया जाता है। इसे ज्ञान, बोध तथा प्रयोग उद्देश्यों के मूल्यांकन के लिए सफलतापूर्वक प्रयोग किया जाता हैं। वर्तमान में यह पद्धति

लोकप्रिय होती जा रही है। इस परीक्षण में वे सब गुण विद्यमान हैं जो एक उत्तम परीक्षण में होने चाहिए।

वस्तुनिष्ठ परीक्षण के गुण
(MERITS OF OBJECTIVE TYPE TEST)

वाणिज्य में वस्तुनिष्ठ परीक्षण अन्य परीक्षणों से किस प्रकार उत्तम है यह निम्न प्रकार स्पष्ट है–

(1) विश्वसनीयता (Reliability)—जब विभिन्न परिस्थितियों में परीक्षण करने पर भी अंकों में समानता पायी जाती है तो उसे विश्वसनीयता कहते हैं। उदाहरण के लिए, यदि किसी बालक को किसी परीक्षा में 20 अंक में से 8 अंक प्राप्त होते हैं तो चाहे जिन परिस्थितियों में परीक्षण किया जाये, उस परीक्षा में उसे सदैव 8 अंक मिलने चाहिए। वस्तुनिष्ठ परीक्षणों में यह गुण पाया जाता है।

(2) वैधता (Validity)—हम जिन उद्देश्यों को लेकर चले हैं, यदि परीक्षा द्वारा उन्हें प्राप्त कर लेते हैं तो उसे वैध परीक्षा कहते हैं। निबन्धात्मक परीक्षण में इस गुण का अभाव पाया जाता है, जबकि वस्तुनिष्ठ परीक्षण छात्रों की उसी निर्धारित योग्यता को मापने में समर्थ है जिसके लिए इसका निर्माण किया गया है। अत: यह परीक्षण वैध है।

(3) विस्तृत प्रतिनिधि (Comprehensiveness)—वस्तुनिष्ठ परीक्षण द्वारा पाठ्यक्रम के बहुत बड़े भाग का प्रतिनिधित्व किया जा सकता है। अत: यह उत्तम परीक्षण विधि है। ग्रीन महोदय ने लिखा है कि "वस्तुनिष्ठ परीक्षण अपनी प्रकृति के अनुसार इतने विस्तृत क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करता है कि उसके प्रयोग द्वारा जो परिणाम प्राप्त होते हैं वे घनिष्ठ रूप से उन परिणामों के समान होते हैं जो किसी विषय में छात्र के कार्य की जाँच करके प्राप्त होते हैं।"

(4) वस्तुनिष्ठता (Objectivity)—निबन्धात्मक परीक्षणों पर व्यक्तिगत निर्णय, विचार, धारणा, मनोदशा आदि का प्रभाव पड़ता है, जबकि वस्तुनिष्ठ परीक्षणों में इनका कोई स्थान नहीं होता है। इन परीक्षणों में एक व्यक्ति या विभिन्न व्यक्तियों द्वारा अंकन किये जाने पर अंकों में कोई अन्तर नहीं पाया जाता है अर्थात् इनके द्वारा प्रदान किए गये अंक समान होते हैं।

(5) समय की बचत (Economy of Time)—निबन्धात्मक परीक्षण में छात्रों को प्रश्नों का उत्तर देने में बहुत समय लगता है, जबकि वस्तुनिष्ठ परीक्षण में छात्र कम समय में बहुत से प्रश्नों का उत्तर देने में समर्थ होते हैं।

(6) अंकन की सरलता (Easy to Score)—वस्तुनिष्ठ परीक्षण में अध्यापक को मूल्यांकन के लिए किसी बौद्धिक योग्यता अथवा प्राविधिक कुशलता की आवश्यकता नहीं होती है। वह कुन्जी (Scoring Key) की सहायता से कम समय में सुगमतापूर्वक अंकन कर लेता है।

(7) विभेदीकरण (Discrimination)—वस्तुनिष्ठ परीक्षणों में यह भी गुण पाये जाते हैं कि वह उच्च बुद्धि वाले एवं निम्न बुद्धि वाले छात्रों के भेद को स्पष्ट कर सकें।

परीक्षण परिणामों के सुधारात्मक उपायों के रूप में प्रयोग
(The Use of Test Results as a Basis for Remedial Measures)

गुड (Good) के अनुसार—"निदान का अर्थ है अधिगम सम्बन्धी कठिनाइयों और कमियों के स्वरूप का निर्धारण करना" (Diagnosis means determination of the nature of learning difficulties and deficiencies) अध्यापक छात्रों की सीखने से सम्बन्धी त्रुटियों तथा कमियों को जानने के लिए जिस शैक्षिक विधि का प्रयोग करता है उसे निदानात्मक शिक्षण कहते हैं। निदानात्मक शिक्षण क्षेत्र में विद्यालय पाठ्यक्रम के सभी विषय जैसे वाचन, लेखन, उच्चारण, व्याकरण, अंकगणित, बहीखाता लेखन, टंकण, आशुलिपि

Scanned with CamScanner

आदि आते हैं। वर्तमान समय में स्कूलों और महाविद्यालयों में वाणिज्य शिक्षण एक महत्वपूर्ण विषय बनता जा रहा है। वाणिज्य शिक्षण एक जटिल और तकनीकी विषय बन गया है। इसके अन्तर्गत छात्रों को book keeping, accounting, auditing, typing, short-hand, advanced accounting आदि का ज्ञान दिया जाता है। सभी विद्यार्थी इस विषय को ठीक प्रकार से नहीं समझ पाते। इसके लिए अध्यापक कुछ निदानात्मक परीक्षण लेता है और यह निश्चित करता है कि छात्र किस क्षेत्र में कमजोर है।

क्रो एवं क्रो (Crow and Crow) के अनुसार—निदानात्मक परीक्षणों का निर्माण छात्रों की अधिगम सम्बन्धी विशिष्ट कठिनाईयों का ज्ञान प्राप्त करने या निदान करने के लिए किया जाता है। इसके द्वारा छात्रों की कमजोरियों और योग्यताओं का पता लगाकर उपचारात्मक शिक्षण का प्रयोग किया जाता है।

वाणिज्य के क्षेत्र में निदानात्मक परीक्षण के लिए अध्यापक स्मरण स्तर (memory level), समझाने के स्तर (Understanding level) और रचनात्मक स्तर (Reflective level) पर मौखिक परीक्षा (oral test), वस्तुनिष्ठ परीक्षा (objective type test) कौशलात्मक परीक्षा (Skill test) तथा अभिरुचि परीक्षा (aptitude test) लेता है। इन परीक्षणों के आधार पर अध्यापक देखता है कि छात्रों ने बहीखाता लिखते समय कौन-सी गलतियाँ की हैं, आशुलिपि (short hand) में लिखने के समय कितनी गलतियाँ की हैं तथा कितनी गति से (Dictation) ली गई है। इसी प्रकार टाइपिंग करते समय कितनी गलतियाँ की हैं तथा कितनी गति से टाइप की गई है। इन परीक्षणों के आधार पर अध्यापक छात्रों की त्रुटियों को जानकर उनका उपचारात्मक उपाय करता है। उपचारात्मक उपाय से अभिप्राय कमियों, त्रुटियों और बुराइयों को दूर करके उनके उपचार करने से है।"

यौकेम व सिम्पसन के अनुसार—"उपचारात्मक शिक्षण उचित रूप में निदानात्मक शिक्षण के बाद में आता है।" (Remedial teaching logically follows diagnostic teaching.)

वाणिज्य शिक्षण के अन्तर्गत अध्यापक निदानात्मक परीक्षण परिणामों के आधार पर उपचारात्मक उपायों को प्रयोग करके छात्रों की ज्ञान सम्बन्धी त्रुटियों और अकुशलताओं को दूर करता है। अध्यापक प्रत्येक छात्र के परीक्षण परिणामों के आधार पर अधिगम सम्बन्धी दोषों का व्यक्तिगत रूप से अध्ययन करके उनको दूर करने का उपाय बताता है। छात्रों को व्यक्तिगत विभिन्नताओं के आधार पर छोटे समूहों में विभाजित करके शिक्षण व्यवस्था करता है। यदि छात्रों में उच्चारण सम्बन्धी दोष है तो अध्यापक उनका शुद्ध उच्चारण करके छात्रों को उनका अभ्यास कराता है। यदि छात्रों की टंकण और आशुलिपि की गति (type and shorthand speed) धीमी है तो अध्यापक उसमें वृद्धि करने के लिए छात्रों को अभ्यास कराके उन्हें प्रोत्साहित करता है। यदि बहीखाता और रोकड़ बुक (cash book) लिखने में अपर्याप्त ज्ञान है तो उसके लिए भी अध्यापक छात्रों को बार-बार रोकड़ बुक तथा बही खाता लिखने के लिए प्रोत्साहित करता है। यदि छात्रों की शब्दावली (Vocabulary) कम विस्तृत है तो अध्यापक छात्रों को शब्द कोष से नवीन शब्दों के अर्थों को देखने के लिए प्रोत्साहित करता है। उपचारात्मक उपायों के लिए प्रमाणित परीक्षण (standardized test) की अपेक्षा शिक्षक निर्मित वस्तुनिष्ठ परीक्षण (Teacher made objective type test) अधिक उपयोगी हैं। अत: देखा जाता है कि उपचारात्मक उपायों का वाणिज्य शिक्षण के क्षेत्र में विशेष महत्व है।

Scanned with CamScanner

2. ... मूल्यांकन।

1. सतत् मूल्यांकन
(CONTINUOUS EVALUATION)

सतत् मूल्यांकन का आशय उस आंकलन या परीक्षण से है, जिससे शिक्षार्थी के अध्ययन उपलब्धियों का प्रतिमाह आंकलन किया जाता है। सतत् मूल्यांकन प्रक्रिया में सामान्यत: म पाठ्यक्रम को दस इकाइयों में विभक्त कर दिया जाता है। उस इकाई का अध्यापन कराने के स्वाभाविक रूप से प्रतिमाह परीक्षण किया जाता है तथा उसका व्यवस्थित लेखा-जोखा रखा है। प्राथमिक एवं पूर्ण माध्यमिक कक्षाओं में सतत् प्रक्रिया हर जगह प्रचलित नहीं हैं किन्तु यह रूप में प्रचलित नहीं है जिस प्रकार कि सतत् मूल्यांकन के मौलिक स्वरूप में होनी चाहिए। केवल ज्ञानार्जन के शैक्षिक कौशल का मूल्यांकन ही किया जाता है। शैक्षिकेत्तर उपलब्धियों का मूल्यांकन नहीं किया जाता है। इसे निरन्तर मूल्यांकन योजना भी कहते हैं।

सतत् मूल्यांकन का आयोजन (Planning of Continuous Evaluation)

परीक्षाएँ हमारी शिक्षा व्यवस्था पर बहुत अधिक प्रभाव डालती हैं। ऐसा विशेष रूप से इस होता है, क्योंकि अधिकांश रूप में परीक्षाओं द्वारा विद्यार्थियों की सफलता का मापन किया जाता इस मापन का उद्देश्य विद्यार्थियों का वर्गीकरण प्रमाणीकरण और श्रेणीकरण होता है। विद्यार्थियों कमजोरी के निदानीकरण, शैक्षिक योजना की कुशलता के मूल्यांकन तथा ज्ञानार्जन आदि को सु एवं निर्देश करने में परीक्षा का जो महत्त्वपूर्ण योगदान हो सकता है, उसकी लगभग पूर्ण रूप से उ की जा सकती है। समस्त शैक्षिक कार्यक्रम परीक्षापरक हो गया है। शिक्षकों के पास इसके अ कोई विकल्प नहीं है कि वे किसी न किसी ढंग से विद्यार्थियों को परीक्षा में सफलता प्राप्त करने लिए तैयार करें। इस स्थिति को सुधारने के लिए सतत् मूल्यांकन प्रक्रिया के अन्तर्गत एक सम्भा ढंग से परीक्षा में इकाई पद्धति का प्रयोग हो सकता है। शिक्षण एवं परीक्षा में इकाई पद्धति के प्र से इस समस्या का समाधान निकलने की क्षमता है, क्योंकि इससे शिक्षण अधिक उपयोगी एवं ल आधारित हो सकता है, इससे मूल्यांकन को सम्पूर्ण शिक्षण तथा ज्ञानार्जन का अभिन्न अंग बनाने सहायता मिलती है शैक्षिक निवेश की प्रक्रिया स्वरूप में सुधार होगा।

Scanned with CamScanner

सतत् मूल्यांकन का महत्त्व (Importance of Continuous Evaluation)

कक्षोन्नति का प्रमुख साधन वार्षिक परीक्षा तथा उसके परिणाम होते हैं। इस प्रथा से सभी भली-भाँति परिचित हैं। सम्पूर्ण स्कूल संकल्पना के कार्यक्रम अन्तर्निहित सतत् मूल्यांकन इस समस्या का प्रमुख समाधान है। सतत् मूल्यांकन के माध्यम से बालक की योग्यता तथा अयोग्यता के बारे में नियमित रूप से उपयोगी तत्वों का संकलन सम्भव हो सकेगा। इन तथ्यों का प्रयोग एक ऐसे उपचारात्मक शिक्षण यन्त्र तथा समृद्ध शिक्षण के रूप में किया जा सकेगा, जिससे कि बालकों के व्यक्तित्व के विभिन्न पहलुओं का अधिकतम् विकास किया जा सके और शिक्षा के लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। इस पृष्ठपोषण से न केवल विद्यार्थी को मापन, वर्गीकरण एवं प्रमाणीकरण में सहायता मिलेगी अपितु उसकी कार्य कुशलता एवं सफलता के स्तर को सुधारने की तथा इस प्रकार के रचनात्मक मूल्यांकन के द्वारा उसके अधिकतम विकास की व्यवस्था को सक्षम बनाया जा सकेगा। इस प्रकार सतत् मूल्यांकन के परिणाम हमें शीघ्र प्राप्त होंगे और सतत् व्यापक मूल्यांकन स्वयं लक्ष्य न होकर लक्ष्य प्राप्त करने का साधन है। विद्यार्थी परीक्षा के भय से मुक्त हो सकेंगे तथा सहज भाव से मूल्यांकन के लिए तत्पर रहेंगें।

सतत् मूल्यांकन सार्थक ज्ञान के लिए निदान का पथ प्रशस्त करता है। यदि एक प्राथमिक शिक्षक अपने ज्ञान तथा कार्यकुशलता की सहायता से मूल्यांकन का प्रयोग विद्यार्थी के ज्ञार्नाजन की कठिनाइयों और उसके कारणों का निदान करने के लिए कर सकता है। वह उचित उपचारात्मक साधन अपनाकर उसकी प्रगति तथा क्षति को कम कर सकता है तथा इस तरह उसे अधिकतम ज्ञान प्राप्त करने में सहायता कर सकता है। सार्थक ज्ञान का अर्थ है—विद्यार्थी की वांछनीय योग्यताओं तथा क्षमताओं का विकास जिससे वह भविष्य में अधिकतम लाभ प्राप्त कर सके, विद्यार्थी की रुचि ज्ञार्नाजन के लिए उपलब्ध समय एवं शिक्षा से लाभ उठाने की क्षमता प्राप्त होती है।

2. व्यापक मूल्यांकन
(COMPREHENSIVE EVALUATION)

दक्षता आधारित मूल्यांकन प्रत्येक दिन कक्षा में शिक्षण के अन्तर्गत छात्रों में दक्षता सिखाने के बाद उसका मूल्यांकन किया जाता है किन्तु छात्रों की दक्षता के अतिरिक्त उसमें संज्ञानात्मक पक्ष, भावात्मक पक्ष तथा क्रियात्मक पक्ष भी सम्मिलित होते हैं, जिनका मूल्यांकन दक्षताधारित विधि से सम्भव नहीं होता। इसलिए छात्रों के विकास हेतु व्यापक मूल्यांकन की आवश्यकता होती है। व्यापक मूल्यांकन की दृष्टि से विद्यार्थी के अग्रलिखित पक्षों पर ध्यान दिया जाता है—

(i) वैयक्तिक एवं सामाजिक सद्गुण—इसके अन्तर्गत समयबद्धता, नियमबद्धता, नैतिकता, उत्तरदायित्व की भावना, स्वच्छता एवं सहयोग, सत्यनिष्ठता, नियमितता एवं समाजसेवा आदि गुण सम्मिलित हैं।

(ii) पाठ्यक्रम सम्बन्धी क्रियाएँ—इसके अन्तर्गत वाद-विवाद, खेलकूद, भाषण, नाटक, तैरना, स्काउटिंग तथा कार्यानुभव आदि क्रियाएँ सम्मिलित हैं, जिनका मूल्यांकन अति आवश्यक होता है।

(iii) स्वास्थ्य विवरण—इसके अन्तर्गत लम्बाई, भार, स्वास्थ्य तथा शारीरिक विकास आदि सम्मिलित हैं।

(iv) छात्र की अभिरुचियाँ—इसके अन्तर्गत साहित्य, संगीत कला तथा प्रकृति दर्शन सम्मिलित हैं।

(v) अभिवृत्तियाँ—इसके अन्तर्गत समाजवाद, राष्ट्रीय एवं भावात्मक एकता आती है।

Scanned with CamScanner

सतत् मूल्यांकन के क्षेत्र
(SCOPE OF CONTINUOUS EVALUATION)

शिक्षा में सतत् मूल्यांकन का प्रयोग प्राचीनकाल से होता चला आ रहा है। इसके अनुसार शिक्षण के उद्देश्यों, सीखने के अनुभवों, परीक्षणों में प्रमुख सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। सतत् मूल्यांकन में शिक्षण तथा परीक्षण दोनों ही क्रियाएँ एक साथ चलती हैं। मूल्यांकन एक सतत् तथा व्यापक क्रिया मानी जाती है। सतत् मूल्यांकन में छात्रों के व्यक्तित्व सम्बन्धी निम्न पक्ष आते हैं–

(1) छात्र की अभिरुचि (Aptitude of Student)—मुख्यत: समझा जाता है कि जो पिछली कक्षा में अच्छे अंकों से उत्तीर्ण हुए हैं, वे अगली कक्षा में भी अच्छे अंक प्राप्त करेंगे। परीक्षाएँ बालक में अर्जित ज्ञान का मापन करती हैं यह वचन सदैव विश्वसनीय नहीं होता है।

(2) छात्र की सृजनात्मकता (Creativity of Student)—आज के समय में सृजनात्मकता का महत्त्व बढ़ता जा रहा है। यह एक प्रमुख समस्या है कि शैक्षिक प्रक्रिया में सृजनात्मकता का विकास कैसे हो? परन्तु सृजनात्मकता के मापन के लिए अभी कोई सन्तोषजनक उपकरण नहीं है।

(3) ज्ञान (Knowledge)—मूल्यांकन किसी भी विद्यार्थी के ज्ञान का मापन करता है कि उस व्यक्ति का ज्ञान किस कोटि का है तथा उसके आधार पर उसके भविष्य के विषय में सम्भावना व्यक्त करता है।

(4) पारिवारिक रुचियाँ (Interests of Family)—पारिवारिक सम्बन्धों का मूल्यांकन करना कठिन होता है। व्यक्ति में अनेक विशेषताएँ पाई जाती हैं। उसकी यह विशेषताएँ परिस्थितियों के अनुसार बदलती रहती हैं।

(5) बोध (Understanding)—किसी व्यक्ति के ज्ञान का मापन भी उसके आधार पर हो सकता है। अत: मूल्यांकन के क्षेत्र में व्यक्ति की समझ शक्ति का मापन करना तथा आवश्यक निर्देश में सहयता करना है।

(6) वैयक्तिक रुचियाँ (Individual Interest)—अभिरुचि परीक्षणों, प्रश्नावली तथा साक्षात्कार के द्वारा वैयक्तिक रुचियों का मापन किया जाता है।

(7) शारीरिक स्थिति तथा स्वास्थ्य (Health and Physical Status)—शारीरिक स्थिति का मापन अति आवश्यक होता है। इसके लिए 'प्रश्नावली' 'स्वास्थ्य इतिहास' तथा निरीक्षण पद्धतियाँ उपयुक्त होती हैं। स्वास्थ्य तथा शारीरिक ये दोनों स्वयं में उतनी महत्त्वपूर्ण हैं कि बिना इन तत्वों के लिए कोई भी मूल्यांकन पद्धति अधूरी रह जाएगी।

(8) अनुप्रयोग (Application)—यह ज्ञात किया जा सकता है कि किस सीमा तक विद्यार्थी प्राप्त ज्ञान का प्रयोग करता है।

(9) विद्यार्थी की शैक्षिक उपलब्धि (Educational Achievement)—शैक्षिक उपलब्धि ज्ञात करने के अनेक ढंग होते है। परीक्षाओं के प्राप्तांक, प्रमापीकृत परीक्षाओं के परिणाम तथा विद्यालय की क्रियाएँ प्रमुख होती हैं।

(10) विद्यार्थी की त्रुटियाँ (Mistakes of Student)—मूल्यांकन के माध्यम से छात्र की इस बात की जाँच हो जाती है कि वह त्रुटियाँ क्यों कर रहा है तथा उन त्रुटियों का निवारण कैसे किया जा सकता है?

सतत् मूल्यांकन की कार्य प्रणाली तथा सोपान
(PROCEDURE AND STEPS OF CONTINUOUS EVALUATION)

मूल्यांकन की प्रक्रिया पूर्ण रूप से मनोवैज्ञानिक है। सतत् मूल्यांकन के द्वारा विद्यार्थी को अपने साफल्य में सहायता मिलती है। वह अध्ययन करने को तैयार रहता है। मूल्यांकन की प्रविधियों का

Scanned with CamScanner

इसलिए उद्देश्यपूर्ण एवं विश्वसनीय होना आवश्यक है। सतत् मूल्यांकन के लिए जो भी विधि अपनाई जाए वह पूर्ण रूप से स्पष्ट होनी चाहिए उसका प्रमुख आधार मापन की क्रिया होना चाहिए। इसीलिए उचित मापदण्डों का निर्धारण पहले से कर लेना चाहिए। अगर ऐसा नहीं किया गया तो सतत् मूल्यांकन असम्भव है। सतत् मूल्यांकन में निम्नलिखित सोपानों का प्रयोग किया जाना आवश्यक है–

(1) उद्देश्य की व्याख्या—जिस उद्देश्य का निर्धारण किया गया है, उसकी स्पष्ट व्याख्या की जानी चाहिए।

(2) परिस्थिति का ज्ञान—विद्यार्थियों को ऐसी परिस्थिति में रखा जाना चाहिए जहाँ से वांछित व्यवहार को प्रदर्शित कर सकें, अर्थात् यह परिस्थिति ऐसी होनी चाहिए कि जो व्यवहार की अभिव्यक्ति में सहायता कर सके इस प्रकार परिस्थिति का ज्ञान मूल्यांकन के लिए अत्यधिक आवश्यक है।

(3) प्रविधि का प्रयोग—बालक में हुए व्यवहारिक परिवर्तनों को जानने के लिए प्रविधि का उपयोग किया जाता है।

(4) मूल्यांकन की प्रविधियों का चयन—परिस्थिति का ज्ञान हो जाने के पश्चात् उन प्रविधियों का चयन किया जाना चाहिए जो विद्यार्थियों के इच्छित व्यवहार के सम्बन्ध में प्रमाण प्रस्तुत करें।

(5) निष्कर्ष निकालना—मूल्यांकन प्रक्रिया में निम्नलिखित बातों का ध्यान देना चाहिए–

(i) कक्षा में उच्चतम तथा निम्नतम प्राप्तांक क्या हैं?

(ii) कक्षा का उच्चतम औसत प्राप्तांक क्या है?

(iii) कक्षा में विशिष्ट छात्र की क्या स्थिति है?

(iv) क्या किसी छात्र ने अपनी योग्यता से सर्वोत्तम स्थान प्राप्त कर लिया है।

(6) भविष्यवाणी—यदि एक विषय का मूल्यांकन किया जा चुका है तो उसी समस्या से सम्बन्धित अन्य पहलुओं का भी उसी आधार पर मूल्यांकन किया जाएगा तथा कारणों का पता लगाया जा सकता है। किसी विद्यार्थी के विषय में भविष्यवाणी की जा सकती है, किसी विस्तृत समस्या का भी समाधान किया जा सकता है।

(7) प्रदत्तों का विश्लेषण—प्राप्त आँकड़ों का विश्लेषण किया जाए तथा पता लगाया जाए कि उसके कारण कितनी मात्रा में प्रगति हुई है।

(8) प्राप्त साक्ष्यों का विवेचन—जब प्रविधि का प्रयोग किया जाता है तथा साक्ष्यों को अभिलेखों में दर्ज किया जा सकता है तो इसका विवेचन करना भी आवश्यक होता है।

अभ्यास प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के उद्देश्यों का वर्णन कीजिए।
2. मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के वर्गीकरण को समझाइए।
3. शिक्षा में मापन एवं मूल्यांकन की उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. परीक्षण एवं मापन में अन्तर स्पष्ट कीजिए।
2. मापन की समस्याओं को संक्षप में समझाइए।
3. मानसिक एवं भौतिक मापन में क्या अन्तर है?
4. मूल्यांकन की विशषताओं पर प्रकाश डालिए।
5. मूल्यांकन की विधियों को सारगर्भित रूप में समझाइए। ❑❑

Scanned with CamScanner

खुली पुस्तक परीक्षा व्यवस्था *(Open Book Examination System)*

खुली पुस्तक परीक्षा व्यवस्था वह व्यवस्था है, जिसमें परीक्षार्थी को प्रश्नों के उत्तर देते समय अपनी पाठ्य-पुस्तकों, नोट्स तथा दूसरी पाठ्य-सामग्री से परामर्श करने की आज्ञा दी जाती है। खुली पुस्तक परीक्षा व्यवस्था में समस्या-समाधान तथा आलोचनात्मक चिंतन के कौशलों की जांच की जाती है। खुली पुस्तक परीक्षा में परीक्षार्थी को शब्द-कोष, लोगरिथम टेबल आदि के प्रयोग की भी इजाजत होती है।

खुली पुस्तक परीक्षा का उद्देश्य सूचना तथा ज्ञान को ढूंढ़ना तथा उसका प्रयोग करने की योग्यता को जांचना है।

खुली पुस्तक परीक्षा परीक्षार्थी की याददाश्त का परीक्षण नहीं करती है। यह परीक्षा समस्या-समाधान के लिए सूचना को प्राप्त करना तथा उसको प्रयोग करने की योजना का परीक्षण करना है।

खुली पुस्तक परीक्षा की संरचना (Strcuture of Open Book Examination)-खुली पुस्तक परीक्षा की व्यवस्था में अनेक तरीके हैं–

1. परीक्षा के दौरान परीक्षार्थी को पाठ्य-पुस्तकें, परीक्षा नोट्स तथा अनेक संसाधनों तथा संदर्भों के प्रयोग करने की आज्ञा होती है।
2. परीक्षार्थियों को परीक्षा से पहले ही प्रश्न उपलब्ध करवा दिए जाते हैं और इस प्रकार परीक्षार्थी पहले से ही तैयार संसाधनों का प्रयोग परीक्षा में कर सकते हैं।
3. दूसरे प्रारूप में परीक्षार्थियों को प्रश्न पत्र घर पर ले जाने के लिए दे दिए जाते हैं। ये प्रश्न निबंधात्मक, लघूत्तरात्मक तथा बहु-विकल्पीय प्रश्न हो सकते हैं। परीक्षार्थियों को निश्चित अवधि के भीतर परीक्षा पेपरों को लौटाना होता है।

खुली पुस्तक परीक्षा व्यवस्था के लाभ (Advantages of Open Book Examination)-खुली पुस्तक परीक्षा व्यवस्था के लाभ निम्न हैं–

1. खुली पुस्तक परीक्षा व्यवस्था में परीक्षार्थी को सामग्री रटने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। उन्हें तथ्यों तथा आकृतियों तथा पुस्तकों को परीक्षा में प्रयोग करने की आज्ञा होती है।
2. इससे विद्यार्थियों में समस्यात्मक समाधान के लिए आलोचनात्मक चिंतन का विकास होता है।
3. इससे बच्चों में बोध तथा संश्लेषणात्मक कौशलों का विकास होता है, क्योंकि इसमें विद्यार्थियों को पाठ्य-पुस्तक तथा अन्य अध्ययन सामग्री की परीक्षा के लिए उसे कम या संक्षिप्त करना पड़ता है।
4. इससे बच्चों में सूचना खोजने से संबंधित कौशलों का विकास होता है। जब वे पुस्तकों तथा अन्य संसाधनों से आवश्यक सूचना को इकट्ठा करते हैं।

◆◆◆

Scanned with CamScanner

2.1

मानकीकृत उपलब्धि परीक्षण
(STANDARDIZED ACHIEVEMENT TESTS)

आधुनिक युग में जहाँ व्यक्ति के दिन-प्रतिदिन के जीवन में वैयक्तिक भिन्नताएँ दृष्टिगोचर हो रही हैं वहाँ समस्त मनोवैज्ञानिक परीक्षणों विशेष रूप से उपलब्धि परीक्षणों का अपना विशेष महत्व है। मनोवैज्ञानिक परीक्षण की शृंखला में अत्यधिक व्यापक रूप से प्रयोग में आने वाले उपलब्धि परीक्षण हमारे शैक्षिक जीवन में अत्यन्त सहायक होते हैं। विद्यार्थियों, अध्यापकों, शिक्षण विधियों, पाठ्यक्रम या शिक्षा के किसी भी पहलू का मापन केवल उपलब्धि परीक्षणों द्वारा ही सम्भव होता है। आज विश्व में विभिन्न स्तरों–प्राइमरी, जूनियर, हाईस्कूल, कॉलेज, विश्वविद्यालय आदि पर विभिन्न भाँति के उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग किया जा रहा है। इसके अभाव में शैक्षिक विकास की प्रक्रिया पूर्णतया असम्भव है। इनका प्रयोग केवल शैक्षिक परिस्थितियों तक ही सीमित नहीं होता बल्कि उद्योग, व्यवसाय, सेना, चिकित्सा आदि क्षेत्रों में भी इनका व्यापक प्रयोग किया जाता है। कर्मचारियों की नियुक्ति, विद्यार्थियों के चयन एवं उन्नति, सैनिकों के वर्गीकरण एवं उन्हें ग्रेड प्रदान करने, किसी क्षेत्र में कठिनाई का पता लगाने, विभिन्न सरकारी एवं गैर-सरकारी संस्थाओं में व्यक्ति का चयन करने, तुलनात्मक अध्ययन करने आादि में उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है।

ऐतिहासिक अवलोकन
(HISTORICAL PERSPECTIVES)

सम्भवतया समस्त मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की शृंखला में उपलब्धि परीक्षणों का इतिहास अत्यधिक प्राचीन है। उन्नीसवीं शताब्दी तक प्राय: सभी विश्वविद्यालयों में मौखिक परीक्षाएँ प्रचलित थीं किन्तु धीरे-धीरे विद्यार्थियों की निरन्तर वृद्धि, समय के अभाव एवं जीवन की जटिल परिस्थितियों में मौखिक परीक्षाओं का करना असम्भव-सा प्रतीत होने लगा। सर्वप्रथम सन् 1840 में शिक्षा बोर्ड के सेक्रेटरी होरेस मन (Horace Mann) ने लिखित परीक्षण पर जोर दिया जिसके फलस्वरूप बोस्टन (Boston) में इसका प्रयोग होने लगा। इसकी सफलता को देखकर अन्य शिक्षाविद् एवं विद्वान भी इस दिशा में रुचि लेने लगे जिसके फलस्वरूप अमेरिका स्कूल एवं कॉलेजों में लिखित परीक्षाओं की शीघ्रता के साथ प्रयोग होने लगा। सन् 1865 में न्यूयार्क स्टेट रीजेण्ट ने भी लिखित परीक्षाओं का प्रोत्साहन दिया। अतएव उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक इंग्लैण्ड तथा अमेरिका में लिखित परीक्षाएँ व्यापक रूप में प्रचलित हो गयीं।

Scanned with CamScanner

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सर्वप्रथम **फिशर** (Fisher) ने वस्तुनिष्ठ परीक्षणों का सूत्रपात किया में **जे. एम. राइस** (J. M. Rice) ने इस दिशा में अपना विशेष योगदान दिया। सन् 1904 में 'शब्दविन्यास' वस्तुनिष्ठ परीक्षण का निर्माण किया एवं अपनी परीक्षा के आधार पर उन्होंने समय का व्यक्ति की उपलब्धि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। यद्यपि आधुनिक समय में उनके कोई महत्व नहीं है, फिर भी हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि उपलब्धि परीक्षण के इतिहास में वह व्यक्ति थे जिन्होंने इस प्रकार के परीक्षण का एक लम्बे समूह पर अध्ययन किया।

किन्तु लिखित परीक्षाओं का वास्तविक रूप मे जन्म सन् 1900 में हुआ जबकि कॉलेज विश्वविद्यालयों में प्रवेश पाने हेतु इन परीक्षणों की आवश्यकता प्रतीत होने लगी। बीसवीं शताब्दी प्रारम्भिक वर्षों में **थार्नडाइक** ने इस दिशा में अपने छात्रों को प्रोत्साहित किया। उसका कहना था कि वस्तु का अस्तित्व है तो वह कुछ मात्रा में अवश्य है और यदि कोई भी वस्तु थोड़ी सी भी मात्रा में अस्तित्व रखती है तो वह मापी जा सकती है।" अतएव **थार्नडाइक** एवं उसके शिष्यों ने विभिन्न विषयों में मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणों की रचना प्रारम्भ की जिसका उस समय के शिक्षाविदों ने स्वागत किया। **थार्नडाइक** के शिष्य **स्टोन** (1908) ने गणितीय तर्क पर प्रथम मानकीकृत प्रकाशित किया। **थार्नडाइक** (1909) ने बालकों के लिए हस्तलेख मापनी का प्रकाशन किया। इस सन् (1920) तक विभिन्न विद्यालय विषयों में इतने मानकीकृत परीक्षणों की रचना हुई कि प्रारम्भिक हाईस्कूल स्तर का अध्यापक उन्हें ही प्रयोग करता रहा। **टाइलर** (1930) के निर्देशन में 'एट-इंया ने विभिन्न उद्देश्यों में मापन हेतु कई उपलब्धि परीक्षणों का मूल्यांकन किया किन्तु यह देखने में कि इन वस्तुनिष्ठ उपलब्धि परीक्षणों द्वारा केवल कुछ उद्देश्यों का ही मापन हो सका अतएव आत्मनिष्ठ पद्धतियों को विकसित किया गया। इसी वर्ष अमेरिकन कौंसिल ऑफ एजूकेशन ने विभिन्न हाईस्कूल विषयों में उत्तम मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणों का निर्माण किया। इसमें पदों की रचना उद्देश्यों की पूर्ति पर जोर दिया गया। बाद में सन् 1930 में अंक निर्मित एवं प्रकाशित होने वाले मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणों का उल्लेख **ओडेल** ने अपनी प्रकाशित पुस्तक में किया। सन् 1938 में **ब्यूरो** (Buros) ने भी कई उपलब्धि परीक्षणों का निर्माण किया। इसके पश्चात् सन् 1939 में विभिन्न विशिष्ट क्षेत्रों में उपलब्धि परीक्षणों की रचना होने लगी। इस वर्ष में **गेट्स** (1939) के 'बानव तथा एवं 'समूह नैदानिक' उपलब्धि परीक्षणों तथा **राइटस्टोन** के 'सामाजिक अध्ययन' सम्बन्धी परीक्षण का प्रकाशन हुआ। तत्पश्चात् सन् 1947-48 में तीन प्रमुख उपलब्धि श्रृंखलाओं 'Cooperative Achivement Test', 'Evaluation Adjustment Series' और 'Essential High School Contact Battery' का हाईस्कूल एवं कॉलेज में पढ़ने वाले छात्रों हेतु निर्माण किया गया। बीसवीं शताब्दी के छठवें दशक में तो उपलब्धि परीक्षणों की भरमार सी आ गयी। प्राइमरी, जूनियर, हाईस्कूल एवं कॉलेज स्तर पर प्रयोग में आने वाले उपलब्धि परीक्षणों की रचना हुई। इस अवधि में 6 प्रमुख सामान्य उपलब्धि परीक्षणों का निर्माण एवं संशोधन किया गया। सन् 1953 में 'स्टैण्डर्ड उपलब्धि परीक्षण' सन् 1956 में 'आयोवा मूल कौशल परीक्षण' सन् 1957 में 'कैलीफोर्निया उपलब्धि परीक्षण' तथा 'एस. आर. ए. उपलब्धि श्रृंखला', सन् 1958 में 'सीक्यून्सिल शैक्षिक उन्नति परीक्षण' तथा सन् 1959 में 'मेट्रोपालिटन उपलब्धि परीक्षणों की रचना एवं संशोधन हुआ। इसी अवधि में विभिन्न उद्देश्यों की पूर्ति हेतु विशिष्ट विषयों एवं निदान से सम्बन्धित उपलब्धि परीक्षणों का भी निर्माण हुआ। तत्पश्चात् विभिन्न क्षेत्रों में आज भी पर्याप्त रूप से प्रयास जारी हैं। **डेविड वेश्लर** ने 1992 में Wechsler Individual Achievement Test का निर्माण शैक्षिक उपलब्धि मापने हेतु किया। इसका तृतीय संस्करण 2009 में प्रकाशित हुआ। इसकी आयु सीमा 4 वर्ष से 50 वर्ष 11 महीने है।

उपलब्धि परीक्षण का अर्थ
(MEANING OF ACHIEVEMENT TESTS)

सुपर (Super) के शब्दों में, "एक उपलब्धि या क्षमता परीक्षण यह ज्ञात करने के लिए प्रयोग किया जाता है कि व्यक्ति ने क्या और कितना सीखा तथा वह कोई कार्य कितनी भली-भाँति कर लेता है।" (An achievement or proficiency test is used to ascertain what and how much has been learnt or how well a task has been performed.)

इबेल (Ebel) के अनुसार, "उपलब्धि परीक्षण वह अभिकल्प है जो विद्यार्थी के द्वारा ग्रहण किये गये ज्ञान, कुशलता या क्षमता का मापन करता है।" (An achievement test is one designed to measure a student's grasp of knowledge or his proficiency in certain skills.)

फ्रीमैन के विचार में, "उपलब्धि परीक्षण वह अभिकल्प है जो एक विशेष विषय या पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों में व्यक्ति के ज्ञान, समझ एवं कौशल का मापन करता है।" (A test of educational achievement is one designed to measure knowledge, understanding or skills in a specified subject or a group of subjects.)

अतएव उक्त परिभाषाओं को हृदयंगम करते हुए उपलब्धि परीक्षणों से हमारा अभिप्राय ऐसे परीक्षणों से है जिनमें एक निश्चित समयावधि के प्रशिक्षण एवं सीखने के पश्चात् व्यक्ति के ज्ञान एवं समझ का किसी एक विशेष विषय या विभिन्न विषयों में मापन किया जाता है। प्रायः विद्यालय के समस्त विषयों में ज्ञान का मापन करने हेतु इनका प्रयोग होता है क्योंकि इनका मुख्य उद्देश्य ज्ञान के मापन के साथ-साथ शैक्षिक क्षेत्र में पूर्वकथन भी होता है। इसको निम्न शब्दों में भी व्यक्त किया जा सकता है :

"By achievement tests, we mean those tests that measure the attainment or accomplishment of an individual in a particular branch of knowledge or some branches of knowledge after a definite period of training and learning. The main purpose of all the achievement tests is to predict the future success of the individual in a given field of knowledge in the educational sphere."

शैक्षिक तथा उपलब्धि आयु तथा लब्धि
(EDUCATIONAL & ACHIEVEMENT AGE & QUOTIENT)

समस्त शैक्षिक परीक्षणों के प्राप्तांकों को ज्ञात करने हेतु हमें सर्वप्रथम शैक्षिक एवं उपलब्धि आयु ज्ञात करनी होती है तथा फिर इनके आधार पर शैक्षिक एवं उपलब्धि-लब्धि की गणना की जाती है। शैक्षिक एवं उपलब्धि आयु ज्ञात करने के लिए सर्वप्रथम, परीक्षण पर प्राप्त मूल प्राप्तांकों को शतांशीय क्रम (Percentile ranks), प्रतिमान प्राप्तांक (Standard scores) में परिवर्तित किया जाता है, फिर आयु मानक (Age-norm) तथा श्रेणी मानक (Grade-norm) के माध्यम से उनको शैक्षिक एवं उपलब्धि आयु ज्ञात कर ली जाती है। उदाहरणार्थ, यदि किसी मानकीकृत परीक्षण में एक व्यक्ति के मूल प्राप्तांक 4.5 श्रेणी की समानता ज्ञात करते हैं तो इसका यह तात्पर्य हुआ कि उस परीक्षण में व्यक्ति की उपलब्धि चतुर्थ श्रेणी के औसत व्यक्ति के समान है। इस प्रकार से मानकों की सूची (Norms index) के माध्यम से व्यक्ति की उपलब्धि का पार्श्व चित्र (Profile) बनाया जा सकता है जो उसकी उपलब्धि के सामान्य स्तर एवं निष्पादन की कमियों का मूल्यांकन करता है।

शैक्षिक आयु (Educational Age or E. A.)

शैक्षिक आयु विभिन्न विषयों में व्यक्ति की उस सामान्य स्थिति को इंगित करती है जिसमें उसकी जाँच की जा चुकी है। उदाहरणार्थ, यदि कोई व्यक्ति को एक शैक्षिक परीक्षणमाला दी गयी जिसमें उसने

Scanned with CamScanner

गणित में 9 वर्ष स्तर, विज्ञान में 10 वर्ष स्तर, इंगलिश में 12 वर्ष स्तर तथा हिन्दी में 11 वर्ष स्तर के अंक प्राप्त किये, तो उसकी शैक्षिक आयु (E.A.) इन सभी का औसत 10.5 हुई। इस प्रकार विभिन्न आयु प्राप्तांक व्यक्ति की शैक्षिक उपलब्धि के सामान्य स्तर का मापन करते हैं। अतएव शैक्षिक आयु वह मिश्रण (Composite) है जो व्यक्ति की सामान्य उपलब्धि (General achievement) को प्रदर्शित करती है। सामान्य रूप से वह व्यक्ति की शैक्षिक विशेषताओं एवं कमजोरियों को बताने में अत्यधिक सहायक होती है।

उपलब्धि आयु (Achievement Age or A. A.)

उपलब्धि आयु किसी एक विषय में व्यक्ति की आयु के अनुसार उसकी स्थिति की ओर संकेत करती है। उदाहरणार्थ, यदि एक व्यक्ति गणित की परीक्षा में 10 वर्ष की उपलब्धि आयु रखता है, तो उसका स्तर भी 10 वर्ष के व्यक्ति के समान होगा।

शैक्षिक लब्धि (Educational Quotient or E. Q.)

शैक्षिक लब्धि में व्यक्ति की वास्तविक आयु के आधार पर सीखने के सामान्य स्तर को ज्ञात किया जाता है। इसके लिए निम्नलिखित सूत्र का प्रयोग होता है–

$$\text{शैक्षिक लब्धि (E.Q.)} = \frac{\text{शैक्षिक आयु}}{\text{वास्तविक आयु}} \times 100$$

माना कि किसी बालक की शैक्षिक आयु 11 वर्ष एवं वास्तविक आयु (Chronological age) 10 वर्ष है तो उसकी शैक्षिक लब्धि $11/10 \times 100 = 110$ होगी। सामान्य रूप से औसत शैक्षिक लब्धि 100 होती है, इससे कम या अधिक लब्धि का होना एक ही आयु-समूह के व्यक्तियों की तुलना करने में सहायक होता है।

उपलब्धि लब्धि (Achievement Quotient or A.Q.)

उपलब्धि-लब्धि में व्यक्ति की मानसिक आयु के आधार पर उसके सीखने के सामान्य स्तर को ज्ञात किया जाता है।

इसके लिए निम्न सूत्र का प्रयोग किया जाता है–

$$\text{उपलब्धि-लब्धि} = \frac{\text{शैक्षिक आयु}}{\text{मानसिक आयु}} \times 100$$

उदाहरणार्थ, यदि किसी बालक की शैक्षिक आयु 9 वर्ष तथा मानसिक आयु 10 वर्ष है, तो उसकी उपलब्धि-लब्धि $9/10 \times 100 = 90$ होगी। चूँकि सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दोनों ही दृष्टिकोणों से यह कथन सत्य है कि एक ही आयु-समूह के व्यक्तियों की मानसिक योग्यताओं में महत्वपूर्ण भिन्नताएँ होती हैं अतएव व्यक्ति में सीखने की योग्यता जानने हेतु वास्तविक आयु की अपेक्षाकृत मानसिक आयु को अधिक विश्वसनीय सूची समझा जाता है। इसीलिए उपलब्धि परीक्षण में शैक्षिक-लब्धि की अपेक्षाकृत उपलब्धि-लब्धि को महत्वपूर्ण सूची समझा जाता है, क्योंकि यह व्यक्ति के सीखने की मात्रा एवं गुण की ओर इंगित करती है।

उपलब्धि परीक्षणों का उपयोग
(USES OF ACHIEVEMENT TESTS)

आधुनिक समय में जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग व्यापक रूप से किया जाता है। विद्यालय में छात्रों का प्रवेश करने, औद्योगिक कर्मचारियों की नियुक्ति करने, सैनिक अधिकारियों

एवं सिपाहियों का चयन करने, सरकारी प्रतियोगिता तथा व्यावसायिक एवं शैक्षिक परीक्षाओं आदि क्षेत्रों में इनका प्रयोग दिन-प्रतिदिन होने लगा है। अतएव उपलब्धि परीक्षण का उपयोग एक अध्यापक, शिक्षाशास्त्री एवं निर्देशनकर्ता तक सीमित न होकर मनोवैज्ञानिक, चिकित्साशास्त्री, अनुसन्धानकर्ता, शैक्षिक अधिकारी आदि तक प्रचलित है। अब हम इसके मुख्य-मुख्य उपयोगों पर संक्षेप में प्रकाश डालेंगे।

(1) निम्नवत् कार्य-स्तर की जाँच करना—उपलब्धि परीक्षण के माध्यम से यह ज्ञात किया जाता है कि अमुक व्यक्ति किसी भी क्षेत्र में कार्य करने की आवश्यक योग्यता रखता है अथवा नहीं। दूसरे शब्दों में, एक निश्चित अवधि के प्रशिक्षण के पश्चात् यह ज्ञात करना आवश्यक होता है कि व्यक्ति ने उस अमुक कार्य में प्रशिक्षण के पश्चात् आवश्यक कौशल प्राप्त किया या नहीं। अतएव उपलब्धि परीक्षण व्यक्ति की अमुक कार्य में निम्नवत् योग्यताओं को जानने में सहायक होते हैं।

(2) विभिन्न क्षेत्रों में चयन करना—जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में व्यक्तियों के चयन एवं विद्यालय में छात्रों के प्रवेश हेतु इनका प्रयोग किया गया है। वर्तमान निष्पादन के आधार पर भावी उपलब्धि के सम्बन्ध में पूर्वकथन करने तथा केवल समर्थ विद्यालयों की पदोन्नति करने में यह सहायक होते हैं। इसके अतिरिक्त औद्योगिक एवं व्यावसायिक क्षेत्र में कर्मचारियों की नियुक्ति तथा अन्य सेवाओं में व्यक्ति के चयन हेतु भी इनका प्रयोग किया जाता है।

(3) वर्गीकरण एवं नियुक्ति करने में उपयोग—पूर्व-कृत्य, प्रशिक्षण, अनुभव एवं साफल्य प्रमाण के आधार पर सैनिकों का वर्गीकरण, विद्यालयों में बालकों का वर्गीकरण, औद्योगिक कर्मचारियों का वर्गीकरण, रोजगार दफ्तर में व्यक्तियों का वर्गीकरण तथा अमुक व्यवसाय में अमुक व्यक्ति की नियुक्ति करने में उपलब्धि परीक्षणों का उपयोग विस्तृत रूप से किया जाता है।

(4) वर्ग निर्धारण एवं पदोन्नति में प्रयोग—विद्यालय में छात्रों को विभिन्न कक्षाओं में निर्धारित करने एवं उद्योगों में कर्मचारियों की पदोन्नति करने में भी उपलब्धि परीक्षण अत्यन्त उपयोगी होते हैं।

(5) निर्देशन प्राप्त करना—उपलब्धि परीक्षण बालकों को शैक्षिक एवं व्यावसायिक निर्देशन प्रदान करने में भी सहायक होते हैं। जब तक हमें बालकों की मानसिक योग्यता, अभिवृत्तियों, रुचियों, उपलब्धि आदि के सम्बन्ध में ज्ञात नहीं होगा, तब तक हम यह नहीं बता सकते कि उसके लिए कौन-सा विषय या व्यवसाय उपयुक्त होगा। अतएव उपलब्धि परीक्षणों के माध्यम से व्यक्ति के विषय एवं व्यवसाय के सम्बन्ध में भविष्यवाणी की जा सकती है। इन परीक्षणों द्वारा यह भी निर्देशन प्रदान किया जाता है कि अमुक व्यक्ति को हाईस्कूल या किसी निश्चित स्तर के पश्चात् शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए अथवा नहीं, यदि हाँ तो किस प्रकार की शिक्षा। यदि एक बालक डॉक्टर बनने की जिज्ञासा रखता है तो उसके लिए यह आवश्यक है कि वह जीव-विज्ञान एवं विज्ञान में उच्च स्तर की योग्यता रखे। इस प्रकार से उपलब्धि परीक्षण व्यक्ति को उचित निर्देशन देकर भविष्य के प्रशिक्षण का निश्चय करते हैं।

(6) चिकित्सा एवं संदर्शन प्रदान करना—चिकित्सा एवं संदर्शन के क्षेत्र में उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग व्यापक रूप से किया जाता है। विद्यार्थियों को परामर्श देने एवं उनकी कठिनाइयों के निवारण हेतु निदानात्मक परीक्षण की रचना होती है। जब व्यक्ति किसी भी शैक्षिक क्षेत्र में कठिनाइयों एवं कमजोरियों का अनुभव करता है तो उसके उपचार हेतु इन उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है। संदर्शन प्रदान करने में यह व्यक्ति की योग्यताओं को समझने में सहायक होता है। यह अध्यापक एवं संदर्शनकर्ता को इस योग्य बनाता है कि वह प्रत्येक व्यक्ति की कठिनाइयों एवं कमजोरियों का निदान कर सके। विभिन्न चिकित्सक कार्यों में उपलब्धि परीक्षणों की आवश्यकता के सम्बन्ध में एनेस्टेसी (Anastasi) ने लिखा है–

Scanned with CamScanner

"The case of truancy, behaviour problems and delinquency for example educational failures and maladjustment to the school situations may be contributing factors. Similarly, emotional maladjustment among intellectually gifted children are sometimes found to be associated with improper educational placements."

(7) सीखने में सुविधा प्रदान करना—इन परीक्षणों द्वारा सीखने में सुविधा प्रदान की जाती है, क्योंकि इनके माध्यम से यह ज्ञात हो जाता है कि व्यक्ति किसी निश्चित विषय में कितना सीख चुका है तथा उसे कितना सीखना शेष है जिससे उसे भविष्य में सीखने हेतु प्रेरित किया जाए।

(8) अध्ययन के लिए प्रेरित करना—वास्तव में देखा जाय तो उपलब्धि परीक्षण व्यक्ति को अध्ययन के लिए प्रेरित करते हैं क्योंकि इनके द्वारा जब व्यक्ति को अपनी उच्चतम सफलता के विषय में ज्ञान होता है या अपनी कमजोरियों का पता चलता है, तो उसे अध्ययन की प्रेरणा मिलती है।

(9) अध्यापक का मूल्यांकन—इन परीक्षणों की सहायता से अध्यापक की कुशलताओं एवं प्रभावात्मकताओं का मूल्यांकन किया जाता है। परीक्षा निष्कर्षों के आधार पर हम केवल विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के विषय में ही नहीं जानते बल्कि अध्यापक की प्रभावात्मकता का मूल्यांकन करते हैं। इस प्रकार से यह अध्यापक की कार्यकुशलता के आधार पर उसकी नियुक्ति एवं पदोन्नति में भी सहायक होते हैं। इसके माध्यम से अध्यापक की कमजोरियों का पता लग जाता है।

(10) शिक्षण पद्धतियों का मूल्यांकन—बालक एवं अध्यापक के साथ-साथ ये परीक्षण विभिन्न शिक्षण-पद्धतियों की प्रभावात्मकता का भी मूल्यांकन करते हैं। इनके द्वारा यह भी निश्चित किया जाता है कि किस छात्र समूह पर कौन-सी शिक्षण पद्धति उपयोगी होगी। यह अध्यापक को परामर्श भी देती है कि यदि कोई छात्र समूह या अमुक छात्र किसी विशेष विधि से विषय को नहीं समझ पा रहा है तो अध्यापक को उसमें सुधार कर अन्य पद्धति को अपनाना चाहिए।

(11) शैक्षिक संस्थाओं को पहचानने में सहायक—उपलब्धि परीक्षण के आधार पर हमें विभिन्न विद्यालयों के शैक्षिक स्तर का पता लगता है जिसके द्वारा इनकी तुलना सरलता से की जा सकती है।

(12) पाठ्य-वस्तु के संशोधन में सहायक—उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग पाठ्य-वस्तु के संशोधन में भी सहायक होता है। परीक्षा फलांकों के आधार पर यह ज्ञात हो जाता है कि अमुक स्तर के छात्रों हेतु अमुक पाठ्य-वस्तु कठिन या सुगम है जिससे उनका संशोधन उसी के अनुकूल हो सके।

उपलब्धि परीक्षण की सीमाएँ
(LIMITATIONS OF ACHIEVEMENT TESTS)

उपलब्धि परीक्षण की दो प्रमुख कमियाँ हैं जिनके कारण इनकी आलोचना की जा सकती है। प्रथम, कभी-कभी इनके प्रयोग से अध्यापक अपने शिक्षण को इतना कठोर बना लेते हैं कि शिक्षा का वास्तविक उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है। दूसरे प्राय: शिक्षा के समस्त क्षेत्रों में इनका मानकीकरण हानिकारक होता है। तीसरे, इनमें उपलब्धि के समस्त पहलुओं पर ध्यान न देकर केवल कुछ पहलुओं पर ही जोर दिया जाता है। दूसरे शब्दों में, यह सीखने की कुछ क्रियाओं की ओर तो अधिक महत्व देते हैं जबकि अन्य की ओर ध्यान नहीं देते। अतएव इन परीक्षणों पर अत्यधिक विश्वास करना हानिकारक हो सकता है।

एक उत्तम उपलब्धि परीक्षण की विशेषताएँ
(CHARACTERISTICS OF A GOOD ACHIEVEMENT TEST)

एक उत्तम उपलब्धि परीक्षण में लगभग वही विशेषतायें निहित होनी चाहिए जो एक उत्तम मनोवैज्ञानिक परीक्षण के लिए आवश्यक हैं। ये निम्नलिखित हैं—

(i) उत्तम उपलब्धि परीक्षण का निश्चित उद्देश्य निर्धारित होना चाहिए।

(ii) उत्तम उपलब्धि परीक्षण की पाठ्य-वस्तु छात्रों के स्तर, योग्यताओं, रुचियों एवं क्षमताओं के अनुकूल होनी चाहिए जिससे वह उचित रूप से उपलब्धि का मापन कर सके।

(iii) उत्तम उपलब्धि परीक्षण व्यावहारिक दृष्टिकोण से उपयोगी तथा धन, समय एवं व्यक्ति के दृष्टिकोण से मितव्ययी होना चाहिए।

(iv) इसके प्रशासन, फलांकन एवं विवेचन की विधि सुगम, स्पष्ट एवं वस्तुनिष्ठ होनी चाहिए जिससे एक मामूली अध्यापक भी इसका उपयुक्त प्रयोग कर सके।

उपलब्धि परीक्षणों के प्रारूप
(TYPES OF ACHIEVEMENT TESTS)

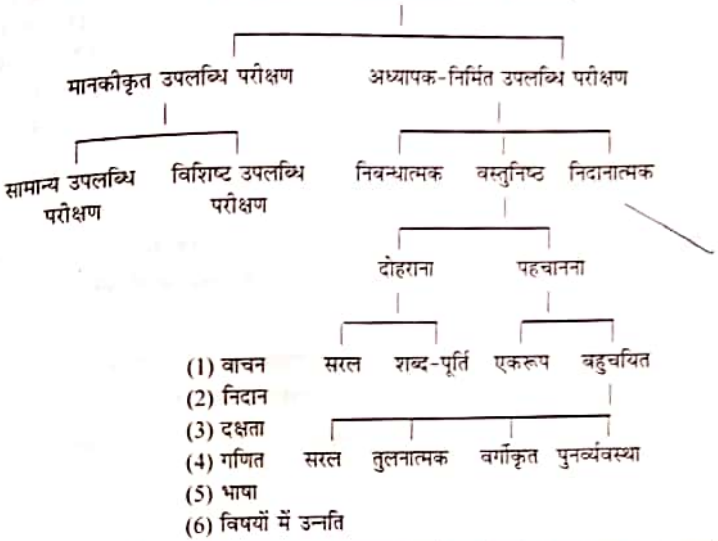

(v) इसकी विषय-सामग्री व्यापक होनी चाहिए अर्थात् जब किसी विषय पर उपलब्धि परीक्षण की रचना करनी हो, तो यह ध्यान रखना चाहिए कि उस विषय के समस्त क्षेत्रों से पदों को परीक्षण में स्थान मिल रहा है या नहीं। उदाहरणार्थ, गणित के उपलब्धि परीक्षण में हमें अंकगणित, बीजगणित, रेखागणित, सांख्यिकी एवं त्रिकोणमिति के समस्त क्षेत्रों से प्रश्नों को सम्मिलित करना होता है, तभी हमारा परीक्षण व्यापक कहलायेगा।

(vi) उत्तम उपलब्धि परीक्षण के लिए यह भी आवश्यक है कि यह विभेदकारी होना चाहिए जो किसी कक्षा के श्रेष्ठ एवं निम्न बालकों में विभेद कर सके।

(vii) उत्तम उपलब्धि परीक्षण विश्वसनीय होना चाहिए। विश्वसनीयता से आशय है कि आज वह जिस अमुक छात्र का उपलब्धि के विषय इंगित करे, एक सप्ताह बाद भी लगभग वही बात कहे।

(viii) इन सबके अतिरिक्त उसे वैध भी होना चाहिए अर्थात् अपने उद्देश्यों की पूर्ति करने वाला होना चाहिए।

उपलब्धि परीक्षण की विश्वसनीयता (Reliability)

प्राय: समस्त स्तरों पर उपलब्ध मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणों की विश्वसनीयता सन्तोषजनक ज्ञात हुई। वस्तुनिष्ठ परीक्षणों की अपेक्षाकृत निबन्धात्मक परीक्षाओं की विश्वसनीयता कम पायी जाती है,

Scanned with CamScanner

क्योंकि निबन्धात्मक परीक्षाएँ आत्मनिष्ठ तत्वों से प्रभावित होती हैं। उपलब्धि परीक्षणों की विश्वसनीयता ज्ञात करने में पुनर्परीक्षण विधि का प्रयोग अनुपयुक्त होता है क्योंकि इसमें स्मृति तत्व का विशेष रूप से प्रभाव पड़ता है। अतएव अधिकांश उपलब्धि परीक्षणों की विश्वसनीयता ज्ञात करने के लिए समान्तर प्रारूप विधि, अर्द्ध-विच्छेद विधि तथा कूडर-रिचर्डसन सूत्र का प्रयोग किया जाता है।

उपलब्धि परीक्षणों की वैधता (Validity)

समस्त भाँति के उपलब्धि परीक्षणों की वैधता को (अ) पूर्वकथन द्वारा, (ब) पाठ्य-वस्तु द्वारा, (स) ज्ञात समूह द्वारा, तथा (द) सूचनाओं द्वारा ज्ञात किया जा सकता है। सर्वप्रथम, पूर्वकथन द्वारा वैधता ज्ञात करने के लिए अध्यापक द्वारा भविष्यवाणी किये गये अंकों तथा परीक्षणों में प्राप्त किये गये अंकों के मध्य सहसम्बन्ध ज्ञात किया जाता है। पूर्वकथित वैधता में अध्यापक की आत्मीयता का भी प्रभाव पड़ता है। दूसरे, पाठ्य-वस्तु के आधार पर भी उपलब्धि परीक्षण की वैधता को ज्ञात किया जा सकता है। इसमें, किसी विशेषज्ञ की सहायता से यह विदित किया जाता है कि परीक्षण की पाठ्य-वस्तु उद्देश्यों की पूर्ति कर रही है अथवा नहीं। उदाहरणार्थ, यदि एक ऐसा परीक्षण है जिसका उद्देश्य शाब्दिक, आंकिक, तार्किक आदि योग्यताओं का मापन करना है तो उस परीक्षण के पदों की पाठ्य-वस्तु (Content) भी इन्हीं, उद्देश्यों से सम्बन्धित होनी चाहिए, तभी निर्मित किया हुआ परीक्षण वैध होगा। तीसरे, ज्ञात समूहों (Known groups) के माध्यम से भी उपलब्धि परीक्षणों की वैधता ज्ञात की जा सकती है। उदाहरणार्थ, हम यह जानते हैं कि कक्षा के अमुक 10 छात्र पढ़ने में अत्यन्त होशियार हैं, यदि हमारा उपलब्धि परीक्षण भी यही इंगित करे तो उसे वैध कहा जा सकता है। चौथे, सूचनाओं के आधार पर भी उपलब्धि परीक्षणों की वैधता ज्ञात की जा सकती है।

मानकीकृत उपलब्धि परीक्षण
(STANDARDIZED ACHIEVEMENT TESTS)

मानकीकृत उपलब्धि परीक्षण से हमारा अभिप्राय ऐसे परीक्षण से है जिसमें पदों का चयन पाठ्यक्रम के अनुकूल हो, जिसकी प्रशासन विधि, निर्देश, समय-सीमा, फलांकन विधि एवं विवेचना समरूप से निश्चित हो तथा मानकों की सारणी तैयार की गयी हो। अब हम कुछ प्रमुख मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणों का नाम अंकित करेंगे। मुख्य रूप से विषय-सामग्री के आधार पर मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है—(i) सामान्य उपलब्धि परीक्षण, तथा (ii) विशिष्ट उपलब्धि परीक्षण।

सामान्य उपलब्धि परीक्षण (General Achievement Test)

सामान्य उपलब्धि परीक्षण में हम ज्ञान के सम्पूर्ण क्षेत्र का मापन एक ही प्राप्तांक (Score) के माध्यम से करते हैं। लिंडग्विस्ट एवं मन (Linquist and Mann) के अनुसार, "सामान्य उपलब्धि परीक्षण वह परीक्षण है जो एक ही प्राप्तांक द्वारा उपलब्धि के किसी दिये हुए क्षेत्र में सापेक्षित ज्ञान का बोध कराता है।" ("A general achievement test is one designed to express in terms of a single score a pupils's relative achievement in a given field of achievement.")

आज के इस व्यस्त जीवन में जहाँ लोगों पर धन एवं समय का अभाव है, विद्यालय जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि हो रही है, अच्छे प्रशिक्षित अध्यापकों की कमी है, सामान्य उपलब्धि परीक्षणमालाओं का प्रयोग सर्वाधिक रूप से किया जा रहा है। एक मानकीकृत परीक्षणमाला में सामान्य रूप से चार, छः, आठ, दस या इससे अधिक परीक्षण होते हैं जो पाठ्यक्रम के विभिन्न विषयों पर आधारित रहते हैं तथा उद्देश्य न्यादर्श-चयन, विश्वसनीयता एवं वैधता के दृष्टिकोण से सामान्य होते हैं। इन परीक्षणमालाओं का प्रयोग समय-समय पर संशोधन के साथ दीर्घ समय तक किया जा सकता है क्योंकि इनके फलांक हजारों के नमूने

पर आधारित होते हैं जिनमें इनकी वस्तुनिष्ठता बढ़ जाती है। इसकी विश्वसनीयता .80 से .90 तक ज्ञात होती है।

किसी भी सामान्य उपलब्धि परीक्षण का मूल्य चयन की गयी विषय-सामग्री की गुढ़ता, पद-विश्लेषण की पर्याप्तता एवं मानकों की उपलब्धि पर निर्भर रहता है। इसीलिए इनका मुख्य रूप से प्रयोग सम्पूर्ण कक्षा की उपलब्धि का चित्र प्रस्तुत करने, विद्यालय के विभिन्न वर्गों की निरन्तर शैक्षिक वृद्धि का मापन करने, पाठ्य-वस्तु, कौशल एवं सूझ के द्वारा समूहों के अन्तरों की व्याख्या करने, व्यक्ति की योग्यताओं में भेद व्यक्त करने तथा शैक्षिक क्षेत्र में व्यक्ति की कमियों का पता लगाकर उनके निदान का प्रयास करने में किया जाता है।

सामान्य उपलब्धि परीक्षणमालाओं की कुछ अपनी ही विशेषताएँ हैं। ये परीक्षणमालाएँ तुलनात्मक अध्ययन करने में अत्यन्त सहायक होती हैं। एक परीक्षणमाला में विभिन्न उप-परीक्षणों के सम्मिलित होने से इनकी इकाइयों में समानता रहती है जिससे परिणामों के तुलनात्मक अध्ययन में सरलता रहती है। दूसरी, प्रशासन एवं फलांकन की एकरूपता के कारण इनका प्रशासन एवं फलांकन सुगम हो जाता है। तीसरे, भिन्न-भिन्न परीक्षणों की अपेक्षाकृत किसी एक परीक्षणमाला के उपयोग से समय एवं धन का मितव्यय होता है।

सामान्य उपलब्धि परीक्षणमालाएँ (General Achievement Batteries)

अब हम जूनियर तथा सीनियर हाईस्कूल स्तर के निमित्त निर्मित कुछ सामान्य उपलब्धि परीक्षणमालाओं को उल्लेख करेंगे।

(1) कैलीफोर्निया उपलब्धि परीक्षण (California Achievement Test)—जूनियर से उच्च हाईस्कूल स्तर तक प्रयोग में आने वाली इस परीक्षणमाला की रचना सन् 1957 में हुई। यह परीक्षणमाला पाँच स्तर के व्यक्तियों हेतु निर्मित है तथा प्रत्येक स्तर की परीक्षणमाला में पाँच प्रकार—शाब्दिक वाचन, समझ, गणित में मूल समस्याएँ, तर्क अंक प्रत्यक्ष तथा भाषा व्याकरण—के परीक्षण सम्मिलित हैं। ये समस्त प्रकार के परीक्षण व्यक्ति के मूल कौशलों (Basic skills) को ज्ञात करने पर जोर देते हैं। इसकी प्राथमिक परीक्षणमाला के प्रशासन में 90 मिनट तथा अग्रिम परीक्षणमाला के प्रशासन में 150 मिनट के समय की आवश्यकता होती है। इनका प्रयोग किसी विषय सम्बन्धी कठिनाइयों एवं कमजोरियों को जानने हेतु भी किया जाता है।

सीक्वेंशियल शैक्षिक उन्नति परीक्षा (Sequential Test of Educational Progress)—इस परीक्षणमाला का प्रयोग चार स्तरों—4—6, 7—9, 10—12 तथा 13—14 वर्षों तक की आयु के बच्चों हेतु उपयुक्त समझा जाता है। प्रत्येक स्तर पर वाचन, लेखन, गणित, विज्ञान, सामाजिक अध्ययन, श्रवण तथा निबन्ध लेखन सम्बन्धी बहुउद्देश्यीय परीक्षण सम्मिलित रहते हैं। इन सातों प्रकार के परीक्षणों को अलग-अलग पुस्तिकाओं में प्रकाशित किया गया है जिससे यह व्यक्तिगत रूप से भी उपलब्ध हो सकें। इस माला के निबन्धात्मक भाग के प्रशासन में 25 मिनट तथा वस्तुनिष्ठ भाग में 70 मिनट के समय की आवश्यकता होती है। समाचार कौशल के परीक्षण हेतु भी इन परीक्षणमालाओं का प्रयोग किया जाता है। इस परीक्षणमाला में शक्ति प्रकार के पद हैं कूडर-रिचर्डसन विधि से इसकी विश्वसनीयता सन्तोषजनक ज्ञात की गयी।

(3) स्टैनफोर्ड उपलब्धि परीक्षण (Stanford Achievement Test)—मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणों की श्रृंखला में शायद यह ऐसा परीक्षण है जो अत्यधिक प्राचीन है। इसका सर्वप्रथम प्रकाशन सन् 1919

Scanned with CamScanner

में हुआ। तत्पश्चात 1970, 1980, 1992 एवं 1963 में इसमें संशोधन किये गये। इसका प्रयोग [illegible] में हुआ। [illegible] परीक्षण हैं। [illegible]

(4) मेट्रोपोलिटन उपलब्धि परीक्षण (Metropolitan Achievement Test)—[illegible] प्रकाशन सन् 1931 में किया गया। तत्पश्चात विभिन्न संशोधनों के साथ इसका [illegible] सन् 1986 में किया गया। [illegible] परीक्षण हैं। [illegible] 240 मिनट का समय लगता है।

(5) आयोवा उपलब्धि परीक्षणमालाएँ (Iowa Achievement Test Batteries)—[illegible] आयोवा हाईस्कूल परीक्षा (Iowa High School Examination) [illegible] प्रकाशन सन् 1971 में हुआ। [illegible] आयोवा टेस्ट ऑफ एजुकेशनल डेवलपमेंट (Iowa Test of Educational Development) का निर्माण [illegible] संशोधन सन् 1957 में किया गया। [illegible] छात्रों की [illegible] करने में सहायक है।

(6) कोऑपरेटिव उपलब्धि परीक्षण (Cooperative Achievement Test)—[illegible] सन् 1947 में किया गया। यह तीन श्रेणी 7–9, 7–12, एवं 10–13 तक की कक्षाओं के [illegible] उपलब्धि का मापन करता है।

(7) एस. आर. ए. उपलब्धि श्रृंखला (S. R. A. Achievement Series)—[illegible] कक्षा–2–4, 4–6 तथा 6–9 श्रेणी–के बच्चों हेतु सन् 1957 में हुई। यह वाचन, भाषा, [illegible] गणित तथा कार्य अध्ययन के कौशल का मापन करती है।

विशिष्ट उपलब्धि परीक्षण (Specific Achievement Test)

सामान्य उपलब्धि परीक्षण जहाँ व्यक्ति की विभिन्न सामान्य क्षेत्रों में उपलब्धि का मापन करते हैं, वहीं विशिष्ट उपलब्धि परीक्षण केवल किसी विशिष्ट क्षेत्र में ही व्यक्ति के ज्ञान का मापन करते हैं। [illegible] अध्ययन हेतु मापन कार्य किया जाता है। विभिन्न विषयों एवं योग्यताओं में ज्ञान का मापन करने हेतु विशिष्ट उपलब्धि परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है। उदाहरणार्थ यदि हम गणित विषय में [illegible] उपलब्धि देखना चाहते हैं तो हमें केवल गणित की समस्याओं से सम्बन्धित एक विशिष्ट उपलब्धि परीक्षण की रचना करनी होगी। इस प्रकार से विभिन्न विद्यालय विषयों के अध्यापन हेतु भी इस प्रकार के [illegible] उपयोगी होते हैं। [illegible] विशिष्ट विषयों में कठिनाइयों एवं कमजोरियों का पता लगाने [illegible] उपयोगी सिद्ध होते हैं। इस प्रकार से सामान्य उपलब्धि परीक्षणों की अपेक्षाकृत विशिष्ट उपलब्धि परीक्षणों का क्षेत्र संकुचित होता है। कभी-कभी तो विभिन्न उपलब्धि परीक्षणों के मिश्रण से ही इन [illegible] उपलब्धि परीक्षणमाला की रचना करते हैं।

कुछ प्रमुख विदेशी उपलब्धि परीक्षण
(SOME IMPORTANT FOREIGN TESTS OF ACHIEVEMENT)

क्र.	उपलब्धि परीक्षण	विषय	लेखक	आयु सीमा
1.	Test of Word Reading Efficience	वाचन	J. Torgesen	6 वर्ष से 24 वर्ष तक
2.	Comprehensive Mathematic Abilities Test	गणित	W. P. Hresko	7 वर्ष से 18 वर्ष तक
3.	Diagnostic Achievement Test for Adolescents	अंग्रेजी	P. Newcomer	12 वर्ष से 18 वर्ष तक
4.	Hammill Multiability Achievement Test	वाचन, लेखन, गणित	D. Hammill	7 वर्ष से 17 वर्ष 11 माह
5.	Wide Range Achievement Test	वाचन, गणित	G. S. Wilkinson	5 वर्ष से 24 वर्ष तक

उपलब्धि परीक्षण की रचना एवं मानकीकरण
(CONSTRUCTION & STANDARDIZATION OF ACHIEVEMENT TESTS)

विद्यालय परिस्थितियों में सुनियोजित पाठ्यक्रम के अध्ययन एवं अध्यापन के अन्तर्गत छात्रों द्वारा अर्जित एवं ग्रहण किये गये अधिगम अनुभवों (Learning experiences) की जाँच करने हेतु उपलब्धि परीक्षण का निर्माण किया जाता है। [illegible] परिस्थितियों में शैक्षिक उपलब्धि की जाँच हेतु अध्यापकों द्वारा ही निर्मित होते हैं तथा जिनका मानकीकरण नहीं किया जाता है तथा दूसरे वे जो मनोवैज्ञानिक या शिक्षाविदों द्वारा निर्मित होते हैं तथा जिनका मानकीकरण होता है।

मनोवैज्ञानिक परीक्षण में मनोवैज्ञानिकों की प्रमाणित तकनीकों का अनुसरण करना पड़ता है। [illegible] आवश्यकता होती है, उदाहरणार्थ बुद्धि तथा अभिरुचि परीक्षणों को निर्मित करने में [illegible] नहीं अपनाना पड़ता है जो उपलब्धि अथवा नैदानिक परीक्षण के निर्माण में अपनानी होती है। बुद्धि परीक्षण [illegible] सिद्धान्त, सामान्य मानसिक योग्यता की कसौटी ही होते हैं जबकि अभिक्षमता परीक्षण के द्वारा छात्रों में निहित जन्मजात अभिक्षमता की [illegible] अथवा भविष्य में इन अभिक्षमता [illegible] कौशल के विकास एवं [illegible] होने की सम्भावनाओं की जाँच की जाती है। अभिरुचि परीक्षण में व्यक्ति के रुचि की जाँच की [illegible] जाती है जो किसी प्रकार के अधिगम अनुभवों की सीमा से परे होते हैं। इन सबके विपरीत उपलब्धि एवं नैदानिक परीक्षण शैक्षिक उद्देश्यों के आधार पर विकसित एवं निर्मित होते हैं। सुनियोजित पाठ्यक्रमों एवं अधिगम अनुभवों के शैक्षणिक संस्थाओं में समुचित अध्यापन अध्यापन (Teaching learning) के उपरान्त छात्रों द्वारा अनुभवों (Learning experiences) की जाँच हेतु निर्मित एवं मानकीकृत किये जाते हैं। जिसके [illegible] इनके निर्माण में विषय वस्तु वैधता (Content validity) को ही सर्वाधिक प्रमुखता दी जाती है, वस्तुतः इसे उपलब्धि परीक्षण का आधार ही माना जाता है।

उपलब्धि परीक्षण की रचना से पूर्व विशिष्ट विषय वस्तु के शैक्षिक उद्देश्यों (Educational or instructional objectives) को जान लिया जाता है, तत्पश्चात् शैक्षणिक संस्थाओं में सुनियोजित पद्धति से,

Scanned with CamScanner

उनको अध्ययन-अध्यापन की दृष्टि से पाठ्यक्रमों का विश्लेषण एवं अध्ययन किया जाता है, तदन्तर उन्हें अधिगम अनुभवों की शिक्षा छात्रों को विद्यालय परिस्थितियों में दी जाती है एवम् उनके द्वारा अर्जित अधिगम अनुभवों की जाँच के लिए निबन्धात्मक (Essay type), लघु उत्तरय प्रश्न (Short answer type), वस्तुनिष्ठ पदों (Objective item) का निर्माण किया जाता है। उपलब्धि परीक्षण के निर्माण में इन समस्त पहलुओं को ध्यान में रखा जाता है, अपितु वे सभी आपस में घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित एवं एक-दूसरे पर आधारित रहते हैं। विषय-वस्तु वैधता (Content validity) इस कसौटी पर आँकी जाती है कि किसी विशिष्ट विषय-वस्तु के शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति में अध्यापकों को किस सीमा तक सफलता मिली है। इस प्रकार उपलब्धि परीक्षण छात्रों द्वारा अर्जित एवं अनार्जित अधिगम अनुभवों की सीमा निर्धारित करता है क्योंकि ये शैक्षिक उद्देश्यों पर आधारित होते हैं।

उपलब्धि परीक्षणों के निर्माण में सम्बन्धित विभिन्न आधार-स्तम्भ एवं पारस्परिक तत्वों को प्रस्तुत किया जाता है–

शैक्षिक उद्देश्य → (Instructional objectives)	पाठ्यक्रम एवं अधिगम अनुभव का निर्माण (Curriculum)	शैक्षिक प्रक्रिया अध्ययन-अध्यापन (Teaching experience)	उपलब्धि परीक्षण (Achievement Test)

सोपान (Steps)

उपलब्धि परीक्षण के निर्माण में **वी. पी. शर्मा** (1978) ने निम्न प्रक्रियात्मक क्रमबद्ध स्तरों (Procedural Serial Levels) को प्रस्तुत किया है।

1. विशिष्ट विषय-वस्तु के अध्ययन हेतु प्रमुख त्वरित शैक्षिक उद्देश्यों (Immediate Instructional Objectives) की पहचान।

2. गौण शैक्षिक उद्देश्यों की पहचान।

3. इन उद्देश्यों को महत्ता एवं प्रमुखता की दृष्टि से क्रमबद्ध करने की प्रक्रिया।

4. क्रमबद्ध किये गये (Assigning the ranks) एवं चुने गये प्रमुख त्वरित शैक्षिक उद्देश्यों को व्यावहारिक अर्जन (Behavioural outcomes) में **ब्लूम** (1962) के निर्देशानुसार परिभाषित करना।

5. इन वांछित व्यावहारिक शैक्षिक उपलब्धियों को जिनके अध्ययन-अध्यापन एवं परीक्षण हेतु शैक्षिक प्रक्रिया अपनाई जाती है, उन्हें ब्लूम के वर्गीकरण के आधारों पर ज्ञान (Knowledge), कौशल (Skill), अनुप्रयोग (Application), विश्लेषण (Analysis), संश्लेषण (Synthesis) एवं मूल्यांकन (Evaluation) शीर्षकों के अन्तर्गत वर्गीकृत करना।

6. तदन्तर पाठ्यक्रम (Curriculum), पाठ्य-पुस्तकों (Text-books), विषय-वस्तु (Content) एवं अन्य उपलब्ध अधिगम अनुभवों का विश्लेषण करना जिनका अनुप्रयोग एवं सदुपयोग पद निर्माण हेतु किया जाता है। वस्तुत: पद निर्माण की दक्षता, विषय-वस्तु एवं उपलब्ध अधिगम अनुभवों की सूक्ष्मता विश्लेषण पर ही निर्भर करती है। विशिष्ट विषय-वस्तुओं से सम्बन्धित सम्भावित त्रुटियों का विश्लेषण एवं पहचान अच्छे पद भ्रामक (Item distractor) प्रमाणित होते हैं।

7. वांछित अधिगम अनुभवों (Expected learning experiences) एवं व्यावहारिक उपलब्धियों (Behavioural outcomes) को ध्यान में रखते हुए कुछ सम्भावित अधिगम अनुभवों की पहचान करना जो पद निर्माण की गहराई, सूक्ष्मता एवं व्यापकता को निर्दिष्ट दिशा एवं दृष्टि प्रदान करता है।

8. इसी प्रकार कुछ सम्भावित अध्यापन विधियाँ (Possible teaching method) अध्ययन सामग्री एवं अन्य सहायक पद्धति एवं प्रक्रिया को समझकर अध्ययन, अध्यापन एवं परीक्षण को गति एवं गहराई प्रदान कर पद चयन में महत्वपूर्ण योग प्रदान करना।

9. वांछित अधिगम उपलब्धि (Desired learning outcomes) के प्रभावी मूल्यांकन हेतु उपयुक्त मूल्यांकन पद्धति की पहचान करना।

10. परीक्षण पद्धतियों का चयन करना यथा निबन्धात्मक, लघु पदीय या वस्तुनिष्ठ पदों का निर्माण, विश्लेषण एवं चयन कर पदों को अन्तिम रूप से निर्मित करना।

11. उपलब्धि परीक्षण की वैधता एवं विश्वसनीयता की विभिन्न विधियों से जाँच करना।

12. अर्जित एवं अनार्जित विषय-वस्तु की परख कर अनार्जित विषय-वस्तु के अर्जन हेतु विभिन्न पाठ्यक्रम, अधिगम अनुभव की पहचान, नैदानिक उपलब्धि परीक्षण के निर्माण की आवश्यकता एवं उपचारात्मक शिक्षण पद्धतियों की पहचान एवं अनुक्रिया।

13. अन्तत: नैदानिक उपलब्धि परीक्षण के निर्माण की आवश्यकता एवं मानकीकरण द्वारा अनार्जित विषय-वस्तु को अर्जित करने की सीमा।

इस प्रकार अध्ययन-अध्यापन परीक्षण किसी भी शैक्षिक प्रक्रिया की अभिन्न एवं सतत् पारस्परिक सम्बन्धित प्रक्रियायें हैं जिनमें उपलब्धि परीक्षण के पूरक के रूप में नैदानिक उपलब्धि परीक्षण शैक्षिक उद्देश्यों की पूर्ति एवं अधिकाधिक उपलब्धि, सफलता एवं पूर्णात्मक शैक्षिक प्राप्ति में अनुपयुक्त होता है।

उपलब्धि परीक्षण के निर्माण में निर्णायक तत्वों का पारस्परिक परिमाणात्मक सामंजस्य रखा जाता है जो विषय-वस्तु की वैधता को प्रभावित करता है। इस विभिन्न निर्णायक तत्वों के मध्य पारस्परिक सम्बन्ध एवं विश्लेषण से वस्तुनिष्ठता बढ़ती है तथा विषय-वस्तु वैधता प्रमाणित होती है। यही कारण है कि उपलब्धि परीक्षण निर्माण करने से पूर्व प्रभावित शैक्षिक परीक्षण योजना की आवश्यकता होती है जो विशिष्ट विषय-वस्तु से सम्बन्धित प्रमुख त्वरित शिक्षा के उद्देश्य, ब्लूम (Bloom) द्वारा प्रतिपादित व्यावहारिक उपलब्धियों के रूप में उनको परिभाषित करना, विषय-वस्तुओं का विश्लेषण एवं वर्गीकरण तथा इन तीनों के पारस्परिक सम्बन्धों के आधार पर उपयुक्त मूल्यांकन विधियों का चयन एवं उन्हें भी उनकी महत्तानुसार उचित महत्व प्रदान करना।

भोपाल की **वन्दना भार्गव** (1986) ने कक्षा दसवीं के लिए 'उद्देश्य आधारित' सामाजिक अध्ययन उपलब्धि परीक्षण (OBTSS) की रचना मध्य प्रदेश उच्चत्तर माध्यमिक बोर्ड द्वारा स्वीकृत पाठ्यक्रम के अनुसार की। सामाजिक अध्ययन के अन्तर्गत इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र एवं अर्थशास्त्र विषयों को सम्मिलित किया गया। यहाँ विषय-वस्तु का विश्लेषण विभिन्न विषयों के पाठ्यक्रम को रखकर किया गया।

सामाजिक अध्ययन परीक्षण के उद्देश्य (Objectives)

1. सामाजिक विज्ञान के पदों, संप्रत्ययों, सिद्धान्तों, सम्बन्धों, संकेतों एवं प्रक्रियाओं का ज्ञान (Knowledge)।

2. सामाजिक अध्ययन के पदों, तथ्यों, संप्रत्ययों, परिभाषाओं एवं प्रक्रियाओं की समझ (Understanding), तथा

3. अपरिचित अवसरों एवं परिस्थितियों में सामाजिक अध्ययनों की समझ एवं ज्ञान का अनुप्रयोग (Applications)।

Scanned with CamScanner

पद रचना (Item Construction)

ब्लूम द्वारा शैक्षिक उद्देश्यों का निर्धारण करने के पश्चात् विषय-वस्तु का सूक्ष्मता के साथ विश्लेषण किया गया तथा उचित एवं उपयुक्त विषय-वस्तुओं का सामाजिक अध्ययन के विभिन्न घटकों—इतिहास, भूगोल, नागरिकशास्त्र तथा अर्थशास्त्र से चयन कर उन्हें पदों के रूप में इस उपलब्धि परीक्षण में सम्मिलित किया गया। यहाँ पदों के चयन में चारों विषयों में से विषय-वस्तु को लिया गया। इस सम्बन्ध में अनुभवी अध्यापकों की राय को भी उचित स्थान दिया गया। इसके बाद उपलब्धि परीक्षण के लिए पदों का चयन करके एक ब्लू प्रिन्ट (Blue Print) तैयार किया गया जिसमें ब्लूम द्वारा निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों, विषय-वस्तु विश्लेषण एवं मूल्यांकन हेतु पदों के प्रकार एवं संख्या को निर्धारित की सापेक्षिक महत्ता एवं पारस्परिक सम्बन्धों को सुयोजित किया गया। 58 वस्तुनिष्ठ पदों (Objective items) को उनकी विशिष्ट महत्ता के आधार पर सामाजिक विज्ञान के उपलब्धि परीक्षण हेतु एकत्रित किय गया।

पद-विश्लेषण (Item-analysis)

पदों का एकत्रीकरण करने के बाद पद-विश्लेषण पद के कठिनाई स्तर एवं विभेद शक्ति के आधा पर किया गया तथा आवश्यकतानुसार पदों का चयन किया गया। पद-विश्लेषण की इस प्रक्रिया में पूर्व निर्मित 75 पदों में से 17 को पदीय-अवैधता (Item Invalidity) के आधार पर निकाल दिया गया। इस प्रकार वास्तविक पद-विश्लेषण (Actual item analysis) हेतु 58 पद स्वीकृत किये गये जिन्हें हल करने के लिए 90 मिनट का समय निर्धारित किया गया। इन 58 पदों को तदन्तर पद-विश्लेषण हेतु 100 छात्रों को हल करने के लिए दिया गया तथा उनसे प्राप्त प्राप्तांकों को क्रमबद्ध करके ऊपर से 27% तथा नीचे से 27% वाले छात्रों के प्राप्तांकों का पद-विश्लेषण हेतु तुलनात्मक अध्ययन किया गया। इस उपलब्धि परीक्षण में, पदीय कठिनाई (Item difficulty) की दृष्टि से वे पद चुने गये जिनका कठिनाई स्तर 40% से कम हो तथा जिन पदों की विभेदक शक्ति (Discrimination power) 30 से कम न हो। पदीय विश्लेषण की इन दोनों विशिष्टताओं के आधार पर 45 पदों को इसके अन्तिम रूप (Final form) के लिए चुन लिया गया तथा उन्हें कठिनता के स्तर के अनुसार उप परीक्षणों में क्रमबद्ध कर लिया गया। इस प्रकार 'सामाजिक अध्ययन उपलब्धि परीक्षण' के पद कठिनाई स्तर के आधार पर अवरोही क्रम (Descending order) में रखे गये। अन्तिम रूप में चुने गये 45 पदों का कठिनता स्तर (Item difficulty) तथा विभेद शक्ति (Discrimination power) अग्र तालिका में ज्ञात की गई।

तालिका

पद संख्या	ठिनता स्तर (I.D.)	विभेद शक्ति (D.P.)
1	48	.44
2	52	.48
3	52	.56
4	52	.42
5	46	.58
6	92	.12
7	76	.42
8	60	.58
*9	4	.24
10	40	.52
11	40	.52
12	60	.53

13	76	.58
14	16	.30
15	42	.46
*16	8	.14
17	60	.48
*18	12	.26
19	56	.52
*20	8	.30
21	42	.46
22	8	.30
*23	8	.47
24	46	.49
*25	12	.28
26	60	.51
27	46	.48
28	56	.46
*29	88	.18
30	46	.56
31	76	.48
*32	16	.26
33	46	.52
34	68	.44
35	68	.42
36	88	.31
37	76	.43
38	56	.51
39	96	.30
40	40	.52
41	52	.54
*42	16	.14
*43	88	.12
44	60	.45
45	42	.44
46	46	.46
47	40	.48
48	56	.52
49	40	.51
50	40	.44
51	40	.48
52	40	.49
53	40	.52
54	40	.54
55	52	.52
56	16	.12
57	16	.16
**58	60	.54*

** Item retained whose discrimination value is more than 30 & item difficulty is more than 40%.

* Items are rejected.

Scanned with CamScanner

वैधता (Validity)

इस परीक्षण की विषय-वस्तु वैधता (Content Validity) ज्ञात की गई। इसके अतिरिक्त इसकी विद्यालय प्राप्तांकों से कसौटी वैधता (Criterion validity) .54 प्राप्त हुई।

विश्वसनीयता (Reliability)

इस परीक्षण की अर्द्ध विच्छेद विधि से विश्वसनीयता rtt = .61 ज्ञात की गई जो उसकी आन्तरिक संगति एवं उपादेयता को इंगित करती है।

मानक (Norms)

इस परीक्षण के कोई भी मानक नहीं निर्धारित हैं किन्तु वे आसानी से विभिन्न रूपों में निर्धारित किये जा सकते हैं।

सामाजिक अध्ययन उपलब्धि परीक्षण

(अन्तिम रूप)

वन्दना भार्गव

निर्देश (Instructions)

1. इस परीक्षण के चारों भागों में कुछ-कुछ प्रश्न दिये हैं प्रत्येक में से 2-2 के उदाहरण यहाँ दिये गये हैं।

2. प्रत्येक प्रश्न के उत्तर चार सम्भावित विकल्पों (Alternatives) में से किसी एक के ऊपर सही (√) का चिन्ह लगा कर देना है।

3. यद्यपि समय की कोई सीमा निर्धारित नहीं है फिर भी 60 मिनट में इस परीक्षण को हल कर लेना चाहिये।

4. प्रश्नों का उत्तर सोच समझ कर दीजियेगा, अनुमान मत लगाइयेगा, तथा कोई प्रश्न छोड़ना नहीं है।

यहाँ इस परीक्षण के प्रत्येक भाग से 2-2 प्रश्न उदाहरण के रूप में दिये जा रहे हैं।

भाग 1–नागरिक शास्त्र

1. मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, यह कथन किसका है ?
   (अ) हिटलर ☐
   (ब) इन्दिरा गाँधी ☐
   (स) अरस्तु ☐
   (द) कौटिल्य। ☐
2. राज्य का सर्वोच्च संवैधानिक प्रमुख कौन है–
   (अ) मुख्यमन्त्री ☐
   (ब) मुख्य सचिव ☐
   (स) विधान सभा का अध्यक्ष ☐
   (द) राज्यपाल ☐

भाग 2–भूगोल

1. लोहा एवं इस्पात का भारत में सबसे बड़ा केन्द्र है–
   (अ) भिलाई ☐
   (ब) मुम्बई ☐
   (स) जमशेदपुर ☐
   (द) देवास। ☐

2. दैनिक तापमान का अन्तर मापने के लिये किसका उपयोग करेंगे ?
   (अ) साधारण तापमापी ☐
   (ब) साधारण दाबमापी ☐
   (स) बैरोमीटर ☐
   (द) उच्चतम न्यूनतम तापमापी। ☐

भाग 3–इतिहास

1. तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आजादी दूँगा–यह कथन किसका था ?
   (अ) महात्मा गाँधी ☐
   (ब) जवाहर लाल नेहरू ☐
   (स) वल्लभ भाई पटेल ☐
   (द) सुभाष चन्द्र बोस। ☐
2. जलियाँवाला हत्याकाण्ड की घटना हुई–
   (अ) लखनऊ ☐
   (ब) नई दिल्ली ☐
   (स) अमृतसर ☐
   (द) चण्डीगढ़। ☐

भाग 4–अर्थशास्त्र

1. उद्योग के जोखिम कौन सहन करता है–
   (अ) श्रमिक ☐
   (ब) पूँजीपति ☐
   (स) मजदूर नेता ☐
   (द) भूमिपति। ☐
2. नियोजन का मुख्य उद्देश्य है–
   (अ) आर्थिक सुरक्षा ☐
   (ब) अधिक कुशलता ☐
   (स) अधिक प्रयास ☐
   (द) अधिक समानता। ☐

इस प्रकार इस परीक्षण के भाग 1, 2, 3, 4 में क्रमशः 13, 10, 10 एवं 12 कुल 45 प्रश्न हैं।

सामाजिक अध्ययन उपलब्धि परीक्षण की भाँति किसी भी स्तर पर किसी भी विषय से सम्बन्धित उपलब्धि उद्देश्य आधारित उपलब्धि परीक्षण की रचना इस प्रकार से की जा सकती है जो कि ब्लूम द्वारा निर्धारित शैक्षिक उद्देश्यों का मापन करते हैं।

अभ्यास प्रश्न

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न (Long Answer Type Questions)

1. उपलब्धि परीक्षणों का आधुनिक युग में क्या भूमिका है? स्पष्ट कीजिए।
2. मानकीकृत उपलब्धि परीक्षणों के प्रकारों पर प्रकाश डालिए।

लघु उत्तरीय प्रश्न (Short Answer Type Questions)

1. स्टैनफोर्ड उपलब्धि परीक्षण पर प्रकाश डालिए।
2. विशिष्ट उपलब्धि परीक्षणों से क्या आशय है?

☐☐

Scanned with CamScanner